पीयर रिव्यूड रेफर्ड मल्टी डिसिप्लिनरी जर्नल

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)

(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

अंक –1 खंड –1 पौष–आषाढ़, 2083, जनवरी–जून 2026

महाराजा अग्रसेन कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

पीयर रिव्यूड रेफर्ड मल्टी डिसिप्लिनरी जर्नल

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)

(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

अंक -1 खंड -1 पौष-आषाढ़, 2083, जनवरी-जून 2026

पीयर रिव्यूड रेफर्ड मल्टी डिसिप्लिनरी जर्नल

ISSN :

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

अंक -1 खंड -1 पौष-आषाढ़, 2083, जनवरी-जून 2026

प्रबंध संपादक एवं संरक्षक

प्रो संजीव कुमार तिवारी

संपादकद्वय

प्रो ऋतु कोहली
प्रो टी एन ओझा

शोध पत्रिका संपादकीय मंडल

प्रो. शिवकुमार
प्रो. शंकर कुमार
श्रीमती मनोज चौधरी
प्रो. चंद्र शेखर
प्रो. राजहंस कुमार
प्रो. आभा शर्मा
प्रो. सुबोध कुमार
श्रीमती पुनीता अग्रवाल
डॉ. आलोक पुराणिक

शोध पत्रिका संपादकीय नेपथ्य समिति

डॉ. जितेंद्र कुमार भगत
डॉ. स्वाति कुमारी
डॉ. शालेहा प्रवीन
डॉ. सदानंद

शोध पत्रिका प्रबंध समिति

प्रो. रमण मित्तल – विश्वविद्यालय प्रतिनिधि
प्रो. विष्णु भट्ट – विश्वविद्यालय प्रतिनिधि
प्रो. संजीव कुमार तिवारी – प्राचार्य
प्रो. ऋतु कोहली – संपादक, ज्ञान संचय
प्रो. टी. एन. ओझा – संपादक, ज्ञान संचय

शोध पत्रिका संपादकीय परामर्शदाता मंडल

प्रो. सुषमा यादव – पूर्व वाईस चांसलर बीपीएसएमवी, हरियाणा एवं आगंतुक प्रतिनिधि (visitor nominee) दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. श्री प्रकाश सिंह – वाईस चांसलर, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल यूनिवर्सिटी, गढ़वाल
प्रो. पुष्पा अवस्थी – अध्यक्ष, हिंदी यूनिवर्स फाउंडेशन नीदरलैंड
प्रो. (डॉ.) विनय कुमार – पूर्व अध्यक्ष, मगध विश्वविद्यालय, बिहार
प्रो(डॉ) सिरान मुखर्जी – सीनियर रीजनल डायरेक्टर इग्नू, दिल्ली
प्रो. प्रमोद कुमार – बी आर ए, बिहार यूनिवर्सिटी मुजफ्फरपुर, बिहार
प्रो. कृष्णा शर्मा - पूर्व प्राचार्य पी.जी.डी.ए.वि. कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. राजेंद्र पांडेय - प्राचार्य देशबंधु कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. अर्चना उपाध्याय - श्याम लाल महाविद्यालय (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रो. ममता - अंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

शोध पत्रिका कानूनी सलाहकार समिति

डॉ. अविनाश कुमार – विधि संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
श्रीमती मोनिका – वकील, दिल्ली उच्च न्यायालय, दिल्ली
श्री संतोष कुमार झा – वकील, दिल्ली उच्च न्यायालय, दिल्ली
श्री उज्ज्वल कुमार – वकील, दिल्ली उच्च न्यायालय, दिल्ली
श्री उदित कुमार ठाकुर – वकील, दिल्ली उच्च न्यायालय, दिल्ली

महाराजा अग्रसेन कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ज्ञान संचय, महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के शोध पत्रिका हेतु

अंक -1 खंड -1 पौष-आषाढ़, 2083, जनवरी-जून 2026

© महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रकाशक एवं संपादकीय कार्यालय : महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096

ईमेल : gyansanchay@mac.du.ac.in
hspmacdu@mac.du.ac.in
hindishodhpatrika@mac.ac.in

शुल्क : प्रति अंक 500/-

मुद्रक : ओम शिव शक्ति ग्राफिक्स, साहिबाबाद,
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश - 201001

ज्ञान संचय में प्रकाशित सामग्री से संपादक मंडल या संस्थान की सहमति होना अनिवार्य नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए स्वामी/प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है।

स्वामित्व : शोध पत्रिका प्रबंधन समिति
महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

www.gsmacdu.in

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

अंक -1 खंड -1 पौष-आषाढ़, 2083, जनवरी-जून 2026

अनुक्रम

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास: मानवीय संस्कृति की जीवंत अभिव्यक्ति **08**
डॉ स्वाति कुमारी

2. मॉरीशस के हिंदी उपन्यासों में 'रामचरितमानस' का प्रभाव **17**
डॉ. शालेहा प्रवीन, श्रीमती मनोज चौधरी

3. वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में समकालीन हिन्दी उपन्यास **23**
डॉ सदानन्द

4. सौर ऊर्जा: तकनीकी एवं अनुप्रयोग **30**
निलेश कुमार पाठक, सौरभ कुमार मिश्रा

5. भाषा विज्ञान के विकास में संस्कृत का अवदान **41**
डॉ जितेंद्र कुमार भगत

6. डिजिटल मीडिया और राजनीतिक जागरूकता: सोशल मीडिया के विशेष संदर्भ में एक मूल्यांकन **49**
प्रो. (डॉ.) तेज नारायण ओझा, डॉ. रश्मि ओझा

7. सामाजिक समरसता का भाव और संत रविदास का काव्य **58**
डॉ. मनोरमा गौतम

8. क्वांटम युग: डिजिटल सुरक्षा का नया प्रतिमान **69**
आशुतोष सिंह, राजीव कुमार राय, डॉ. रौशन कुमार

9. हिन्दी पत्रकारिता में नवचेतना एवं जिन्दादिली के विविध आयाम **77**
डॉ. राजेश कुमार पांडेय

10. भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रीयता की अवधारणा **84**
गौरव

11. भारतीय नवजागरण का कला और साहित्य पर प्रभाव: एक मानवतावादी विश्लेषण **90**
गोपाल जी

संपादक की कलम से ...

'ज्ञान ही शक्ति है, शोध ही प्रगति का मार्ग'

भारतीय सभ्यता ने ज्ञान को सिर्फ पुस्तकों में नहीं, अपितु जीवन के हर आयाम में समाहित किया है। यहाँ की मिट्टी की सुगंध में वेद है, नदियों के प्रवाह में दर्शन है और लोक-गीतों की धुन में सदियों का संचित अनुभव है। 'ज्ञान संचय' शोध पत्रिका का यह प्रथम अंक उसी अनमोल परम्परा को पुनः रेखांकित करने का एक सद्प्रयास है।

भारत केवल एक भौगोलिक इकाई नहीं है - यह एक विचार है, एक दर्शन है, एक ऐसी जीवन-दृष्टि है जो सहस्राब्दियों के अनुभव से परिपक्व हुई है। आज विश्व तेज़ी से बदल रहा है तथा वैश्वीकरण की आँधी में स्थानीय संस्कृतियाँ अपनी पहचान खोती जा रही हैं, ऐसे में यह भी आवश्यक हो जाता है कि हम अपनी ज्ञान परम्परा के प्रति सजग एवं सचेत रहें। 'भारतीय ज्ञान परम्परा' केवल अतीत की धरोहर नहीं है - वह एक जीवंत, प्रवाहमान चेतना है जो आज भी हमारे समाज को नई दिशा देने में सक्षम है। 21वीं सदी की सूचना प्रोद्योगिकी एवं डिजिटल क्रांति के इस युग में क्या यह संभव है कि परम्परा और प्रौद्योगिकी सहयात्री हो सके? क्या सनातन मूल्य और आधुनिक मीडिया एक-दूसरे के पूरक बन सकते हैं? इन यक्ष एवं प्रासंगिक प्रश्नों के उत्तर की खोज ज्ञान संचय के इस प्रथम अंक में किया गया है।

प्रस्तुत अंक में समाहित शोध-लेख विविध विषयों की वैचारिक गहराई को रेखांकित करते हैं। 'हिन्दी पत्रकारिता में नवचेतना एवं जीवंतता के विविध आयाम' लेख जहाँ पत्रकारिता के ऊर्जावान स्वरूप और समाज निर्माण में उसकी भूमिका का अन्वेषण करता है, वहीं 'क्वांटम युग: डिजिटल सुरक्षा का नया प्रतिमान' और 'डिजिटल मीडिया और राजनीतिक जागरूकता' वर्तमान समय में सोशल मीडिया की लोकतांत्रिक सक्रियता का मूल्यांकन करता है। हिन्दी पत्रकारिता ने नवचेतना और मानवीय संवेदना के विविध आयामों को वर्तमान सोशल मीडिया एवं डिजिटल युग में राजनीतिक जागरूकता और सामान्य जन के बीच अपनी भूमिका को उजागर किया है। दूसरी तरफ, 'सौर ऊर्जा: तकनीकी एवं अनुप्रयोग' जैसे लेख समकालीन तकनीकी प्रगति और भविष्य की चुनौतियों पर प्रकाश डालते हैं। पूरे विश्व में 'ग्लोबल वार्मिंग' जैसे मानवीय संकट के समाधान के लिए भारतीय चिंतन पद्धति के अंतर्गत सौर ऊर्जा को वैकल्पिक से मुख्य ऊर्जा स्रोत के रूप में दैनिक उपयोग करने के लिए पूरे विश्व को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

वैचारिक पक्ष को सुदृढ़ करते हुए 'भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रीयता की अवधारणा' एवं 'भारतीय नवजागरण का कला और साहित्य पर प्रभाव' जैसे शोध-पत्र सांस्कृतिक चेतना और मानवतावादी दृष्टिकोण का विश्लेषण करते हैं वहीं 'सामाजिक समरसता का भाव और संत रविदास का काव्य' सामाजिक समानता के आध्यात्मिक पक्ष को उजागर करता है। भाषा और साहित्य के क्षेत्र में 'भाषा विज्ञान के विकास में संस्कृत का अवदान' प्राचीन जड़ों की महत्ता बताता है, तो 'वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में समकालीन हिन्दी उपन्यास' वैश्विक परिवर्तनों के बीच साहित्य की दिशा को स्पष्ट करता है। 'हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास: मानवीय संस्कृति की जीवंत अभिव्यक्ति'

और 'मॉरीशस के उपन्यासों में रामचरितमानस का महत्त्व' के माध्यम से भारतीय संस्कृति के वैश्विक विस्तार और साहित्यिक गहराई को समझा गया है। इसप्रकार, ये सभी लेख अपने-अपने क्षेत्रों में ज्ञान के नए क्षितिज खोलने का प्रयास करते हैं। साथ ही ये सभी लेख न केवल अकादमिक महत्त्व के हैं, बल्कि भारत के नवनिर्माण की प्रक्रिया में योगदान भी करते हैं।

हम यह भी स्वीकार करते हैं कि परम्परा का अन्धानुकरण विवेकशीलता नहीं, रूढ़िवाद है। इसीलिए इस पत्रिका का दृष्टिकोण आलोचनात्मक सम्मान का है - हम परम्परा को उसकी समग्रता में देखते हैं। सनातन का अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं है अपितु सनातन एक विश्व-दृष्टि है जो 'एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति' के उद्घोष से आरम्भ होती है - अर्थात् सत्य एक है, जिसे विद्वान अनेक रूपों में कहते हैं। यह दृष्टि विविधता में एकता की स्थापना करती है, संकीर्णता को नहीं, उदारता को प्रोत्साहित करती है। "सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः" - यह केवल एक प्रार्थना नहीं, एक सामाजिक दर्शन है।

इक्कीसवीं सदी में मीडिया केवल सूचना का माध्यम नहीं रहा - वह संस्कृति का निर्माता, विचारधारा का प्रसारक और सामाजिक परिवर्तन का उत्प्रेरक बन चुका है। टेलीविज़न से लेकर स्मार्टफोन तक, ब्लॉग से लेकर यूट्यूब चैनल तक - मीडिया के असंख्य रूप आज भारतीय समाज की सोच, रुचि और मूल्य-बोध को गहराई से प्रभावित कर रहे हैं। सकारात्मक पक्ष यह है कि डिजिटल मीडिया ने लोक-संस्कृति को भी एक नया मंच दिया है। जिन लोकगायकों, शिल्पकारों और पारम्परिक कलाकारों की आवाज़ कभी सुनी नहीं जाती थी, वे आज यूट्यूब और इंस्टाग्राम के माध्यम से करोड़ों लोगों तक पहुँच रहे हैं। इस डिजिटल लोकतन्त्र की शक्ति को सांस्कृतिक संरक्षण के लिए सुनियोजित ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए। "मीडिया तभी सार्थक है जब वह शक्तिहीन की आवाज़ बने, शक्तिशाली का उपकरण नहीं।" आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence), मशीन लर्निंग, बिग डेटा और क्लाउड कम्प्यूटिंग ने ज्ञान के संचय, विश्लेषण और प्रसार की सम्पूर्ण प्रक्रिया को बदल दिया है। यह एक ऐसा ऐतिहासिक अवसर है, जिसमें भारत अपनी ज्ञान-परम्परा को डिजिटल रूप में सुरक्षित करते हुए विश्व के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है।

महात्मा गाँधी ने भी ज्ञान को जीवन से जोड़ने पर बल दिया - 'नई तालीम' की अवधारणा में उन्होंने शिल्प, श्रम और शिक्षा को एक सूत्र में पिरोया। बाबासाहब अम्बेडकर ने जब कहा था कि "शिक्षा शेरनी का दूध है" - तो उनका आशय केवल विद्यालयी शिक्षा से नहीं था।

ज्ञान संचय के पाठकों, शोधार्थियों और लेखकों से हमारी अपील है - ज्ञान को केवल अर्जित मत कीजिए, उसे बाँटिए।

समाज में अंतिम जन की सेवा, गरीबी उन्मूलन और स्वावलंबन को अपनी लेखनी का विषय बनाइए। लोक में जो अनकही पड़ी है, उसे शब्द दीजिए, क्योंकि जब तक ज्ञान केवल विश्वविद्यालयों और पुस्तकालयों में बंद रहेगा, वह समाज को बदलने में असमर्थ रहेगा। प्रौद्योगिकी का उपयोग सांस्कृतिक संरक्षण के लिए कीजिए। सामाजिक समरसता एवं मानव मूल्यों की रक्षा का प्रयास ही ज्ञान संचय का एकमात्र लक्ष्य होना चाहिए।

ज्ञान तब सार्थक होता है - जब वह मुक्ति का माध्यम बने।

संपादकद्वय
प्रो ऋतु कोहली
प्रो टी एन ओझा

अक्षय तृतीया, 20 अप्रैल, 2026

हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास
मानवीय संस्कृति की जीवंत अभिव्यक्ति

- डॉ स्वाति कुमारी

सार

उपन्यास मानव जीवन को उसकी समग्रता में चित्रित करता है तथा साहित्य की यह वृहद विधा अपने युग को वाणी देने का प्रयास करती है। मानव जीवन के समस्त आयाम को यथार्थ परिवेश में उजागर करना ही उसका लक्ष्य रहा है। जीवन की विविधताओं विशिष्टियों और वैचित्र्यों को विश्वसनीय रूप में मानवीय धरातल पर अंकित करने का प्रमाणिक प्रयास उपन्यासकार करता है। उपन्यास मानव के अंतरंग और बहिरंग जीवन में व्याप्त संघर्षों की यथार्थ गाथा है जिसमें महाकाव्यात्मक गरिमा होती है। उपन्यासकार अनेकता में भी एकता का और असंगतियों के बीच भी संगति का तथा विशिष्टता में भी सामान्यता का अन्वेषण करता है। यथार्थ की यह खोज रचनात्मकता के स्तर पर चलती है तो उपन्यास का आविर्भाव होता है। हिंदी उपन्यास साहित्य के इतिहास का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट लक्षित होता है कि कथ्य की प्रक्रिया और शिल्प गठन में स्थूलता के बदले सूक्ष्मता का निर्वहन किया जाता रहा है। प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास की सुदृढ़ नींव डाली और उसके बाद अनेक प्रतिभाशाली लेखकों ने बहुविध रंगों के महल खड़े किए। प्रेमचंद के बाद उपन्यास कला में मौलिक अंतर आया है। यहां कल का मतलब मात्र अभिव्यक्ति पक्ष से नहीं अपितु कथ्य और शिल्प दोनों से है। यह कायापलट के लिए उत्तरदायी है तत्कालीन राजनीतिक एवं सामाजिक स्थितियां एवं सांस्कृतिक उत्थान पतन है। यही कारण है कि आज उपन्यास का अध्ययन समाजशास्त्रीय हो गया है जो समस्त अन्यान्य ज्ञान विज्ञान की उपलब्धियां को आत्मसात कर विकसित हुआ है। सचेत कलाकार समाज निरपेक्ष होकर काल की सृष्टि नहीं कर सकते। यदि ऐसा कर सकते हैं तो उसका कोई मोल नहीं रह जाता और उसका अस्तित्व ही संदिग्ध बनकर रह जाएगा। यहां 'समाज' इस शब्द में परंपरा, इतिहास और संस्कृति यह सभी अंतर्भुक्त हैं। जिन्हें हम कालजयी रचना कहते हैं, वे जीवन के इसी विस्तृत कैनवास पर चित्रित हुई है।

बीज शब्द : संस्कृति, परंपरा, मानवीय मूल्य, ऐतिहासिकता, आधुनिक बोध

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीहिंदी साहित्य के उच्च कोटि के ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों का प्राणतत्व संस्कृति है, तो उसका पोषक तत्व इतिहास। उनका कथ्य संस्कृति से रस ग्रहण करता है तो इतिहास से शक्ति संचय करता है। इतिहास वह खाद है जिससे द्विवेदी जी की उपन्यास कला जीवन सत्य ग्रहण कर संस्कृति के कमल खिला देती है। उनके चारों उपन्यास ऐतिहासिक परिवेश को लिए हुए हैं। पौराणिक संदर्भों को भी उन्होंने ऐतिहासिकता से मण्डित करने का सफल प्रयास किया है। अतः उपन्यासकार के रूप में उनका जो साहित्यिक व्यक्तित्व उभर कर आता है वह एक इतिहासकार के व्यक्तित्व के निकट पड़ता है। उनके उपन्यासों को ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा के अंतर्गत रखने पर भी बहुत हद तक उनके उपन्यास मात्र 'ऐतिहासिक उपन्यास' की संज्ञा पानी से इनकार करते हैं। मतलब, द्विवेदी जी के उपन्यासों को उस रूढ़ अर्थ में ऐतिहासिक उपन्यास नहीं मान सकते जो हिंदी साहित्य के संदर्भ में अब तक प्रचलित है। द्विवेदी जी संपूर्ण सृजन प्रक्रिया संस्कृति की सही अर्थवत्ता को जानने और उसको परिभाषित करने उसके सही स्वरूप को पहचानने, उसके आधारभूत तत्वों की खोज करने, वैज्ञानिक दृष्टि से उसे परखने और मानववादी दृष्टि से उसे आंकने की दिशा में क्रियाशील रही है। साहित्येतिहास और आलोचना के संदर्भ में उन्होंने मानव इतिहास के धरातल पर तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के परिप्रेक्ष्य में ही साहित्य और कला के मानदंड निर्मित करने का प्रयास किया है। उन्होंने कालिदास आदि की क्लासिक रचना की गहरी छानबीन कर संस्कृति के बहुरूपिया व्यक्तित्व को पहचानने की चेष्टा की है।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने संस्कृति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा 'संस्कृति जिंदगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते हैं। इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए अथवा जिस समाज से मिलकर हम जी रहे हैं, उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है' । बाबू गुलाब राय जातीय संस्कृति को ही संस्कृति की संज्ञा देते हैं। धर्म और संस्कृति में अंतर करते हुए उन्होंने कहा है कि 'धर्म और संस्कृति में अंतर केवल इतना है कि धर्म में श्रुति, स्मृतियां और पुराण ग्रंथों का आधार रहता है, किंतु संस्कृति में परंपरा का आधार रहता है' । द्विवेदी जी ने और भी व्यापक स्तर पर संस्कृति के स्वरूप को उद्घाटन किया। 'वे मनुष्य की विविध साधनाओं और सर्वोत्तम परिणति को संस्कृति मानते हैं।' वे मानते हैं की संस्कृति, ज्ञान और संस्कृति विषयक उच्च धारणाएं ही वर्तमान का स्पष्ट रूप सामने रखती है, तब वर्तमान जीने लायक बन जाता है। इसमें भविष्योन्मुखी दृष्टि छिपी रहती है। अतः द्विवेदी जी इसे 'शव साधना' के नाम से इंगित करते हैं। शव देह में शक्ति का संचार होने से ही सिद्धि प्राप्त होती है। शव देह की ठीक व स्पष्ट जानकारी से ही भविष्य सुदृढ़ और माधुर्य बन जाता है। संस्कृति का सौंदर्य इसी में अंतर्भूत रहता है। द्विवेदी जी की मान्यता है 'हमारे प्राचीन शास्त्रों, रीतियों,क्रियाओं, आचारों के अध्ययन का लक्ष्य भविष्य होना चाहिए' । सच्चा साहित्य मनुष्य को उत्कर्ष की ओर ले जाता है। वह सुलाने का काम नहीं, झकझोर कर जगाने का काम करता है। मनुष्य के अंतर बाह्य व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास ही उसका लक्ष्य है।

द्विवेदी जी के लिए संस्कृति सिद्ध वस्तु नहीं और न ही स्थिर मूल्य बल्कि वह एक क्रियाशील प्रक्रिया है। उनका सांस्कृतिक बोध निरंतर, परिवर्तित होने वाली और नवीनता को खोजने वाली जीवनमुखी रचनात्मकता से प्रेरित है। उसमें भूत और भविष्य, इतिहास और वर्तमान, परंपरा और आधुनिकता इन सब का सुंदर समन्वय है। पुराने के प्रति अतिरिक्त मोह जड़ता का लक्षण है, इतिहास में अपने को डुबो देना पलायणवादिता है और अनागत भविष्य की चिंता में जर्जरित होना मूढ़ता है। अतः द्विवेदी जी का सांस्कृतिक बोध ऐसे जीवंत

व्यावहारिक किंतु उन्नत जीवन दर्शन सामने रखता है जिसमें पूर्वाग्रह से मुक्त,उन्मुक्त चिंतन है उनका यह बोध उस जलधारा के समान है, जो दो किनारो के बीच अपने को बंधित नहीं पाती और निरंतर गतिशील रहकर चट्टानों को चढ़कर अपनी राह बना लेती है और जिसकी गति कभी अवरुद्ध नहीं होती। वास्तव में दोनों किनारे बंधन के प्रतीक नहीं, मर्यादा के सूचक हैं।

द्विवेदी जी का सांस्कृतिक बोध उनके यथार्थ जीवन बोध का पर्याय है। यथार्थवादिता का मतलब मात्र वर्तमान लक्षणों से जुड़े रहना नहीं है। समकालीन बोध भी आज के कालखंड में बंधित नहीं है अपितु वह वर्तमान के लिए कारणीभूत अतीत को पहचानने की, परंपरा और इतिहास बोध से प्राप्त जीवन दृष्टि है, जो समय की सीमाओं को लांघकर सुदूर भविष्य को पहचानने की क्षमता रखता है। उनके पांव आज के धरातल पर टिके हुए हैं और उसकी जड़ें, अतीत के गर्भ में गहरे उतर गई है और दृष्टि ऊपर की ओर उठी हुई है। इतिहास परंपरा और संस्कृति के अन्य गायक द्विवेदी जी के भौतिक जीवन की अपेक्षा नहीं की। बदले में उन्होंने उसको समृद्ध बनाने में ही समस्त चिंतन धाराओं की सार्थकता मानी है।

त्याग और समर्पण भाव द्विवेदी जी के सांस्कृतिक बोध का मेरुदंड है। यह गुण ही व्यष्टि और समष्टि को कल्याण पक्ष पर ले जाते हैं। अखंड मानव सृष्टि में उनका विश्वास है और आत्मसर्ग में आस्था। मनुष्य के अस्तित्व की सार्थकता विसर्जन में है। एक दृष्टि से विसर्जन में ही अर्जन है। वह अपने 'लघु' को खोता है और 'महान' को प्राप्त करता है। द्विवेदी जी कहते हैं, 'मनुष्य अपने आप को 'महा' एक को समर्पण करता है और तभी वह मनुष्य बनता है, उसका संपूर्ण जीवन चरितार्थ होता है'। इस तरह द्विवेदी जी सांस्कृतिक बोध की अवधारणा जीवन नायक गुना पर बल देती है। यह बोध स्थिर जड़ और स्पंदन हैं नहीं है। वह युग के ताप को और समय की गति को पहचानता है। वेदकारीं ऋषियों की तरह 'चरैवेति चरैवेति' यानी निरंतर चलते रहने को, आगे बढ़ाने को ही जीवन मानता है। कहीं रुक जाना, जम जाना मृत्यु है। यह प्रकृति विरोधी है। द्विवेदी जी की दृष्टि में संघर्ष करने की, जूझने की अनवरत प्रक्रिया का नाम ही जीवन है और इसकी चरम परिणति संस्कृतिबोध में होती है।

उपन्यास मानव - जीवन को उसकी समग्रता में चित्रित करता है। कथा साहित्य की वह वृहद विधा अपने युग को वाणी देने का प्रयास करती है। मानव- जीवन के समस्त आयामों को यथार्थ परिवेश में उजागर करना ही उसका लक्ष्य रहा है। द्विवेदी जी ने उपन्यास के कथ्य,स्वरूप और शिल्प के संबंध में अपनी मौलिक धारणाएं व्यक्त की है। कथा -साहित्य में यथार्थ के अंकन को सर्वोपरि महत्व प्रदान करते हुए वे कहते हैं कि 'कविता यथार्थ की उपेक्षा कर सकती है, संगीत यथार्थ को छोड़कर भी जी सकता है, पर उपन्यास और कहानी के लिए यथार्थ प्राण है। उसके ना रहने से उपन्यास और कहानी भी प्राणहीन बन जाते हैं। उपन्यास की आधारशिला ही यथार्थवाद है। युग जीवन अपने को पूरी तरह उपन्यास विधा के माध्यम से व्यक्त कर पता है। इस दृष्टि से द्विवेदी जी के उपन्यास अपनी नवीनता का एहसास करते हैं। द्विवेदी जी ने ना समस्याओं को अनुत्तरित रखा है और ना ही आरोपित समाधान प्रस्तुत किया। उन्होंने ऐतिहासिक संदर्भो के बीच संभावित समाधान की खोज की है ,जो पाठक में एक अंतर दृष्टि पैदा करती है। पतन की राह को नहीं, उत्थान के पक्ष को प्रदर्शित किया है। ना ही प्रेमचंद कालीन आदर्श से प्रेरित है और न ही आज के लेखक के ऋणवादी दर्शन से अनुप्राणित है बल्कि मानवीय इतिहास और परंपरा बोध से उत्स्फूर्त है। अपने प्रथम उपन्यास से ही वह सबसे अलग,अत्यंत व्यापक स्तर पर परंपरा, इतिहास और संस्कृति के संदर्भ में आधुनिकता की चुनौती को स्वीकारा है और आधुनिकता के स्वीकार का या अभिनय रूप 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास से चारु चंद्रलेखा में अत्यंत मौलिक रूप से अंकित हुआ है। अतः उनके उपन्यासों का मूल्यांकन मात्र समाजशास्त्रीय दृष्टि से किया नहीं जा सकता और भी व्यापक परिप्रेक्ष्य में उनकी असली परख हो सकती है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' हर्षकालीन भारतवर्ष के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिवेश को चित्रित करने वाला उपन्यास है, जिसे रोमांस की संज्ञा दी जा सकती है। इसमें इतिहास है, कल्पना है और वर्तमान संदर्भों की छाया भी। उपन्यास की रचना- भूमि का आधार संस्कृति, वांग्मय के अजर, अमर कलाकार बाणभट्ट का जीवन वृत्त है। वास्तव में बाण का जीवन-वृत्त गौण है, युग का स्वर प्रमुख है। अतः इतिहास और कल्पना का सानुपातिक सम्मिश्रण अनिवार्य हो गया है। इसके ऐतिहासिक कलेवर में सामाजिक चेतना भी इसकी आत्मा के रूप में स्पंदित है। उपन्यासकार ने कथानक का निर्माण इतिहास और कल्पना के समन्वित धरातल पर किया है। उपन्यास में कल्पित घटनाओं का नियोजन और पात्रों का निरूपण इस ढंग से किया गया है कि कहीं भी तत्कालीन परिवेश में असंगत प्रतीत नहीं होता। इतना ही नहीं, उपन्यास में वर्णित प्रकृति वर्णन के लिए भी तात्कालिक काव्य ग्रंथों और नाटकों का प्रमाण प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार पात्र,कथा प्रसंग, वर्णन आदि के लिए आधार के रूप में ग्रहण किए गए ग्रंथों का उल्लेख पाद टिप्पणी में करके लेखक ने अपनी प्रामाणिकता का सबूत दिया है। उपन्यास में प्रयुक्त ग्रंथों में जनजीवन का जो यथार्थ चित्र देखने को मिलता है और भारतीय संस्कृति और परंपरा का जो आदर्श परिलक्षित होता है, उसे सबके अनुरूप उपन्यासकार ने तत्कालीन युग को प्रामाणिक अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। द्विवेदी जी ने 'कादंबरी' की शैली का अनुकरण किया है और वह अत्यंत आवश्यक भी था। अतः उपन्यास में सर्वत्र जीवंत दृश्य बिम्ब परिलक्षित होते हैं, जिसमें वह रोचक और आकर्षक बन पड़ा है। आंतरिक द्वंद्व की अपेक्षा बाह्य क्रिया- व्यापारों को अधिक प्रश्रय दिया गया है। संस्कृति साहित्य का यह शैलीगत वैशिष्ट्य रहा है कि उसमें कथा के आंतरिक विकास का सूक्ष्म निरूपण काम और बाह्य वर्णनों का अंकन अधिक दीख पड़ता है। कथा में समाज के रीति रिवाज लोगों के आचार विचार, तीज त्यौहार, उत्सव कृति के राम एक दृश्य आदि का विस्तृत और मनोहारी वर्णन मिलता है। उपन्यासकार का कवि- हृदय प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित कर जाता है तो भावोल्लास गद्य- काव्य बनकर प्रकट होता है।

हर्षकालीन अतीत- वैभव का गरिमामय चित्र उपस्थित करना प्रस्तुत उपन्यास का लक्ष्य नहीं है और न ही ऐतिहासिक घटनाओं एवं तिथियां का आकलन करना। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन युगीन जीवन के आंतरिक सत्य का उद्घाटन करना इस रचना का उद्देश्य कहा जा सकता है। अपने समय के संदर्भ में यह उपन्यास जितना सार्थक है, आज के संदर्भ में उतना ही संगत भी। परिवेश सजगता के साथ कालबोध से समन्वित उनकी कलात्मक चेतना समयगत अंतराल को पाटने की क्षमता रखती है। लेखक ने कल्पना का आधार ग्रहण कर ऐतिहासिक कथा को सहज अनुभूतियों, यथार्थ प्रतिक्रियाओं और गहन चिंतन के धरातल पर स्थापित किया है। इसमें जितनी व्यापकता एवं गहराई है उतनी ही विश्वसनीयता भी।

'बाणभट्ट की आत्कथा' में मूलरूप से सत्य का अन्वेषण हैं। निपुणिका ने सत्य का साक्षात्कार मात्र तत्वचिंतन के धरातल पर पाने का प्रयास नहीं किया है, अपितु उसे व्यापक मानवीय- भावभूमि पर आत्मसात करने की चेष्टा की है। यह वैयक्तिक घेरे को तोड़कर बृहत्तर राष्ट्रीय स्तर पर संस्कृति और परंपरा से अनुप्राणित होकर सत्य की खोज करते हैं। द्विवेदी जी व्यावहारिक लौकिक जीवन- संदर्भों को नहीं भूलते क्योंकि सत्य की परख उनके बीच ही होती है। तत्कालीन समस्त व्यवस्थाओं की छान बीन कर उन्होंने यह पाया है कि झूठ ही सत्य के नाम पर व्यक्ति और समाज पर हावी हो गया है। यह यथार्थ- बोध है जो अपेक्षित नारी के निपुणिका के अनुभूत सत्य के माध्यम से व्यक्त हुआ है। विधवा युवती निपुणिका के धवल चरित्र और अनन्य सेवा भाव को देखते हुए भट्ट सोचता है कि किस कारण समाज उसे कुत्सित दृष्टि से देखता है? उसके प्रति इतनी उपेक्षा क्यों है? उसमें न दोष है न ही उसने पाप किया है फिर भी क्यों वह अभिशप्त जीवन बिताने के लिए विवश है? तब वह सामाजिक विधि विधान और परंपरागत मूल्यों की छानबीन करता है तो वास्तविक सत्य उभर आता

है कि 'मनुष्य के सामाजिक संबंधों की जड़ में ही कहीं बहुत बड़ा दोष रह गया है' और 'निश्चय ही कोई बड़ा सत्य समाज में सत्य के नाम पर घर बना बैठा है।' इस तरह पूरे उपन्यास में लेखक ने परंपरा को पुन: परिभाषित किया है, समस्त विधि विघ्नों पर नए सिरे से सोचने की आवश्यकता का एहसास कराया है। आत्मावलोकन और परंपरा शोध के द्वारा वस्तु सत्य का दर्शन संभव है- यह तत्व उजागर किया गया है।

द्विवेदी जी उपन्यास में मध्यकालीन भारतीय जीवन के समस्त सांस्कृतिक आयामों को उजागर करने का प्रयास किया है। वह बाण की आत्मकथा नहीं, अपितु मानव संस्कृति की गाथा है। बाण एक माध्यम भर है जो एक पूरे युग के परिवेश को ढोता है। वह कवि है तथा जीवन के आंतरिक सत्य को आत्मसात कर सका है और उसे अभिव्यक्ति दे सका है। इस रचना में हर्षकालीन भारत की ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में जीवन के विविध पहलुओं के जीवंत चित्र अंकित किए गए हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' तत्कालीन सांस्कृतिक मूल्यों का कोष है। संस्कृति पूरे युग के जीवनवृत्त की एक विशिष्ट विधि है, जो संस्कार से संयुक्त है अर्थात निरंतर संस्कार की वृत्ति विद्यमान है। भारतीय संस्कृति देशकाल सीमा से उत्तर सार्वदेशिक और सर्वकालिक है। संस्कृति मानव- जीवन सापेक्ष है, उसमें मनुष्य 'प्राकृतिकता' से ऊपर उठकर निरंतर 'संस्कार' करता रहता है, एक तरह से वह संस्कार का नया स्तर कायम रखता है। ' बाणभट्ट की आत्मकथा' में यही बात परिलक्षित है। कथा और पात्रों के माध्यम से युग के जीवन की संस्कृति का निरूपण इसमें हुआ है।

उपन्यासकार ने 'बाणभट्ट' के रूप में ऐसे आदर्श पुरुष को चित्रित किया है जो 'नारी देह को देव मंदिर' के समान पवित्र मानता है और 'नारी सौंदर्य को संसार की सबसे अधिक प्रभावोत्पादिनी शक्ति' के रूप में ग्रहण करता है। यह तत्कालीन युग की नारी विषयक कलुषित दृष्टि से विपरीत उभरा हुआ स्वस्थ दृष्टिकोण है। नारी शक्ति का विराट स्वरूप 'भट्टिनी', 'निपुणिका',' महामाया', 'सुचरिता' आदि स्त्री पात्रों में अलग-अलग रूप में प्रकट हुआ है। द्विवेदी जी ने उसे 'शोभा की खानि', 'शुचिता की आश्रय भूमि', 'मूर्तिमती भक्ति', 'कांतिमति करुणा', 'पवित्रता की उत्स', 'सुकुमारिता की मूर्ति', 'अशोक वन की सीता' आदि के रूप में पहचाना है। नारी का यह बिम्ब भारतीय संस्कृति की चेतना से निर्मित हुआ है और उसे आधुनिकता के संदर्भ में भी रखकर देखा जा सकता है जो उपन्यास की प्रासंगिकता की सार्थकता व्यंजित करता है।

'उपन्यास में मानववाद का नवीन स्वरूप अंकित हुआ है। नारी- मुक्ति की समस्या, नये तत्व की स्थापना, सत्य का उद्घाटन, मानव धर्म का निरूपण आदि का आधार नव मानवतावाद ही है। मानवीय सत्य को ही चरम सत्य के रूप में निरूपित कर, मानव धर्म को ही परम धर्म के रूप में प्रतिष्ठित कर तथा लोक- कल्याण को ही सर्वोपरि मानकर मध्ययुगीन जीवन का जो चित्रण 'आत्मकथा' में किया गया है, वह लेखक के अखंड मानवीय दृष्टिकोण का परिचायक है। उपन्यास में बाबा के शब्द शास्त्र की सूक्तियां या श्लोक की तरह सुनिश्चित बंधे बँधाये जड़ अर्थ को प्रकट नहीं करते बल्कि जीवन अनुभवों से निष्पन्न व्यावहारिक जीवन दर्शन सामने रखते हैं।' इस कथन में जीवन की सहज प्रक्रिया को ऊंचा मानवीय मूल्य प्रदान किया गया है, मनुष्य में आस्था प्रकट की गई है और उसकी शक्ति में विश्वास व्यक्त किया गया है। मनुष्य को सबसे बड़ा, ऊंचा और श्रेष्ठ घोषित कर उसकी महिमा का अंकन किया गया है। किसी से भी नहीं डरना है, गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद से भी नहीं। इस प्रकार 'अकुतोभय' प्रवृत्ति को मनुष्यता का लक्षण मानकर मनुष्य के निजी अस्तित्व को स्वीकारा गया है। जीवन की भौतिकतावादी दृष्टि नवमानवतावाद का प्रमुख लक्षण है।

बाणभट्ट उपन्यासकार के मानवीय मूल्यों का वाहक बनकर उपस्थित होता है। वह संस्कृति का व्याख्याता ही नहीं है, उसे जीवन में उतारने वाला आदर्श पुरुष भी है। नारी के प्रति उसका दृष्टिकोण और व्यवहार उसकी

गहरी मानवीयता को दर्शाता है। नारी-मुक्ति की चिंता के पीछे उदात्त मानवीय भावना ही क्रियाशील रही है। निम्न जाति की विधवा नारी को जो ऊंचा स्थान दिया गया है, वह स्त्रित्त्व के प्रति प्रकट की गई अपार श्रद्धा का द्योतक है। भट्टिनी की मुक्ति, निपुणिका का बलिदान, महामाया का विद्रोह, सुचरिता का क्रांतिकारी कदम सबको वृहत, मानवीय परिवेश में चित्रित किया गया है। धर्म-अधर्म, सत्य- असत्य, पाप- पुण्य की रूढ़ मान्यताओं के विपरीत मानवीय धरातल पर उपन्यासों के समस्त चरित्रों का निरूपण किया गया है।

उपन्यासकार ने सत्य की परख सामाजिक हित के आधार पर की है, लोक -कल्याण प्रधान वस्तु है। वह जिससे सधता हो वही सत्य है। कहकर सत्य को तत्व चिंतन के शास्त्रीय ग्रंथों के वर्णविषय वस्तु के रूप में नहीं अपितु प्रत्यक्ष जीवन की लोकोपयोगी वस्तु के रूप में ग्रहण किया गया है। लोकमंगल की दृष्टि से सत्य को परिभाषित करने की चिंतन- प्रणाली कोरे आदर्शवाद से प्रेरित नहीं है बल्कि गहरी सामाजिक दृष्टि से अनुप्राणित है। सगतभद्र एक जगह कहता है कि 'क्या ब्राह्मण क्या श्रमण, मनुष्यता दोनों ही जगह विरल है।' यह मानवतावादी दृष्टि से है जो ब्राह्मणत्व से, धर्म के समस्त विधि विधानों से, तपस्या मनुष्यता अर्थात् मानवीयता को श्रेष्ठ मानती है। सारी समस्याएं इस सत्य को आत्मसात न करने के कारण ही उद्भूत हुई है। भट्टिनी के माध्यम से द्विवेदी जी ने जात-पात के भेदभाव को, समाज में व्याप्त उच्च- नीच के नाना स्तरों को समाप्त कर देने का संदेश दिया है। यह संपूर्ण विश्व को स्नेह, प्रेम, दया, त्याग, सेवा आदि मानवोचित गुणों से भरना चाहते हैं। उनका मानववाद देश- काल की सीमाओं की बांध को तोड़कर विशुद्ध मानवीय धरातल पर प्रवाहित होने वाली धारा है। मनुष्य की समस्त विकृतियों को मीटाकर उसके भीतर की पशुता का संहार कर उसे संवेदनशील और कमल बनाने का काव्य है। काव्य से ही दयाहीन - विवेकहीन- धर्महीन वृत्तियाँ उच्चतर कार्य में नियोजित हो जाती है। कलाकार को मानवीय संस्कृति के द्रष्टा के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए कालिदास को प्रमाण स्वरूप उपस्थित किया गया है।

द्विवेदी जी उपन्यास के माध्यम से प्रेम की सर्वथा एक नई परिकल्पना व्यंजित करते हैं। वह न फ्रायड के यौन -सिद्धांतों से प्रभावित हैं और न ही सनातनी भावना से प्रेरित है। प्रेम की अभिव्यक्ति न शारीरिक स्तर पर हुई है और न ही विशुद्ध आत्मिक स्तर पर। अतः वह न मांसल प्रेम है न ही वायवी प्रेम है। द्विवेदी जी ने बीच का रास्ता अपना लिया है। उनके प्रेम निरूपण में शरीर और आत्मा, लौकिकता तथा भौतिकता और आध्यात्मिकता का विलक्षण समन्वय पाया जाता है। यह पारंपरिक प्रेमादर्श की बोझिलता से मुक्त है और आधुनिक प्रेम भावना के सतहीपन से ग्रस्त नहीं है। वह वासना के पंक में डूबा हुआ नहीं है और ना ही वैराग्य के झूठे आदर्श की हवा में तैरता हुआ दिख पड़ता है। वह सहज मानवीय आकर्षण में जन्मा है और मानवोचित उदात्त गुणों से संस्कार ग्रहणकर स्वाभाविक विकास पाते हुए देवत्व के अंश को गया है। इस प्रकार वह मनुष्य की जीवनी- शक्ति का अमृत धारा से सिंचित है। बाणभट्ट, भट्टिनी और निपुणिका के बीच का प्रेम त्रिकोण ऐसा ही प्रेम हमारे सम्मुख रखता है। उपसंहार में उपन्यासकार ने अपनी प्रेम की परिकल्पना को स्पष्ट करते हुए कहा है 'कथा का जिस ढंग से आरंभ हुआ उसकी स्वाभाविक परिणति गूढ़ और अदृप्त प्रेम से ही हो सकती है' ।

उपन्यास में अंकित प्रेम अनुभूति के केंद्र में बाणभट्ट, भट्टिनी और निपुणिका है। बाणभट्ट भाटिनी के प्रति जितना गहरा प्रेम रखता है उतना ही निपुणिका के प्रति स्नेह भाव। संयमित आचरण निपुणता के मोह को श्रद्धा में बदल देता है। इस तरह उसके व्यक्तित्व का उन्नयन होता है। दोनों स्त्रियों का उद्धार कर भट्ट उन्हें पूर्णता प्रदान करता है तो उनसे निष्काम प्रेम पाकर स्वयं की पूर्णता का अनुभव करता है। दाता और भोक्ता दोनों ही एक-दूसरे को समृद्ध करते हैं। भट्ट का उदात्त प्रेम निपुणिका और भट्टिनी को यह एहसास कराता है कि वह हाड़ मांस की पुतलियां मात्र नहीं बल्कि उनसे कहीं बड़ी है। महाकवि कालिदास की प्रेमानुभूति से अनुप्राणित होकर

बाण अपने प्रेम के देवता का स्वरूप दर्शन करता है। यह प्रेम संबंधी प्रवृत्तिवादी दृष्टिकोण है जो प्रेम के भौतिक अस्तित्व को स्वीकार करते हुए उससे ऊंचा उठने की कामना से प्रेरित है।

आत्मकथा के इस विषाद विश्लेषण से स्पष्ट है कि यह हिंदी कथा- साहित्य की अन्यतम औपन्यासिक कृति है जिसे संवेदना और शिल्प की दृष्टि से अभिनय प्रयोग कहा जा सकता है। एक युग के जीवन को उसकी समग्रता में एवं उसके समस्त आयामों के साथ चित्रित करने का सफल प्रयास इसमें हुआ है। आत्मकथमक शैली उपन्यास की विशिष्टा हो सकती है, इसकी सीमा कदापि नहीं। 'आत्मकथा' होने के कारण ही इसमें एक तरफ की उन्मुक्तता और खुलापन आ गया है। इसका कथन अलग-अलग स्तर पर चलते हुए अलग-अलग समस्याओं को उठाता है। किंतु उन सबसे एक ही धरातल पर खड़े होकर जूझने का प्रयास करता है। वह धरातल है- संस्कृति का और मानवीयता का। एक स्तर पर नारी मुक्ति की समस्या अंकित की गई है तो दूसरे स्तर पर सामंतवादी व्यवस्था के संदर्भ में मूल्य के ह्रास की और तीसरे स्तर पर विभिन्न धार्मिक संप्रदायों के बीच के संघर्ष की समस्या का चित्रण है तो चौथे स्तर पर सांस्कृतिक पतन का पांचवे स्तर पर देश- रक्षा की समस्या उठाई गई है छठे स्तर पर स्त्री पुरुष के आपसी संबंध की। इस प्रकार इतिहास और संस्कृति के संदर्भ में मानव जीवन के सत्य के वास्तविक स्वरूप को उसकी संपूर्णता में पहचानने, परखने परिभाषित करने और आत्मसात करने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है। उन्होंने इस उपन्यास में सामंतवादी मूल्य का खंडन किया है, जातिवाद का विरोध किया है, कुटिल राजनीति को दुत्कार दिया है, धर्म, संप्रदाय की संकुचित वृत्ति की तथा कायर परंपरा की अवहेलना की है। इस सब के बदले में 'मनुष्यता' संबंधी दृष्टि का समर्थन किया है और मानव धर्म तथा मानवीय संस्कृति की स्थापना की है।

सन्दर्भ सूची

- बाणभट्ट की आत्मकथा
- द्विवेदी ग्रंथावली भाग 1
- अशोक के फूल
- विचार और वितर्क
- रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय
- कल्पलता, नाखून क्यों बढ़ते हैं
- अशोक के फूल
- विचार और वितर्क, शव साधना
- हिंदी साहित्य, उसका उद्भव और विकास
- विचार प्रवाह,मानव सत्य
- द्विवेदी ग्रंथावली, भाग - 1
- उपन्यासकार हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ स्नेहलता शरेषचन्द्र

संदर्भ ग्रंथ सूची

रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. 63

बाबू गुलाबराय, भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, पृ. 1

विचार और वितर्क, शव साधना, पृ. 39

डॉ स्नेहलता शरेषचन्द्र, उपन्यासकार हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. 42

विचार प्रवाह,मानव सत्य, पृ. 211

द्विवेदी ग्रंथावली, भाग - 1, पृ. 26

द्विवेदी ग्रंथावली, भाग - 1, पृ. 142-143

द्विवेदी ग्रंथावली, भाग - 1, पृ. 150

मॉरीशस के हिंदी उपन्यासों में 'रामचरितमानस' का प्रभाव

- डॉ. शालेहा प्रवीन
- श्रीमती मनोज चौधरी

सार

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में अपना विशेष स्थान रखती है। भारतीय संस्कृति हमारे पूर्वजों की त्याग, तपस्या, साधना और नैतिक विचारों की द्योतक है। जो समसामयिक युग में भी हमें जीवन मूल्यबोध के महत्व का बोध कराते हुये आदर्श एवं नैतिक जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती है। मॉरीशस की पहचान सदैव से भारतीय संस्कृति से रही है। यहाँ विभिन्न धर्मों के लोग एक साथ निवास करते हैं। हिन्दू वर्ग के लोग भारतीय संस्कृति को अपने भीतर संजोय हुए हैं। जो मॉरीशस देश में उनकी विशेष पहचान बनाती है। मॉरीशस द्वीप पर गिरमिटिया मजदूरों के आगमन से ही भारतीय संस्कृति का आगमन होता है। यही कारण रहा कि मॉरीशस की धरा पर भारतीय संस्कृति पुष्पित पल्लवित होने लगी। इन्हीं गिरमिटिया मजदूरों के द्वारा "जिनकी मातृभाषा भोजपुरी थी, किंतु ये लोग अवधी में रची रामचरितमानस तथा हनुमान चालीसा आदि धार्मिक ग्रंथ अपने साथ लाये थे जो उनके अस्तित्व एवं अस्मिता की रक्षा के आधार बने। ये भारतीय मज़दूर अपनी बेकारी, गरीबी, प्रलोभन आदि विभिन्न कारणों से अपनी मातृभूमि को छोड़कर एक अनजानी दुनिया में चले आए थे, लेकिन इस नरक जैसे वनवास में अपने जहाज़ी भाइयों के प्रेम, धार्मिक ग्रंथों से प्राप्त जीवन-शक्ति तथा बैठकाओं की समुदायिकता आदि से अपनी भारतीयता और जीवन-संस्कृति को कायम रख सके।" गिरमिटिया मजदूर अपने दुख-दर्द एवं कष्टों को भुलाने के लिए रात्रि में बैठका में एकत्रित होकर, रामचरितमानस का पाठ वाचन किया करते थे। आज भी यह सांस्कृतिक परंपरा मॉरीशस में विद्यमान है और वर्त्तमान में भी इन्हीं गिरमिटिया मजदूरों की चौथी-पाँचवी पीढ़ी अपने सस्कारों में भारतीय संस्कृति को जीवित रखे हुए हैं।

बीज-शब्द : मॉरीशस, रामचरितमानस, गिरमिटिया, बैठका, भारतीय संस्कृति, शर्तबंध प्रथा।

नैसर्गिक सुषमा से सुशोभित मॉरीशस देश हिंद महासागर के देशों में अपनी एक विशिष्ट पहचान रखता है। इस खूबसूरत देश की भूधारा से मॉरीशसीय हिंदी की खुशबू निरंतर प्रवाहित हो रही है।15वीं शताब्दी से अरब

नाविकों के आगमन से मॉरीशस का इतिहास आरंभ माना जाता है। किंतु उनके बाद यह द्वीप पुर्तगाली, डच, फ्रेंच तथा अंग्रेज उपनिवेशवादियों द्वारा शासित रहा। यह देश अपने में विभिन्न भाषाओं एवं संस्कृतियों को संजोए हुये है। रमेश पोखरियाल 'निशंक' मॉरीशस के संदर्भ में कहते हैं- "आज का यह मॉरीशस भारतवंशियों के बलिदान और उनके 'भागीरथ प्रयत्न' का प्रतिफलन है। दारुण यातनाओं के बीच उन्होंने इस वनाच्छादित टापू को हरित परिधान से सजाकर एक सुंदर पुष्पवाटिका में बदल डाला। विभिन्न जाति, धर्म, भाषाओं व परंपराओं, परिवेश से लेकर भारतीय खान-पान तक को वे पीढ़ियों बाद भी सहेजे हुए हैं। हिंदी की पताका विश्व में फहराने के लिए वह अनवरत कोशिश में लगे हैं। भारत और भारतीयता के प्रति इन भारतवंशियों का यह लगाव व समर्पण हम सब के लिए एक सीख है। मैं कृतज्ञ हूँ उन भारतवंशियों का, जिन्होंने विकट परिस्थितियों में भी अपनी जड़े नहीं छोड़ीं। अशिक्षित होते हुए भी वाचिक, लोकश्रुति परंपरा से अपनी विरासत को सतत बनाए रखा। रामायण, महाभारत की व्यवहारिक आदर्श कथाओं को आगे बढ़ाते रहे और आज भी तमाम दबावों के बीच अपनी इस महान विरासत को जीवित रखे हुए हैं।" मॉरीशस भारत जैसा ही प्रतीत होता है। यहाँ का साहित्य भी कम सशक्त नहीं है। यहाँ हिंदी में साहित्य की विभिन्न विधाओं में जैसे कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, एकांकी, जीवनी, संस्मरण, यात्रा वृतांत, लघु कथाएँ, हास्य व्यंग्य, गद्य क्षणिकाएँ आदि पर साहित्यकारों ने कलम चलाई है। मॉरीशस की आजादी के पूर्व की रचनाओं में प्रलोभन, धोखाधड़ी, गिरमिटिया मजदूरों की दशा का चित्रण, सुधारवादी दृष्टिकोण, संघर्ष की प्रधानता, आज़ादी एवं उज्ज्वल भविष्य की कामना, प्रकृति चित्रण, भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम, धार्मिक ग्रन्थों का महत्व, उच्च मानवीय भावों का प्रकटीकरण आदि प्रमुख रहा है। वहीं आजादी के बाद की रचनाओं में मोहभंग की स्थिति, हताशा, निराशा, आक्रोश, सामाजिक राजनीतिक विदुरुपताओं पर व्यंग्य आदि प्रमुख रहें हैं। एक समानता सभी उपन्यासकारों के उपन्यासों में समान रूप से दिखाई देती है। सभी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में रामचरितमानस ग्रंथ की महत्ता को उजागर किया है। जो आज भी मॉरीशस देश में निवास कर रही पीढ़ी की अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा कर रही है।

मॉरीशस देश में निवास कर रहे हिन्दू वर्ग के लोगों में 'रामचरितमानस' एक पवित्र एवं महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जो वर्ष 1834 में मॉरीशस प्रवासन के समय भारतीय मूल के लोग अपने साथ अवधि में रचित 'रामचरितमानस' ले गए थे। "मॉरीशस के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. ठाकुरदत्त पाण्डेय ने लिखा है कि उनके भारतीय पूर्वजों ने तुलसी कृत रामचरितमानस तथा हनुमान चालीसा से प्रभु राम का गुणानुवाद करते हुए अपने सम्पूर्ण कष्टों एवं पीड़ाओं को धैर्य के अश्रुओं से दूर करते थे।" अतः यह कहना असंगत न होगा कि रामचरितमानस ग्रंथ ही एक अंजान परदेश में उनकी रक्षा का आधार स्रोत बना। रामचरितमानस के पठन-पाठन से ही उन्होंने अपनी भारतीय संस्कृति आचार-विचार, रहन-सहन, रीति-रिवाजों को जीवित रखा। यही कारण रहा कि गिरमिटिया मजदूरों ने जब भारत से मॉरीशस की पथरीली भूमि पर कदम रखा। उनके एक-एक कदम पर साथ रामचरितमानस रही। उनके दुख-पीड़ा, जीवन-संघर्षों एवं अत्याचारों से लड़ने एवं विजय दिलाने का मूल मंत्र रामचरितमानस ही रहा। गोरे सरदारों के कोड़े और बाँसों की मार को सहकर तथा उनके द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों के बावजूद भी भारतीय मजदूर चोरी-छिपे रामचरितमानस का पाठ किया करते थे। मॉरीशस के प्रख्यात उपन्यासकार अभिमन्यु अनत के उपन्यास 'लाल पसीना' में जिसका उदाहरण सपष्टता से दिखाई देता है- "मौसी, पर तुम जरा जल्दी आना। साँझ हमारे यहाँ रामायण हो रही है। घर पर काफ़ी काम है। पर झुनी, कल ही त हरीनन् भगत के रामायण गावे के जुलुम में सिपाही पकड़ ले गयल। इसका यह मतलब थोड़े ही होता है कि हम अपनी सभी रामायण जलाकर घर में चुपचाप बैठे रहें ! ठीक बा बेटी, पर सावधानी त चाहे ला बरतते रहके। देखना तो यह है कि

कितनी रामायण जब्त होती है, कितने रामायणियों को बन्द किया जाता है। मौसी तुम जल्दी आ जाना।" इस प्रकार से विषम परिस्थितियों में भी रामायण का पाठ-वाचन निरंतर जारी रहा। कई लोगों के घरों में भी सप्ताह में एक दिन रामायण पाठ का आयोजन होता। यदि किसी कारणवश घर में रामायण का आयोजन नहीं हो पाता तो गाँव की बैठका में रामायण पाठ के लिए आयोजन किया जाता। अभिमन्यु अनत के समकालीन उपन्यासकार रामदेव धुरंधर के उपन्यास 'पथरीला सोना' में रामायण पाठ के आयोजन का द्रष्टव्य है "सुन हो भैया लोगन। साँझ के हमार दुआर आव जा। रामायण गावी जा मिल के। जिस घर रामायण पाठ का आयोजन होता था लोगों ने इसी तरह जाने की आदत डाल ली थी। हर सप्ताह ऐसा आयोजन तो हो ही जाता था। यदि बस्ती का कोई प्राणी अपने यहाँ आयोजन करने की ज़िम्मेदारी न ले तो बैठका तो थी ही। बस्ती के बैठका में बड़े प्रेम से जुटते थी। मुड़िया पहाड़ की इस गोद में धर्म की भावना से रामायण गान मुखरित होता था।" अतः विषम से विषम परिस्थितियों में भी प्रत्येक दिन रामायण आयोजन में सभी गाँव वाले एकत्रित हुआ करते थे। "मॉरीशस देश में "रामायण की गूँज शुरू हुई तो लोगों के बीच मारीच को मिले आशीर्वाद की सार्थकता का एहसास होना शुरू हो गया था भारतीय आप्रवासियों की उस पहली घड़ी से आज तक मॉरिशस राम नाम के गूँजन का द्वीप बना रहा है। आज के आधुनिक मॉरिशस में जिसे विकासशील देशों में प्रमुखता दी जाने लगी है, 'रामायण' के सत्संग भी उसी रफ़्तार के साथ विकसित होते रहे हैं। जीवन के सबसे विकट क्षण में जब किसी आत्मीय जन के निधन की शोकाकुलता मन को व्यथित करती है 'रामायण' ही परिवार के आत्मीयजनों को धीरज बँधाती है। मृत्यु के समय और उसके सात दिन बाद तक 'रामचरितमानस' की चौपाइयाँ और दोहे शोकाकुल परिवार को सांत्वना प्रदान करते हैं। और जीवन को फिरसे बल देते हैं। आधुनिकता की सारी उपलब्धियों को स्वीकार करते हुए भी मॉरिशस के गाँवों और शहरों ने भारतीय परम्परा से जुड़कर 'रामायण' के प्रति अपनी आस्था को बनाये रखा है। वे सत्संग चाहे झाँझ-ढोलक के साथ हों, चाहे गीत-भजनों के साथ हों, या पाठ और विवेचन के रूप में, वे आज भी उसी श्रद्धा और अनुराग के साथ होते हैं।" आधुनिकता का प्रभाव मॉरीशस के समाज पर भी पड़ा। स्वाभाविक है समाज में परिवर्तन अवश्य दिखाई देता है परंतु इस परिवर्तन में जो एक चीज नहीं बदली वह रामचरितमानस के प्रति प्रेम अनुराग आस्था और समर्पण का भाव है।

मॉरीशस में ऐसी परंपरा है। जिस घर में मृत्यु होती है, वहाँ रात भर जागना होता है। मृत्यु के समय रात भर लोगों द्वारा रामायण का सुमिरन भी किया जाता है। उपन्यास से दृष्टांत प्रस्तुत है- "पाठशाला की लड़कियाँ घर के भीतर रामायण-पाठ के लिए जमा हो गयी थीं। भीतर पहले ही से चटाइयाँ बिछा दी गयी थी और रीहल पर देवननन के घर से मोटी रामायण लाकर रख दी गयी थी। कोई आधे घण्टे बाद ही घर के भीतर लड़कियों ने रामायण का सुमिरन शुरू कर दिया। सुमिरन के बाद अयोध्या काण्ड को खोला गया और दशरथ की मृत्यु का पाठ शुरू हुआ जैसा कि हर मृत्यु के समय होता रहता है।" भारतीय रीति-रिवाजों के अनुसार मॉरीशस में भी मृत शव को अकेले नहीं छोड़ा जाता है। सगे-सम्बन्धी लोग मृत शव के कमरे में ही रात भर जागते हैं और आस-पास के पड़ोसियों के लिए घर के बाहर पंडाल बनाया जाता है। जहाँ वह लोग रतजगी करते हैं। आस-पड़ोस से वह सभी लोग मृतक के घर पर एकत्रित हो जाते हैं। जिन्हें भी रामचरितमानस पढ़नी आती है। वह उसी कमरे में बैठ कर रामचरितमानस का पाठ करते हैं जहाँ शव रखा जाता है। ताकि मृतक की आत्मा को शांति मिल सके। रामदेव धुरंधर के उपन्यास के पात्र रामफल की मृत्यु पर भी गाँव के लोग एकत्रित होते हैं और रामचरितमानस का पाठ करते हैं। जिसका सजीव चित्रण उपन्यास से उल्लेखित है-"सभी लोग एकत्रित हुए और रामायण बाँचने लगे। बूढ़ों के बीच भी रामायण की एक प्रति रख दी।"

इसी प्रकार से अभिमन्यु अनत के उपन्यास 'लाल पसीना' में रामायण पाठ का सत्संग 'बैठका' में किए जाने

का उल्लेख मिलता है। मॉरीशस में बैठका का इतिहास लगभग दो सौ साल पुराना है। "बैठका' की व्युत्पत्ति 'बैठना' शब्द से हुई। 'बैठका' के शाब्दिक अर्थ में एक सांस्कृतिक वैभव है, 'बैठका' से एक इतिहास जुड़ा हुआ है। मॉरीशसीय हिंदू समाज में यह शब्द न केवल सर्वप्रचलित है अपितु यह सांस्कृतिक जीवन से भी जुड़ा हुआ है। जिस जगह पर भारतीय मज़दूर बैठते थे उसी स्थान को हम 'बैठका कहते हैं। 'बैठक' अपने सच्चे अर्थ में एक सामाजिक केंद्र था जहाँ पर भारतीय आप्रवासी बैठकर अपने दिनचर्या व सुख-दुःख बाँटते थे।" अतः बैठका में रात्रि के समय रामायण पाठ के सत्संग का भी आयोजन किया जाता है। जिसमें नैतिक बातों का ज्ञान भी दिया जाता है। उपन्यास से उदाहरण दृष्टव्य है। "रात की बैठक में रामायण के सत्संग के दौरान दशरथ-मृत्यु के संदर्भ में पुजारी जी ने कहा, किसनसिंह की मृत्यु को हम मृत्यु न समझें।"

मॉरीशस के समाज में रामचरितमानस की अत्यधिक उपयोगिता है। अभिमन्यु अनत और रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में जीवन की प्रत्येक स्थितियों-परिस्थितियों में रामायण के दोहे और चौपाइयों की उपयोगिता को दर्शाया गया है। जिसका वर्णन उनके उपन्यासों में यथास्थान किया गया है। "बंशी महाराज भी आएं और रामायण की दो चौपाइयों से काशी की अवसन्न पड़ी हुई आत्मा को इस विश्वास में बाँधे कि आज भी उन की यहाँ उतनी ही आवश्यकता है जितनी पहले हुआ करती थी।" मॉरीशस के लोग रामचरितमानस को पवित्र और पावन ग्रंथ मानते हैं। कोई भी शुभ कार्य घर में आयोजित करने से पहले वहाँ के समाज के घर-घर में रामचरितमानस का पाठ किया जाता है। यही नहीं घर में किसी के बीमार होने पर भी रामचरितमानस का पाठोंच्चारण किया जाता है। जो उपन्यास की इन पंक्तियों से परिलक्षित होता है- "पुष्पा के अनुरोध पर पुजारी अपने यहाँ से रामायण ले आया। पाठ मदन करता रहा। उस समय तक जब तक कि पुष्पा को नींद न आ गई।" दुखों को हरने वाले राम के भक्त संकटमोचन के प्रति भी लोग अधिक विश्वास रखते हैं मॉरीशस में प्रत्येक हिन्दू घर के बाहर हनुमान जी की पताका लहराती हुई दिखाई दे जाती है। इसलिए मॉरीशस के हिन्दू समाज में 'हनुमान चालीसा' ग्रंथ रोगी के सिरहाने रखने की भी प्रथा भी प्रचलित है। जिसका उद्धरण उपन्यास में मिलता है-"उसके उस भय को मिटाने के लिए मीरा पुजारी के यहाँ से तुलसी का पानी ले आयी थी। उसकी कुछ बूँदों को परकाश पर छिड़ककर उसने मदन के यहाँ से ले आयी हनुमान चालीसा को उसके सिरहाने रख दिया।"

अतः कहा जा सकता है कि मॉरीशस देश का समाज भारतीय समाज के समान ही परिलक्षित होता है। आज भी समाज में प्रचलित धार्मिक अनुष्ठानों से लेकर सभी हिन्दू घरों में राम नाम का स्मरण किया जाता है। इसके अन्य कृष्ण, हनुमान तथा अनेकों देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। भारत के समान मॉरीशस में धार्मिक ग्रन्थों के प्रति अटूट श्रद्धा दिखाई देती है। अभिमन्यु अनत तथा रामदेव धुरंधर अपने उपन्यासों के अलग-अलग पात्रों के द्वारा मानव को ईश्वर की भक्ति की ओर उन्मुख होने का संदेश देते हैं। वर्तमान समय में भौतिकवादी सोच एक तरफ समसामयिकता को प्रदर्शित करती है तो दूसरी ओर अभिशाप की भी सूचक है। जिसके कारण मानव को अनेकानेक परेशानियों एवं चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। जो मनुष्य में हताशा और निराशा को जन्म देने लगता है। परिणामस्वरूप मानव के भीतर अनेक नकारात्मक भाव और विचार पैदा होने लगते हैं इसी नकारात्मक दृष्टिकोण को बदलने के लिए आवश्यक है उसमें आशावादी भाव का संचार हो। इसलिए दोनों ही उपन्यासकारों ने मानवीय मूल्यों को संरक्षित रखने के लिए मनुष्य की सोच में आशावादी परिवर्तन लाने के लिए अपने उपन्यासों में रामचरितमानस ग्रंथ के प्रति पवित्रता एवं श्रद्धा को महत्व दिया है ताकि मॉरीशस की धरा पर जीवन-यापन कर रही भारतीय संततियों में आशावादी सोच का प्रवाह हो सके। वह अपनी मूल जड़ से कट न सकें।

वर्तमान परिदृश्य में मॉरीशस और भारत का सांस्कृतिक संबंध विकास के पथ पर है और इस विकास के

पथ को प्रशस्त बनाने में शर्तबंध प्रथा के तहत भारत से मॉरीशस भेजे गए मजदूरों का विशेष योगदान रहा है। गिरमिटिया मजदूरों के प्रवासन के साथ उनके धर्म, संस्कृति, आस्था-निष्ठा और संस्कारों इत्यादि का भी प्रवासन हुआ। इन गिरमिटिया मजदूरों ने मॉरीशस की भूधरा पर पहुँच कर भी अपनी सांस्कृतिक स्मृतियों को धूमिल पड़ने नहीं दिया। अभिमन्यु अनत के उपन्यास में मॉरीशस में भारतीय लोग अपने देश, गाँव-घर छोड़ने के दुख-पीड़ा को प्रस्तुत गीत के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। उपन्यास के पात्र इस गीत के द्वारा बताते हैं कि उन्होने अपना देश मारीच जैसे बहरूपिया के छलावे में आकार छोड़ा था कि पत्थर पलटने से सोना मिलेगा के प्रलोभन में पड़कर वह मारीच देश पहुँचे थे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने केवल अमानवीय अत्याचार को ही सहन किया। जिसका उल्लेख उपन्यास में गिरमिटिया मजदूरों ने भोजपुरी गीत के माध्यम से अभियक्त किया है-

"सुनि के नाम हम मारीच के दीपवा हो
पहुँचे अरी हम पाने को सोनवा
बदले में मिलेला भाई बाँसों की मार हो
छिल-छिल गइली सब मजदूरन की पीठवा
कोल्हू के बैल बने इखवन पीसन को
छोड़ा था देस अपन कुली बनन को।"

यही कारण रहा कि अनेक अमानवीय यातनाओं के बाद भी उन्होंने अपनी संस्कृति का परित्याग नहीं किया। इतने वर्षों के पश्चात् भी भारतवंशियों ने अपनी संस्कृति एवं परंपरा को सँजोये हुए रखा है। भारतीय परंपरा एवं संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन में 'रामचरितमानस' का विशिष्ट योगदान रहा है। अभिमन्यु अनत तथा रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में रामचरितमानस का वर्णन मानवीय जीवन मूल्यों को प्रदर्शित करता है। गिरमिटिया मजदूरों एवं उनकी संततियों के जीवन में भारतीय समाज, संस्कृति, परंपरा और भाषा के संरक्षण में रामचरितमानस का योगदान अक्षुण्य रहा है। रामचरितमानस ने भारतीय संस्कृति एवं परंपरा की महत्ता वैश्विक पटल पर प्रस्तुत की है। मॉरीशस में भी यह पवित्र ग्रंथ रामचरितमानस भारतीय मजदूरों के संस्कृति एवं परंपरा को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मॉरीशस पहुँचकर भारतीय प्रवासी मजदूर हस्तलिखित रामचरितमानस को एक गाँव से दूसरे गाँव में भेजा करते थे। क्योंकि सभी गाँव में यह ग्रंथ उपलब्ध नहीं था इसकी एक बड़ी समस्या यह भी थी कि वहाँ पर छापाखाना का अभाव था। इसलिए वह लोग जो थोड़े पढे-लिखे थे मानस का अनुकरण करके कई प्रतियाँ हाथ से ही लिखकर तैयार किया करते थे। ताकि ज्यादा से ज्यादा लोगों के पास यह ग्रंथ उपलब्ध हो सके। यह इस बात की प्रामाणिकता सिद्ध करता है कि रामचरितमानस के प्रति जो आदर भाव भारत में है, वही भाव मॉरीशस में गिरमिटिया मजदूरों एवं उनकी संततियों के बीच भी है। भारतीय मजदूरों ने रामचरितमानस ग्रंथ के अनुसरण से ही अपने विश्वासों एवं भावनाओं को जीवित रखा। जो आज भी उनके आचार-विचार, रहन-सहन में परिलक्षित होता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि समसामयिक युग में समाज में उत्पन्न हो रही मूल्यहीनता ने यह प्रश्न खड़ा कर दिया है अगर ऐसे ही जीवन मूल्यबोध का ह्रास होता रहा तो मानव जीवन संकट में आ जाएगा। अतः जीवन शून्यता की ओर अग्रसर न हो इसके लिए दोनों उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से रामचरितमानस की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला। समसामयिक युग में मॉरीशस देश के जन-जन में रामचरितमानस महत्वपूर्ण ग्रंथ के रूप में पूज्यनीय है। दोनों उपन्यासकारों के उपन्यासों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि रामचरितमानस

का पठन-पाठन करके प्रत्येक व्यक्ति मंत्रमुग्ध हो जाता है। मॉरीशस देश पर विभिन्न देशों का शासन रहा जिसके कारण वहाँ विभिन्न संस्कृतियों का मिश्रण पाया जाता है। परंतु आज भी मॉरीशस में भारतीय संस्कृति एवं राम परंपरा लोगों के जीवन में, संस्कारों में गहराई से रची-बसी हुई है। मॉरीशस को लघु भारत के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि "भारतीय संस्कृति की गवाही यहाँ के पहाड़, नदी और तालाब तक देते हैं। एक ओर देश का मौन प्रहरी, जिसका नाम मुड़िया पहाड़ है, वह परियों को दिये वचन-भंग का प्रायश्चित्त करता हुआ मानव आकृति में समाधि साधे बैठे दिखता है। दूसरी ओर परी तालाब अपने गंगा की-सी निर्मलता लिए 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की अनुभूति दिलाता है। ग्री-ग्री के समुद्र-तट के प्रलयंकर ज्वारभाटे शिव के तांडव नृत्य की भंगिमा प्रस्तुत करते हैं। सुबह-शाम आसमान पर चमक आये इन्द्रधनुष अर्जुन के गांडीव की प्रत्यंचा का अहसास दिला जाते हैं।"

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. गोयनका, कमल किशोर, हिन्दी का प्रवासी साहित्य, पृ. 16-17, स्वराज प्रकाशन, 2017.
2. निशंक, रमेश पोखरियाल, मॉरीशस की स्वर्णिम स्मृतियाँ, पृ. 21, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2012.
3. गोयनका, कमल किशोर, हिन्दी का प्रवासी साहित्य, पृ. 16-17. स्वराज प्रकाशन, 2017.
4. अनत, अभिमन्यु, लाल पसीना, पृ. 206-207, राजकमल प्रकाशन, 2019.
5. धुरंधर, रामदेव, पथरीला सोना, तृतीय खण्ड, पृ. 14, स्टार पब्लिकेशन, 2008.
6. गोयनका, कमल किशोर, हिन्दी का प्रवासी साहित्य, पृ. 305-306, स्वराज प्रकाशन, 2017.
7. अनत, अभिमन्यु, मुड़िया पहाड़ बोल उठा, पृ. 185, प्रभात प्रकाशन, 1987.
8. धुरंधर, रामदेव, चेहरों का आदमी, पृ.117, समानान्तर प्रकाशन, 1981.
9. सुखलाल, सं. गंगाधरसिंह गुलशन, मॉरीशस में बैठका की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और हिंदी के उन्नयन में उसकी भूमिका, पृ. 44, विश्व हिंदी पत्रिका 2014.
10. अनत, अभिमन्यु, लाल पसीना, पृ. 227, राजकमल प्रकाशन, 2019.
11. धुरंधर, रामदेव, पथरीला सोना, प्रथम खण्ड, पृ. 214, स्टार पब्लिकेशन, 2008.
12. अनत, अभिमन्यु, लाल पसीना, पृ. 325, राजकमल प्रकाशन, 2019.
13. अनत, अभिमन्यु, गांधी जी बोले थे, पृ. 34, राजकमल प्रकाशन, 2018.
14. अनत, अभिमन्यु, लाल पसीना, पृ. 236, राजकमल प्रकाशन, 2019.
15. गोयनका, कमल किशोर, अभिमन्यु अनत : प्रतिनिधि रचनाएँ, पृ. 310-311, नटराज प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999.

वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में समकालीन हिन्दी उपन्यास

- डॉ. सदानन्द

सार

हिंदी उपन्यासों के बदलते परिदृश्य में भूमंडलीकरण के दौर में विस्थापन की समस्या विशेष रूप से प्रमुख होकर सामने आती है। नब्बे के दशक में जहाँ एक ओर भारत आर्थिक संकट और विपन्नता से जूझ रहा था, वहीं दूसरी ओर अमेरिका, चीन जैसे विकसित देश महाशक्ति के रूप में उभरकर विश्व को भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत 'वैश्विक ग्राम' में बदलने के प्रयास में संलग्न थे। भारत ने भी स्वयं को इस वैश्विक व्यवस्था के साथ जोड़ लिया। यद्यपि भूमंडलीकरण मानव इतिहास के लिए कोई नई परंपरा नहीं है, इसके ऐतिहासिक आधार पहले से ही मौजूद हैं। फिर भी समकालीन वैश्वीकरण अपनी कुछ विशेषताओं के कारण पूर्ववर्ती प्रक्रियाओं से भिन्न है। भारत में इस प्रक्रिया से जहाँ अनेक सकारात्मक परिवर्तन संभव हुए, वहीं इसके दुष्प्रभाव भी व्यापक रूप में अनुभव किए गए हैं।

बीज शब्द : भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण, सामंतवाद, पूँजीवाद, अस्तित्ववाद, साम्राज्यवाद, आदिवासी, उपन्यास।

साहित्यिक विधाओं के विकास एवं रूपांतरण में समाज की भूमिका सदैव निर्णायक रही है। साहित्य हमेशा जनसामान्य तक पहुँचकर विभिन्न विचारधाराओं का संचार करता रहा है। समाज जैसे-जैसे परिवर्तित होता है, साहित्यिक रूप और उनके साथ जुड़ी विचारधाराएँ भी बदलती रहती हैं। हिंदी साहित्य का इतिहास इसी निरंतर प्रक्रिया का द्योतक है, जिसमें परिवर्तन के विविध आयाम अंतर्भूत हैं।

आरंभिक महाकाव्य भारतीय संस्कृति और सभ्यता को अभिव्यक्त करने का मुख्य माध्यम बने। इनका स्वरूप जनपदीय समाजों में आकार ले चुका था। महाकाव्यों की कथावस्तु प्रायः राष्ट्रीय इतिहास और जातीय मिथकों से ली जाती थी तथा इनके नायक वीर योद्धा या राजवंश से जुड़े धीरोदात्त पात्र होते थे। भारतीय परंपरा

के संवाहक रामायण और महाभारत न केवल युगों-युगों तक स्मरणीय रहे, बल्कि आगे की महाकाव्य परंपरा को भी इन्होंने दिशा प्रदान की। हिंदी का प्रारंभिक महाकाव्य चंदबरदाई द्वारा रचित पृथ्वीराजरासो है, जिसमें पहली बार मानव जीवन के संघर्ष की गाथा अंकित हुई। इसके अतिरिक्त पद्मावत, रामचरितमानस, साकेत, कामायनी और प्रियप्रवास जैसे ग्रंथ हिंदी साहित्य की महाकाव्य परंपरा के गौरवपूर्ण उदाहरण हैं। सामाजिक संरचना और राजनीतिक परिस्थितियों के बदलने के साथ ही महाकाव्य लेखन की परंपरा भी क्षीण होती गई। इस प्रकार साहित्यिक विधाओं का प्रवाह समाज के साथ निरंतर गतिशील और परिवर्तनशील बना रहा।

21वीं सदी में भारतीय समाज एवं संस्कृति साहित्य की दुनिया में पूरे बदलाव के साथ अवतरित हो रहा है; जिसमें 1991 में उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण से पनपे बाजारवाद और उपभोक्तावाद इसके प्रमुख बिंदु हैं: जिसने पूरी दुनिया को अपने बाजार के रूप में परिवर्तित कर दिया। समकालीन शब्द का अंग्रेजी रूप "Contemporary" है, जिसका अर्थ है "समकाल का" या "जो किसी समय के साथ-साथ हो।" इसे इस तरह समझा जा सकता है कि समकालीन वह है जो अपने समय के अनुरूप हो। यह भी सत्य है कि शब्दों के प्रयोग के साथ उनका अर्थ बदल सकता है। "समकालीन" विशेषण है, जबकि "समकालीनता" इसका भाववाचक संज्ञा रूप है।

वर्तमान में समकालीन शब्द का प्रयोग साहित्य की लगभग सभी विधाओं में किया जाता है, जैसे, समकालीन उपन्यास, समकालीन कहानी, समकालीन नाटक, समकालीन काव्य आदि।

इस प्रकार, समकालीन साहित्य से तात्पर्य उस साहित्य से है जो अपने समय और समाज के अनुरूप लिखा गया हो। समकालीन हिन्दी कहानी यथार्थ के विविध आयाम में डॉ० ज्ञानवती अरोड़ा ने लिखा है "समकालीन ही वह बिन्दु साहित्य जगत में है, जहाँ से साहित्यिक रचना अग्रसर होती है, क्योंकि समकालीन में परम्परा है, संस्कृति है, वह केवल आज नहीं है आज बीते कल' से ही निर्मित होती है। 'आज' और कल का जोड़ ही समकालीनता है।"1 आज के मूल अर्थ में बहुत कम लेखकों ने इसे आधुनिकता से अलग माना है। समसामयिकता एक कलेवर की तरह होती है। आधुनिकता समसामयिकता, बिखराव और गतिशीलता की उस चेतना को समेटने का दृष्टिकोण है जो निरंतर चल रही होती है।

समकालीन शब्द का प्रयोग करते समय कला की धारणा पर ध्यान देना भी आवश्यक है। देश और काल का ज्ञान ही प्रमुख आधार है। इस दार्शनिकता या गुरु की देशकाल संबंधी अवधारणाओं को प्रत्येक दार्शनिक स्वीकार करते थे, लेकिन यह तत्ववाद आधुनिक साहित्य में उसी रूप में दिखाई नहीं देता। यहाँ देश और काल साहित्य में अनुभव के रूप में मौजूद रहते हैं। लेखक ने देश-काल में स्थित मनुष्य और उसकी परिस्थितियों पर विशेष ध्यान दिया है। किसी कालखंड में मानव के प्रवाहित होने का चित्रण यही दर्शाता है कि वह समय और परिवेश में स्थित है। लेखक की पद्धति और मानव केंद्रित दृष्टिकोण के कारण, देश और काल से प्रभावित मानव के माध्यम से हमें देश और काल का ज्ञान प्राप्त होता है, अन्य किसी रूप में नहीं। कालिदास और बाणभट्ट के साहित्य में देश, काल और ईश्वर के संदर्भ में निश्चित विचार रहे हैं, लेकिन वे व्यक्ति के अवलोकन में बाधक नहीं बने। उदाहरण स्वरूप, 'रघुवंश' में राजाओं का इतिहास एक कालक्रम में प्रस्तुत किया गया है। फिर भी, वहां काल की धारणाएँ या राजाओं और प्रजाजनों के विविध रूपांकन में कोई विघ्न नहीं आता।

कालिदास हमारे सामने उस प्राचीन काल के मनुष्य, उसके समय और वातावरण का चित्र प्रस्तुत करते हैं। इसे देखकर हम आज भी उस काल की विशिष्ट घटनाओं का अनुमान लगा सकते हैं। प्रायः आधुनिक लेखक देश और काल के विषय में किसी विशेष दर्शन या अवधारणा को थोपते नहीं हैं। वे देश और उसके समय-काल के संदर्भ में मनुष्य को देखते हैं और उसकी मानसिकता, मान्यताओं और क्रियाओं को मध्य में रखकर निष्कर्ष

निकालते हैं। लेखक की दृष्टि से, 'समकालीन' शब्द यह बताता है कि किसी विशेष समयखंड या प्रवाह में मनुष्यों की वास्तविक स्थिति क्या है। मनुष्य की स्थिति का अध्ययन या उसे अंकित, चित्रित करके ही हम समकालीनता की अवधारणा को समझ सकते हैं। शाश्वत काल भी इसी समकालीन रूप में अनुभव किया जा सकता है। काल अनंत है, जिसे दार्शनिक या साधक उसकी अमूर्तता और अनंतता में पकड़ते हैं। लेकिन लेखक मानव जीवन और प्रवृत्ति को वास्तविक रूप में ग्रहण करता है। जो कुछ भी किसी विशेष समय के वर्तमान में घटित होता है, वही समकालीन कहलाता है। इस अर्थ में पंत और अज्ञेय से लेकर आज के लेखक, कवि, कथाकार और गजलकार भी हमारे समकालीन कहे जा सकते हैं। समकालीन साहित्य किसी काल की समस्याओं और चुनौतियों का सामना करता है और उस काल की यथार्थवादी तस्वीर जनता के सामने प्रस्तुत करता है।

भारत में सन् 1990 के बाद वैश्वीकरण की प्रक्रिया अपनाई गई। इसके बाद सन् 1995 में विश्व व्यापार संगठन (WTO) का गठन हुआ। वैश्वीकरण का एक और अर्थ अमेरिकीकरण से भी जुड़ा हुआ माना जाता है। समाजशास्त्री श्यामाचरण दुबे का मानना है कि- "समकालीन भारतीय समाज तीव्र संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। परिवर्तन की आंधियाँ कई दिशाओं से आ रही हैं- एक ओर आधुनिकीकरण की अनिवार्यता है तो दूसरी ओर परम्परा का आग्रह है, पश्चिम की आर्थिक और तकनीकी सहायता अपने साथ वहाँ की जीवन शैली और मूल्य ला रही है, जिन्हें अपनी जड़ से कटे भारतीय आधुनिकता समझकर बिना तर्क अपना रहे हैं। इस अंधानुकरण ने एक नई चिंता को जन्म दिया है। अपनी अस्मिता और पहचान खोकर एक आकृतिविहीन भीड़ की गुमनामी में खो जाने की। हम इस प्रवृति के असहाय दर्शक बनकर रह गए हैं।"[2] इस वैश्विक आर्थिक विचारधारा का प्रभाव साहित्यकारों पर भी पड़ा है। आज सभी बाजारवाद से त्रस्त हैं। बाजार अब केवल व्यापार का माध्यम नहीं रहा, बल्कि टेलीविज़न और मोबाइल फोन के जरिए लोगों के घरों, यहां तक कि बेडरूम तक पहुँच गया है।

वैश्विक बाजार ने खासकर आम जनता की आकांक्षाओं को इतनी ऊँचाई दी है कि लोग उन्हें किसी भी कीमत पर प्राप्त करना चाहते हैं। इस पाने की लालसा में उन्होंने मानवीय मूल्यों को कहीं दफन कर दिया है। पहले भी गरीब लोग थे, लेकिन विषमता इतनी गहरी नहीं थी। आपसी ईर्ष्या और द्वेष नहीं था। आज अमीरी और गरीबी की खाई दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। जहाँ अमीरी पहाड़ की तरह खड़ी है, वहीं गरीबी का महासमुद्र हिलोरे मार रहा है। युवा शक्ति, जिस पर हमें गर्व है, वह अपनी लालसाओं को पूरा करने में लगी है। उसे न परिवार की चिंता है, न सगे-संबंधियों की, न ही नाते-रिश्तेदारों की। रिश्ते अब क्षणिक और पैसे पर आधारित हो गए हैं। प्यार केवल तब दिखाई देता है, जब हम अपने चाहने वालों को कुछ खरीदकर देते हैं। हमारे पर्व, त्योहार और सांस्कृतिक संबंध भी अब बाजार के अधीन हो गए हैं। वैश्वीकरण के इन दुष्प्रभावों को लेकर समस्त देशों के साहित्यकार और संस्कृतिकर्मी गहरी चिंता में हैं। इस बारे में ज्योतिष जोशी लिखते हैं, "उपन्यास अपने समय की नैतिकता से दूर नहीं हो सकता। उपन्यासकार अगर नैतिक समस्याओं से आँखे चुराता है तो मानना चाहिए कि वह अपने दायित्व से मुँह मोड़ रहा है।"[3]

वैश्वीकरण के नकारात्मक पक्ष से साहित्यकारों ने अपनी नजरें नहीं हटाईं, बल्कि वे समस्या की गहराई तक जाकर इसके समाधान के लिए उत्तर खोजने में लगे हैं। "हिन्दी साहित्य के संदर्भ में देखें तो कविता तथा कथा-साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव विशेष रूप से देखे जा सकते है। नए से नया और पुराने से पुराने कवि भी आज भूमण्डलीकृत स्थितियों से विचलित हो उठे हैं और अपनी कविताओं में विभिन्न बिम्बों, प्रतीकों, मिथकों आदि के माध्यम से चित्रित कर रहे हैं।"[4]

समकालीन हिन्दी उपन्यास ने अत्यंत सूक्ष्म संवेदन, गहराई और विस्तार के साथ देश, समाज और व्यक्ति

पर पड़ने वाले प्रभावों का कथात्मक रूप में अध्ययन किया है। भूमंडलीकरण के प्रभावों का ऐसा कोई पक्ष नहीं है जिसे हिन्दी उपन्यास ने चित्रित न किया हो। इसका आशावादी पहलू यह है कि उपन्यासकार ने यथास्थिति का विरोध करने वाले पात्रों और परिस्थितियों का सृजन कर अपनी सार्थक भूमिका निभाई है। विगत 20-25 वर्षों में वैश्विक आर्थिक चेतना विविध रूपों में प्रकट हुई है। भारत के संदर्भ में यह एक सांस्कृतिक संक्रमण का काल माना जा सकता है। उपन्यासकारों ने इन वैश्विक प्रभावों का आकलन जिस रूप में किया है, वह अपने आप में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उदाहरण के रूप में अलका सरावगी का उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' पूरी तरह से भूमंडलीय समस्याओं पर केन्द्रित है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में पिछले दस-पंद्रह वर्षों में हमारे जीवन-मूल्यों और जीवनाचार में आई तीव्र परिवर्तनशीलता के प्रति उपन्यास में चारों ओर गहरी संवेदना दिखाई देती है। 'जमाना हर समय बदलता है. पर पिछले दस सालों में जमाना एक बार छलांग लगाकर जैसे सौ साल आगे निकल गया है।' इससे पीढ़ियों का अंतराल भी तेजी से बढ़ा है। उपन्यास के एक प्रौढ़ पात्र के.बी.की पीढी अब अपने को जमाने की नब्ज-पकड़ने में अक्षम पा रही है। अब वही सफल हो सकता है जो जमाने के साथ चलकर रोज अपनी समाज को अपडेट तरोताज़ा रख पाता हो। अलका सरावगी कृत उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' वैश्विक आर्थिक चेतना से युक्त उपन्यास है अलका जी ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए वर्तमान में उपयोग की जा रही शब्दावली को ही माध्यम बनाया है। उपन्यास का पात्र के.बी. एक सफल मैनेजर है। के. बी. शहर में सबसे ज्यादा पैसा पाने वाले "मार्केटिंग कन्सल्टेंट है"[5] साठ साल होने के बाद भी के.बी. में जिजीविषा बची हुई। वे अपने बारे में बताते हुए कहते हैं, "हम मार्केटिंग के आदमियों का एक पाँव इधर, तो दूसरा पाँव नारद मुनि की तरह कहीं और रहता है। नारद मुनि की तरह हम कहीं टिकते नहीं हैं और उन्हीं की तरह थोड़ी-सी बात इधर की उधर और इधर तो हो ही जाती है।" जिन निजी कम्पनियों के पास अपने हवाई जहाज हैं उनके मालिक दूरदराज के द्वीपों पर छुट्टियाँ बिताने जाते हैं। उनके प्राइवेट शिप या थॉट होते हैं। उनके फार्म हाउस में उनके घोड़े पलते हैं और यह सब नहीं होता, तो इन सब चीजों के सपने होते हैं। जमाना ये दिल मांगे मोर का है। बस्तर के गाँव में अपनी झोपड़ी में बैठकर आदिवासी टी.वी. पर वाशिंग मशीन पर कपड़े धुलते देख रहा है और डबल डोर फ्रिज में जाने कब से रखी ताजी लौकी और टमाटर की गाथा सुन रहा है। इस देश की एक अरब जनता अब एक साथ सपने देख रही है। फर्क यही है कि किसी के सपने छोटे होते तो किसी के ज्यादा बड़े सपने हैं।"[6]

अलका सरावगी की पैनी नजर विश्व की आर्थिक व्यवस्था में हो रहे तेजी से बदलाव पर केंद्रित है। वे अपने उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' में सन 2007 की शुरुआत की ब्लूमबर्ग की रिपोर्ट का उल्लेख करती हैं, जिसमें कहा गया था कि देश में औद्योगिक उत्पादन आशा से कहीं अधिक हुआ है। बैंकों ने ब्याज पर धन देने का नया रिकॉर्ड बनाया है और तनख्वाहों में वृद्धि के कारण देश में खरीदारों की संख्या बहुत बढ़ गई है। के.बी. इस पर प्रसन्न हैं क्योंकि चोरडिया के पास खुश होने के और भी कारण बढ़ गए हैं। भारत के लोग दुनिया भर में फैक्ट्रियों खरीदते हुए नजर आ रहे हैं। टाटा ने इंग्लैंड में स्टील फैक्ट्री खरीद ली और बिड़ला ने अमेरिका में एल्युमिनियम के व्यवसाय में प्रवेश किया। के.बी. अपने अंदाज में हँसते हुए कहते हैं:

'चीन का ड्रैगन 2007 में 9 प्रतिशत की वृद्धि दिखाए, तो क्या इंडिया का हाथी उससे थोड़ा ऊपर, 9.1 प्रतिशत की वृद्धि के साथ, पीछे रहेगा?' इस समस्या पर विचार करते हुए अलका सरावगी ने एक ब्रेक के बाद' उपन्यास में लिखा है, 'यह एक मानी हुई वास्तविकता है कि सभ्यता के विकास में जो पूँजीवाद सोच से संचालित होती है, मनुष्य को एक व्यय से जोड़ने वाले समरसता के तमाम जरूरी मूल्य सिद्धान्त, मनोभाव, विचार सब हाशिये पर सरका दिए जाते हैं। उस पाँचवें शख्स ने आगे कहा- 'मशीनों और सुख-सुविधाओं के लिए आविष्कृत संवेदन शून्य उपकरणों की संगत में इन्सान के लिए एकमात्र सचेतता व सक्रियता उपयोगी और

अनुपयोगी का स्वीकार अस्वीकार हो गया है। जो कम्पनी काम की चीज थी अब काम की न रहकर फालतू हो गई है। इसे निकालो इसे हटाओ। मतलब इस पूँजीवादी युग में केवल पूँजी ही प्रधान है पूँजी नहीं तो सम्मान नहीं।'

वैश्वीकरण ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति पर तीव्र प्रभाव डाला है और उसे काफी हद तक मूल्यविहीन कर दिया है। पहले घर में बड़े-बुजुर्गों को सम्मान और गर्व की निशानी माना जाता था, लेकिन अब उन्हें अनुत्पादक समझकर उपेक्षित किया जाने लगा है। इसके परिणामस्वरूप पुणे जैसे महानगरों में ऐसे माता-पिता ने वृद्धाश्रम जैसी संस्थाएँ ही बना दी हैं, जहाँ वे अपने सुख-दुःख बाँटते हैं। कुछ माता-पिता अपने बच्चों से निराश होकर वृद्धाश्रम की ओर प्रस्थान कर जाते हैं।

भारतीय समाज में इस प्रकार के रवैये ने पारंपरिक सामाजिक संरचना के ताने-बाने को बिखेर दिया है। वैश्वीकरण से ओत-प्रोत ममता कालिया का चर्चित उपन्यास 'दौड़' इस बदलते समय का एक महत्वपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास वर्तमान समय की वास्तविकताओं से सीधे मुठभेड़ करता दिखाई देता है। जब तक भारत ने वैश्वीकरण में प्रवेश नहीं किया था, लोग एक-दूसरे के प्रति आभार और सेवा का भाव रखते थे। दूर-दराज के शहरों में आने वालों के साथ अजनबीपन का व्यवहार नहीं किया जाता था। लेकिन वैश्विक आर्थिक चेतना ने मानवीय संबंधों को काफी हद तक खत्म कर दिया है। अब केवल एक ही संबंध महत्वपूर्ण रह गया है पैसे का। व्यक्तिगत हैसियत और संपत्ति के आधार पर ही लोग मोलभाव करते हैं। उपन्यास में इस पर विचार करते हुए कहा है-"मैं कहता हूँ यह एकदम व्यापारी शहर है. सौ प्रतिशत। मैं चालीस घंटे के सफर के बाद यहाँ उतरा 'एक थी व्हीलर' वाले से पूछा I.I.M.K. चलोगे? किदर बोलने से उसने पूछा। मैंने कहा भाई वस्त्रापुर में जहाँ मैनेजरी की पढ़ाई होती है, उस जगह जाना है तो जानते हो... क्या बोला, 'टू हण्ड्रेड लगेगा' मैंने कहा तुम्हारा दिमाग तो ठीक है। उसने कहा साब आप उदर से पढ़कर बीस हजार की नोकरी पाओगे, मेरे को टू हण्ड्रेड देना आपको ज्यादा लगता है क्या?"[7]

भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप लोगों की रोजमर्रा की जिंदगी इस कदर बदल गई है कि वह चाहकर भी इसे बचा नहीं सकते। अब हर चीज साल भर उपलब्ध है। पहले जो सब्जियाँ और फल केवल मौसमी होते थे, अब उन्हें आप किसी भी महीने या किसी भी मंडी में कभी भी खरीद सकते हैं। शर्त बस यह है कि इसके लिए आपको अपनी जेब ढीली करनी पड़ेगी। लोग इस बदलाव में पूरी तरह ढल चुके हैं और इसे अब फैशन भी मान लिया गया है। गरीब भी सब्जीवालों के यहाँ मोलभाव करना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं। ममता कालिया ने इस स्थिति पर तंज कसते हुए लिखा है "यही हाल तरकारियों का है। हर कालोनी के गेट पर सुबह तीन-चार घंटे एक ऊँचा-ठेलावाला तरकारियों से सजा खड़ा रहेगा। वह घर-घर घूमकर आवाज नहीं लगाता। स्त्रियों उसके पास जाएंगी और खरीददारी करेगी। उसके ठेले पर खास और आम तरकारियों का अम्बार लगा हुआ है हरी शिमला मिर्च तो लाल और पीली भी। गोभी है तो ब्रोकोली भी। सलाद की शक्ल का थाई कैबेज भी दिखाई दे जाता है। खास तरकारियों में किसी की भी कीमत डेढ़ दो सौ, देखने पर प्लास्टिक की गेंद लगते हैं। ये टमाटर क्यारी में नहीं प्रयोगशाला में उगाए गए लगते हैं। कीमत दस रुपये पाव टमाटर का आकार इतना बड़ा है कि एक पाव में एक टमाटर ही चढ़ सकता है। दस रुपये का एक टमाटर। हे। भगवान क्या टमाटर भी N.R.K. हो गया? शिकागो में एक डॉलर का एक टमाटर मिलता है। भारत में टमाटर उसी दिशा में बढ़ रहा है। तरकारियाँ विश्व बाजार के जैसी बनती जा रही है। इनका भूमण्डलीकरण हो रहा है। पवन को याद आता है उसके शहर में घूरे पर भी टमाटर उग जाता था। किसी ने पका टमाटर कूड़े-करकट के ढेर पर फेंक दिया। वहीं पौधा लहलहा उठा। दो माह बीतते में फल लग जाते है।"[8]

औद्योगिकरण की आँधी में भारत में गाँवों की पूरी तरह उपेक्षा की गई है। वर्ल्ड बैंक की रिपोर्ट यह दिखाती है कि भारत में अधिक से अधिक लोग गाँवों से शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। ऐसा लगता है कि हमारी नीतियाँ गाँवों के लिए सबसे आखिरी प्राथमिकता बन गई हैं। अब गाँवों में अधिकतर बूढ़े, बेकार, बच्चे, विधवा और विकलांग ही दिखाई देते हैं। सारी अर्थव्यवस्था शहरों के इर्द-गिर्द घूम रही है। शहर अब आर्थिक केंद्र बन गए हैं। लोग मजबूर होकर गाँव छोड़कर शहरों की ओर बढ़ रहे हैं। वे शहरों में भी रहना नहीं चाहते, लेकिन उनके पास इसके अलावा कोई विकल्प नहीं है। प्रभा खेतान ने 'पीली आंधी' उपन्यास में इस स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा है:

"क्यों भइया कलकत्ता घूमने आए हो या व्यापार करने या रहने?

व्यापार करने, किशन का सपाट उत्तर था।

तब ठीक है। रुपया कमा लोगे लेकिन यहाँ कभी रहना नहीं। यह दोजख है दोजख। बड़ा बाजार में रहना भी कोई रहना है।

एक-एक कमरे में चार-चार, छः-छः। लोग बिटवा का ब्याह करेंगे तो उसी में पर्दा तानकर अलग कमरा बना लेंगे। सुबह पखाने के लिए लोटा लिए लाइन में खड़े हो। सड़ांध और बदबू आक थू, कहते हुए उसने ठीक किशन के बगल में थूक दिया। हरे राम... हरे राम। यहाँ खुली हवा के लिए तरस जाते हैं। गाँव में थे तो माना कि गरीब थे मगर।"

तब भाई हलवाई जी आप यहाँ क्यों आए?

'पेट के लिए यह पापी पेट जो न कराए सो अच्छा है। अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए उसने कहा।"9

वैश्वीकरण में प्रवेश के बाद इस देश में पूँजी का प्रवाह बहुत बढ़ गया है। अब घरेलू वस्तुओं के दाम अंतरराष्ट्रीय मूल्य तय कर रहे हैं। डॉलर के मुकाबले रूपया हमेशा से कमजोर रहा है। करोड़ों के भ्रष्टाचार की बातें आम हो गई हैं। हमारे शास्त्रों में कहा गया है: उत्तम खेती, मध्यम व्यापार, निकृष्ट चाकरी, भीख; लेकिन अब ईमानदारी और व्यापार की पुरानी परंपराएँ बीते जमाने की बात हो गई हैं। किसी का किसी पर विश्वास नहीं रहा। व्यापारी के लिए व्यापार करने की पहली शर्त अब सीधापन नहीं, बल्कि चालाकी बन गई है। प्रभा खेतान के उपन्यास 'पीली आंधी' में इसे इस तरह दर्शाया गया है कि किसी का टेढ़ा-मेढ़ा होना अब कमजोरी माना जाने लगा है। प्रभा खेतान कहती हैं "साहब कह रहे थे. तुम मारवाड़ी, बनिएँ हमें लूट रहे हो। मैंने बस इतना कहा-सर यह लूटना तो हमने अंग्रेजों से सीखा है। हमको व्यापार करना कहाँ आता था। कभी राजस्थान गये हैं? भूख और गरीबी देखी है? मेरे डुंगर गढ़ में साल में एक फसल होती है। ज्वार, बाजरा ज्वार की ओर वह भी बारिश हुई तो फसल होगी, नहीं तो अकाल। महामारी और भूख है। नंगी जलती हुई भूख। हम राजस्थानी स्वभाव से बहुत भावुक और सीधे होते हैं। जबान के पक्के। यह तो आपके बनाए टेढ़े-मेढ़ रास्ते पर चलने के लिए टेढ़ी-मेढी चाल सीखनी पड़ी है।"[10]

एक समय था जब स्वामी विवेकानन्द ने मैसूर के राजा को लिखे पत्र में कहा था कि अमेरिका में सर्वशक्तिमान डॉलर सब कुछ कर सकता है। आज वही स्थिति भारत पर भी लागू होती नजर आ रही है। देश में अमेरिका से डॉलर की बारिश हो रही है और इसके दुष्परिणाम भी दिखाई दे रहे हैं। कई युवा अमेरिका में बैठकर अपनी भारतीय संस्कृति की रक्षा करने का स्वप्न संजोते हैं। आज देश का हर युवा अमेरिका जाना चाहता है। कुछ समय पहले युवाओं के बीच एक सर्वेक्षण किया गया, जिसमें उनसे पूछा गया कि यदि उन्हें अवसर मिले तो क्या वे अमेरिका जाना चाहेंगे? इसमें साठ प्रतिशत युवाओं ने हाँ में उत्तर दिया। रवींद्र वर्मा ने इसी तथ्य को रेखांकित करते हुए अपने उपन्यास में लिखा है: "भैया, नमन ने पूछा, 'क्या तुम्हारा अमरीका जाने का फैसला

पक्का है? हाँ दादा उसने आँखे ऊपर उठाई, बात सिर्फ अमरीका की नहीं है। असली बात काम और कमाई की है। कोई मुकाबला नहीं है। अब दुनिया एक है, दादा मदन ने ऊपर की छत की ओर देखा, यह भूमण्डलीकरण का जमाना है।"[11]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जब से भारत की अर्थव्यवस्था ने वैश्विक दौर में प्रवेश किया है, तब से समाज में एक विचित्र प्रकार की विषमता उत्पन्न हो गई है। एक ओर समृद्धि के ऊँचे पहाड़ दिखाई दे रहे हैं, तो दूसरी ओर गरीबी की खाईयाँ और भी बढ़ गई हैं। भारत के धनाढ्य विश्व के अमीरों की सूची में शामिल होने लगे हैं। आज ऐसा वातावरण निर्मित हो गया है कि व्यक्ति कुछ पाने की जिद में अपने सर्वस्व को लुटा रहा है। वह दूसरों के पीछे इस कदर डूब गया है कि उसने समस्त मानवीय और नैतिक मूल्यों को तिलांजलि दे दी है। बाजारवादी संस्कृति ने पैसे के महत्त्व को बढ़ा दिया है। भारतीय संस्कृति के पर्व और त्योहार अब बाजार के अधीन हो गए हैं और लोगों की भावनाओं का भरपूर दोहन किया जा रहा है।

आज सभी संबंधों की रक्षा का आधार केवल पैसे बन गया है। पति-पत्नी का रिश्ता तभी कायम रहता है जब वे एक-दूसरे को महँगे उपहार देते हैं। भाई-बहन का प्यार तभी जाहिर होता है जब महँगी वस्तु उपहार में दी जाए। कोई त्योहार तभी पूरी तरह मनाया जा सकता है जब बाजार से कोई वस्तु खरीदी जाए। इस प्रकार की उपभोक्तावादी संस्कृति ने आज समाज में अजीब किस्म की बेचैनी और तड़प पैदा कर दी है। हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी लेखनी के माध्यम से इस सच को बखूबी उजागर किया है। यह सब उस समाज में घटित हो रहा है, जिसकी नींव त्याग और तपस्या पर रखी गई थी। उपभोगवादी संस्कृति ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया है और इसे बचाने का कोई स्पष्ट उपाय नजर नहीं आता।

संदर्भ सूची

1. समकालीन हिन्दी कहानीः यथार्थ के विविध आयाम, डॉ ज्ञानवती अरोड़ा, हिन्दी बुक सेंटर, 1994, पृ. 6
2. समय और संस्कृति, श्यामाचरण दुबे, वाणी प्रकाशन, 2018, पृ.131
3. उपन्यास की समकालीनता, ज्योतिष जोशी, भारतीय ज्ञानपीठ, 2016, पृ. 15
4. भूमण्डलीकरण और हिन्दी उपन्यास, पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2016, पृ. 73
5. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, राजकमल प्रकाशन, 2019, पृ. 8
6. वही, पृ. 11
7. दौड़, ममता कालिया, वाणी प्रकाशन, 2023, पृ. 14
8. वही, पृ.17-18
9. पीली आँधी, प्रभा खेतान, लोकभारती प्रकाशन, 2019, पृ. 34
10. वही, पृ. 290-91
11. दस बरस का भँवर, रवीन्द्र वर्मा, राजकमल प्रकाशन, 2007, पृ. 63

सौर ऊर्जा: तकनीकी एवं अनुप्रयोग

- निलेश कुमार पाठक
-सौरभ कुमार मिश्रा

सार

वर्तमान समय में सौर ऊर्जा विश्व की सबसे तीव्र गति से विकसित होने वाली नवीकरणीय ऊर्जा तकनीक बन चुकी है। जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा सुरक्षा और सतत विकास के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए विश्व के अधिकांश देश सौर ऊर्जा के विस्तार पर विशेष ध्यान दे रहे हैं। इस शोध-पत्र में वैश्विक स्तर पर सौर ऊर्जा की वर्तमान स्थिति, वृद्धि दर, तकनीकी विकास, प्रमुख देशों की भूमिका तथा भारत की प्रगति का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसके अतिरिक्त, सौर ऊर्जा के सामने आने वाली चुनौतियों तथा भविष्य की संभावनाओं का भी विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सौर ऊर्जा आने वाले दशकों में वैश्विक ऊर्जा प्रणाली का प्रमुख स्तंभ बन सकती है और भारत जैसे विकासशील देश को आत्मनिर्भर और विकसित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

बीज शब्द: सौर ऊर्जा, सौर ऊर्जा तकनीक, फोटोवोल्टिक, पेरोव्स्काइट, भारतीय नीतियां।

1. प्रस्तावना

सौर ऊर्जा (Solar Energy) सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊर्जा है, जो प्रकाश और ऊष्मा के रूप में पृथ्वी तक पहुँचती है। यह ऊर्जा एक नवीकरणीय (Renewable) और अक्षय (Inexhaustible) स्रोत है, क्योंकि वैज्ञानिकों का कहना है की, सूर्य अरबों वर्षों तक पृथ्वी पर ऊर्जा प्रदान करता रहेगा[6]। आज के समय में सौर ऊर्जा का उपयोग घरों, उद्योगों, कृषि और जल शुद्धिकरण में तेजी से बढ़ रहा है। यह ऊर्जा प्रदूषण रहित होती है, इसलिए पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके उपयोग से कोयला, पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता कम होती है और कार्बन उत्सर्जन घटता है[4]।

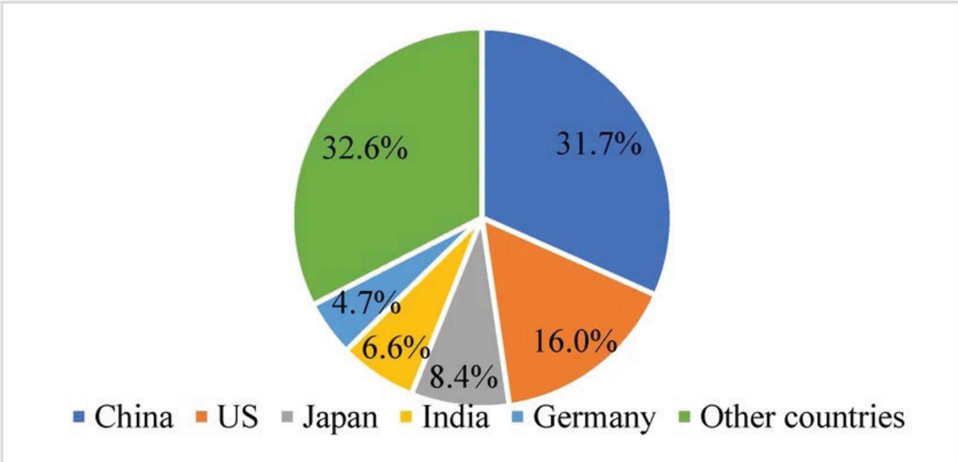

चित्र1. दुनिया के शीर्ष 5 देशों के संदर्भ में सौर पीवी द्वारा बिजली उत्पादन का चार्ट

भारत जैसे देशों में, जहाँ सूर्य का प्रकाश प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, सौर ऊर्जा भविष्य की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने का एक प्रभावी और टिकाऊ समाधान बनती जा रही है। भारत जैसे देश में साल में लगभग 300 साफ धूप वाला दिन होता है, जहाँ प्रतिदिन 4–7 kWh/m^2 सौर विकिरण प्राप्त होता है, सौर ऊर्जा के लिए अत्यंत उपयुक्त हैं[4,5]।

2. सौर ऊर्जा का वैज्ञानिक आधार

सौर ऊर्जा मिलने का वैज्ञानिक कारण सूर्य की नाभिकीय अभिक्रिया है, जिसमें हाइड्रोजन नाभिकों का संलयन होता है और ऊर्जा निकलती है। यह प्रक्रिया सूर्य के केंद्र में होती है, जहां तापमान लगभग 15 मिलियन डिग्री सेल्सियस होता है। सूर्य की नाभिकीय अभिक्रिया का समीकरण:

$4H \rightarrow He + 2e+ + 2\rightarrow$ + ऊर्जा

इस अभिक्रिया में, चार हाइड्रोजन नाभिक (H) मिलकर एक हीलियम नाभिक (He) बनाते हैं, और इस प्रक्रिया में ऊर्जा निकलती है। यह ऊर्जा सूर्य की सतह पर पहुंचती है और वहां से विकिरण के रूप में अंतरिक्ष में फैलती है [5]। यह विकिरण पृथ्वी पर पहुंचता है और सौर ऊर्जा के रूप में उपयोग किया जाता है। वैज्ञानिकों का ऐसा मानना है की सूर्य की नाभि मे लगभग 99% हाइड्रोजन है जो संलयन के दौरान ऊर्जा उत्सर्जित करते रहेंगे और हमे अरबों वर्षों तक पृथ्वी पर ऊर्जा निरंतर रूप से मिलती रहेगी।

यजुर्वेद में सूर्य के संदर्भ में एक मंत्र उद्धृत किया गया है:

"ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव, यद् भद्रं तन्न आ सुव"

अर्थात सूर्य तथा उससे प्राप्त ऊर्जा एक वैश्विक ऊर्जा है जो बिना किसी भेद भाव के अपने किरणों को समान रूप से संचारित करता है। इसीलिए सूर्य को विश्वानी देव कहा जाता है।

3. फोटोवोल्टिक तकनीक का ऐतिहासिक विकास

फोटोवोल्टाइक प्रौद्योगिकी का विकास 20वीं शताब्दी में हुआ। फोटोवोल्टाइक प्रभाव की सर्वप्रथम खोज Alexandre Edmond Becquerel ने 1839 में किया था[1]। उन्होंने पाया कि कुछ पदार्थों पर प्रकाश डालने से विद्युत धारा उत्पन्न होती है। इसके बाद 1873 में Willoughby Smith ने सेलेनियम (Selenium) में

फोटो-कंडक्टिविटी का पता लगाया और 1876 में William Grylls Adams और Richard Evans Day ने पहली बार सेलेनियम से प्रकाश के द्वारा विद्युत उत्पन्न किया[5]। 1905[2] में Albert Einstein ने अपने फोटोइलेक्ट्रिक प्रभाव की व्याख्या करते समय बताया कि प्रकाश फोटॉन (photon) के रूप में ऊर्जा देता है, तब इस बात की सैद्धांतिक पुष्टि हो गयी और यही सिद्धांत, PV तकनीक का वैज्ञानिक नींव बना। इस महान कार्य के लिए आइंस्टीन को 1921 का नोबेल पुरस्कार भी मिला। 1954 में चैपिन, फुलर और पियर्सन [3] ने पहला व्यावहारिक सिलिकॉन फोटोसेल विकसित किया।

4. सौर ऊर्जा की प्रमुख तकनीकें

सौर ऊर्जा को उपयोग में लाने के लिए कई प्रमुख तकनीकें विकसित की गई हैं। इनमे कुछ निम्नांकित हैं:

1. फोटोवोल्टाइक तकनीक (Photovoltaic Technology): इसमें सौर सेल (Solar Cells) का उपयोग कर सूर्य के प्रकाश को सीधे विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है।
2. सौर तापीय तकनीक (Solar Thermal): सूर्य की ऊर्जा को ताप ऊर्जा में बदला जाता है (जैसे- सोलर वाटर हीटर)।
3. केंद्रित सौर ऊर्जा (Concentrated Solar Power - CSP): दर्पण या लेंस का उपयोग करके सूर्य की किरणों को एक बिंदु पर केंद्रित किया जाता है (उच्च तापमान 1000°C तक)।
4. सौर जल विलवणीकरण (Solar Desalination): खारे पानी को पीने योग्य बनाना।
5. सौर पंपिंग एवं कृषि अनुप्रयोग: सिंचाई के लिए सौर पंप और सौर ग्रीनहाउस तकनीक।

5. सोलर फोटोवोल्टिक (PV) तकनीक का विस्तार और पीढ़ियां

सोलर फोटोवोल्टइक एक ऐसी विधि है जिसमें सोलर सेल डिवाइस का उपयोग करके सूर्य के प्रकाश को विद्युत धारा मे परिवर्तित किया जाता है[7]। दक्षता (Efficiency) और लागत (Cost) के आधार पर इसे मुख्य रूप से तीन पीढ़ियों में बांटा गया है:

5.1 पहली और दूसरी पीढ़ी (First and Second Generation)

- पहली पीढ़ी (Crystalline Silicon)[7]: यह वर्तमान में बाजार में सबसे अधिक उपयोग (लगभग 90-95%) की जाने वाली तकनीक है। इसमें मोनोक्रिस्टलाइन (Monocrystalline) और पॉलीक्रिस्टलाइन (Polycrystalline) सिलिकॉन सेल आते हैं। इनकी दक्षता 18% से 22% के बीच होती है और ये अत्यधिक स्थिर होते हैं।
- दूसरी पीढ़ी (Thin-Film Technology): इसमें कैडमियम टेल्यूराइड (CdTe) और कॉपर इंडियम गैलियम सेलेनाइड (CIGS) जैसी सामग्रियां शामिल हैं। इन्हें लचीले (Flexible) सतहों पर लगाया जा सकता है, लेकिन इनकी दक्षता सिलिकॉन की तुलना में थोड़ी कम होती है।

5.2 तीसरी पीढ़ी: उभरती तकनीकें (Third Generation: Emerging Technologies)

तीसरी पीढ़ी के सौर सेल अनुसंधान का मुख्य केंद्र हैं, जिनका उद्देश्य लागत को कम करना और दक्षता को बढ़ाना है। इसमें दो प्रमुख तकनीकें महत्वपूर्ण हैं:

A. कार्बनिक सौर सेल (Organic Solar Cells - P3HT:PCBM):

कार्बनिक सौर सेल में पॉलिमर और कार्बन आधारित अणुओं का उपयोग किया जाता है। इनमें P3HT एक इलेक्ट्रॉन डोनर (Electron Donor) के रूप में और PCBM एक इलेक्ट्रॉन स्वीकर्ता (Electron Acceptor) के रूप में कार्य करता है[9,11]।

- विशेषता: ये सेल हल्के, लचीले (Flexible), और कम तापमान पर 'रोल-टू-रोल' (Roll-to-Roll) प्रिंटिंग तकनीक द्वारा बनाए जा सकते हैं, जिससे इनकी उत्पादन लागत बहुत कम हो जाती है।
- सीमाएं: इनकी मुख्य समस्या कम दक्षता (लगभग 10-12%) और वातावरण (नमी और ऑक्सीजन) के प्रति अस्थिरता (Instability) है।

B. पेरोव्स्काइट सौर सेल (Perovskite Solar Cells)[8]:

पेरोव्स्काइट क्रिस्टल संरचना वाले पदार्थ होते हैं। पिछले एक दशक में सौर ऊर्जा के क्षेत्र में यह सबसे बड़ी वैज्ञानिक क्रांति मानी जा रही है।

- विशेषता: 2009 में इनकी दक्षता मात्र 3.8% थी, जो आज बढ़कर 25% से अधिक हो गई है। इनका 'बैंडगैप' (Bandgap) ट्यून किया जा सकता है[12]।
- सीमाएं: इनमें प्रयुक्त लेड (Pb) पर्यावरण के लिए विषाक्त (Toxic) हो सकता है और उच्च तापमान या नमी में इनकी स्थिरता (Stability) तेजी से घटती है[7,9]।

तालिका 1: प्रमुख सौर सेल तकनीकों का तुलनात्मक अध्ययन

मापदंड (Parameters)	सिलिकॉन (Silicon - 1st Gen)[5]	पेरोव्स्काइट (Perovskite)[8]	P3HT:PCBM (Organic)[9,11]
व्यावसायिक दक्षता (Commercial Efficiency)	18% - 22%	20% - 25% (Lab scale)	8% - 12%
निर्माण लागत (Manufacturing Cost)	उच्च (High)	मध्यम से कम (Medium to Low)	बहुत कम (Very Low)
लचीलापन (Flexibility)	कठोर (Rigid)	लचीला हो सकता है	अत्यधिक लचीला (Highly Flexible)
स्थिरता (Stability / Lifespan)	25+ वर्ष (उत्कृष्ट)	कम (सुधार जारी है)	बहुत कम (Very Low)

6. भारतीय परिदृश्य: प्रगति और प्रमुख परियोजनाएं

भारत सरकार ने 2070 तक 'नेट ज़ीरो' (Net Zero) उत्सर्जन का लक्ष्य रखा है। भारत की कुल सौर क्षमता 70 GW (गीगावाट) के आंकड़े को पार कर चुकी है। भारत में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए कई बड़े अल्ट्रा मेगा सोलर पार्क (Ultra Mega Solar Parks) स्थापित किए गए हैं[19]:

1. भादला सोलर पार्क, राजस्थान (Bhadla Solar Park): यह विश्व के सबसे बड़े सौर पार्कों में से एक है। इसकी कुल क्षमता 2,245 MW (मेगावाट) है।
2. पावागढ़ा सोलर पार्क, कर्नाटक (Pavagada Solar Park): इसे 'शक्ति स्थल' के नाम से भी जाना जाता है। इसकी क्षमता 2,050 MW है और यह किसानों से लीज़ पर ली गई ज़मीन पर बना है[18,19]।
3. रीवा अल्ट्रा मेगा सोलर, मध्य प्रदेश (Rewa Ultra Mega Solar): 750 MW क्षमता वाला यह प्रोजेक्ट दिल्ली मेट्रो (DMRC) को बिजली आपूर्ति करने के लिए प्रसिद्ध है।

7. भारत सरकार की प्रमुख नीतियां और योजनाएं (Government Policies and Schemes)[19]

- राष्ट्रीय सौर मिशन (JNNSM): 2010 में शुरू किए गए इस मिशन का लक्ष्य 100 GW सौर क्षमता स्थापित करना है[18]।
- पीएम कुसुम योजना (PM-KUSUM): किसानों को सौर ऊर्जा चालित पंप स्थापित करने के लिए 60% तक सब्सिडी दी जाती है।
- पीएम सूर्य घर मुफ्त बिजली योजना: 1 करोड़ घरों की छतों पर रूफटॉप सोलर (Rooftop Solar) पैनल लगाना और 300 यूनिट मुफ्त बिजली देना।
- PLI योजना (Production Linked Incentive): घरेलू विनिर्माण क्षमता को बढ़ाने के लिए 24,000 करोड़ रुपये का बजट।
- अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (ISA): 2015 में स्थापित, इसका मुख्यालय गुरुग्राम (भारत) में है।

8. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE): लक्ष्य एवं उपलब्धियां

भारत में स्वच्छ ऊर्जा के विकास, अनुसंधान और नीति-निर्माण के लिए 'नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय' (MNRE) नोडल निकाय है[17]। जलवायु परिवर्तन के खिलाफ वैश्विक लड़ाई में भारत के 'राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान' (NDCs - Nationally Determined Contributions) को पूरा करने का मुख्य उत्तरदायित्व इसी मंत्रालय पर है[13]।

MNRE के प्रमुख लक्ष्य (Targets): भारत सरकार ने 2030 तक 500 गीगावाट (GW) 'गैर-जीवाश्म ईंधन' (Non-Fossil Fuel) आधारित विद्युत क्षमता स्थापित करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है। इस विशाल लक्ष्य को समय पर प्राप्त करने के लिए MNRE द्वारा वित्त वर्ष 2023-24 से 2027-28 तक प्रति वर्ष 50 GW की नवीकरणीय ऊर्जा निविदाएं (Bidding Trajectory) जारी की जा रही हैं[18]।

वर्तमान स्थापित क्षमता (Installed Capacity): MNRE के नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों (मार्च 2026) के अनुसार, भारत ने अपनी स्थापित क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि दर्ज की है[13]:

- कुल नवीकरणीय क्षमता: देश की कुल नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता (बड़े जलविद्युत संयंत्रों सहित) लगभग 274.68 GW के ऐतिहासिक आंकड़े तक पहुँच चुकी है।
- सौर ऊर्जा का प्रभुत्व: इसमें अकेले सौर ऊर्जा (Solar Power) की स्थापित क्षमता 150.26 GW हो गई है, जो इसे भारत के नवीकरणीय पोर्टफोलियो का सबसे बड़ा और तीव्र गति से बढ़ता घटक बनाती है। वहीं, पवन ऊर्जा (Wind Power) की स्थापित क्षमता 56.09 GW है।
- एक बड़ी उपलब्धि के रूप में, जून 2025 में भारत ने अपनी कुल स्थापित विद्युत क्षमता (484.82 GW) में गैर-जीवाश्म स्रोतों की हिस्सेदारी को 50% (242.78 GW) के पार पहुँचा दिया। यह 2030 के पेरिस समझौते के मूल लक्ष्य से पाँच वर्ष पूर्व ही प्राप्त कर ली गई एक शानदार सफलता है[18]।

9. क्षेत्रीय नेतृत्व: राजस्थान और गुजरात का तुलनात्मक अध्ययन

भारत के 500 GW के लक्ष्य को वास्तविकता में बदलने का मुख्य आधार इसके राज्य हैं। भौगोलिक अनुकूलता, प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों और प्रगतिशील राज्य नीतियों के कारण राजस्थान और गुजरात इस हरित ऊर्जा क्रांति का नेतृत्व कर रहे हैं।

चित्र 2. राजस्थान में स्थापित एक तैरता हुआ सौर ऊर्जा फार्म। क्षमता 1MW (मेगावाट)।

. राजस्थान (Rajasthan): सौर ऊर्जा का सिरमौर राजस्थान अपनी असीम सौर क्षमता के कारण भारत में नवीकरणीय ऊर्जा स्थापित क्षमता के मामले में प्रथम स्थान पर है [16]

- स्थापित क्षमता: मार्च 2025 के आंकड़ों के अनुसार, राजस्थान की कुल नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता 34.14 GW थी, जो देश की कुल स्थापित RE क्षमता का सर्वाधिक (15.51%) है[19]।
- सौर की प्रधानता: राजस्थान की कुल हरित ऊर्जा में 82.9% योगदान केवल सौर ऊर्जा का है। राज्य में वर्ष के 320 से अधिक दिन तेज धूप (High Solar Radiation) रहती है और पश्चिमी राजस्थान (थार का मरुस्थल) में विशाल बंजर भूमि उपलब्ध है, जो इसे बड़े सोलर पार्कों के लिए सबसे आदर्श बनाती है[12]।
- भविष्य का लक्ष्य: राज्य सरकार ने 2030 तक 90 GW की नवीकरणीय क्षमता स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। भादला, फलौदी-पोखरण और बीकानेर जैसे वृहद सोलर क्लस्टर इस लक्ष्य की रीढ़ साबित हो रहे हैं।

चित्र (3,4). गुजरात के कच्छ के रण में स्थित खावड़ा नवीकरणीय ऊर्जा पार्क में भारत का सबसे बड़ा सौर ऊर्जा फार्म।

गुजरात (Gujarat): संतुलित ऊर्जा पोर्टफोलियो गुजरात नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन में राजस्थान के साथ कड़ी प्रतिस्पर्धा करते हुए देश में दूसरे स्थान पर विराजमान है।

- स्थापित क्षमता: गुजरात की कुल नवीकरणीय क्षमता 33.39 GW आंकी गई है, जो राष्ट्रीय क्षमता का 15.17% है[20,17]।
- संतुलित विकास (Hybrid Approach): राजस्थान के विपरीत, जहाँ मुख्य रूप से केवल सौर ऊर्जा का दबदबा है, गुजरात का ऊर्जा मिक्स कहीं अधिक संतुलित है। गुजरात की कुल स्थापित RE क्षमता में सौर ऊर्जा का 55.4% और पवन ऊर्जा का 38% हिस्सा है।
- गुजरात की लंबी तटरेखा (Coastline) और कच्छ की भौगोलिक स्थिति इसे पवन ऊर्जा (विशेषकर ऑफशोर विंड) और हाइब्रिड परियोजनाओं के लिए अत्यधिक उपयुक्त बनाती है। कच्छ के खावड़ा (Khavda) में निर्माणाधीन विश्व का सबसे बड़ा हाइब्रिड रिन्यूएबल पार्क गुजरात को वैश्विक मानचित्र पर एक नई पहचान दे रहा है[20]।

10. सौर ऊर्जा क्षेत्र में प्रमुख भारतीय कंपनियाँ

1. Adani Green Energy Ltd: इसका मार्केट कैप 2.5 से 3 लाख करोड़ रुपये के करीब रहता है। यह खावड़ा (गुजरात) में विश्व का सबसे बड़ा रिन्यूएबल एनर्जी पार्क बना रही है।
2. Tata Power Solar Systems: रूफटॉप और यूटिलिटी-स्केल परियोजनाओं में अग्रणी। टाटा पावर का कुल मार्केट कैप 1.25 लाख करोड़ रुपये से अधिक है।
3. Reliance New Energy Solar: जामनगर में 75,000 करोड़ रुपये के निवेश से गीगा कॉम्प्लेक्स का निर्माण।
4. Waaree Energies: भारत की सबसे बड़ी सोलर पैनल मैन्युफैक्चरिंग और निर्यात कंपनियों में से एक।

11. चुनौतियां और सीमाएं

ग्रिड एकीकरण (Grid Integration): सौर ऊर्जा की रुक-रुक कर होने वाली प्रकृति (Intermittency) के कारण बैटरी ऊर्जा भंडारण प्रणालियों (BESS) की भारी आवश्यकता[25]।

- भूमि अधिग्रहण (Land Acquisition): बड़े प्रोजेक्ट्स के लिए विशाल भूमि की आवश्यकता, जो कृषि भूमि के साथ टकराव उत्पन्न करती है।
- ई-कचरा प्रबंधन (E-Waste Management): 25 वर्ष के जीवनकाल के बाद करोड़ों बेकार पैनलों के रीसाइक्लिंग के लिए ठोस नीति का अभाव[24]।

12. उभरती हुई नवीन अवधारणाएं: कृषिवोल्टाइक, फ्लोटिंग सोलर और अंतरिक्ष सौर ऊर्जा

भूमि अधिग्रहण की समस्या को दूर करने के लिए भारत में कई नवीन अवधारणाएं तेजी से विकसित हो रही हैं:

- कृषिवोल्टाइक (Agrivoltaics): यह एक ऐसी प्रणाली है जिसमें एक ही भूमि का उपयोग कृषि और सौर ऊर्जा उत्पादन दोनों के लिए किया जाता है[26]। इसमें सौर पैनलों को पर्याप्त ऊंचाई पर स्थापित किया जाता है, जिससे नीचे की फसल को आवश्यक धूप भी मिलती रहे और ट्रैक्टर आदि का उपयोग भी सुगमता से हो सके[28]। यह किसानों की आय को दोगुना करने का एक अत्यधिक

वैज्ञानिक और व्यावहारिक मॉडल है।

- फ्लोटिंग सोलर (Floating Solar): इसमें पानी के जलाशयों, झीलों या बांधों की सतह पर सौर पैनल तैरते हुए (Pontoons के सहारे) स्थापित किए जाते हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि पानी की ठंडक (Cooling effect) के कारण पैनलों की दक्षता बढ़ जाती है और साथ ही जलाशय के पानी का वाष्पीकरण (Evaporation) भी कम होता है[27,29]। मध्य प्रदेश के खंडवा जिले में ओंकारेश्वर बांध पर 600 मेगावाट की फ्लोटिंग सौर परियोजना इसका एक उत्कृष्ट उदाहरण है।
- अंतरिक्ष आधारित सौर ऊर्जा (Space-Based Solar Power - SBSP): भविष्य की एक और परिकल्पना अंतरिक्ष में सौर पैनल स्थापित करने की है। पृथ्वी के वायुमंडल के बाहर, बादलों या मौसम का कोई प्रभाव नहीं होता, जिससे 24 घंटे और 365 दिन निरंतर उच्च तीव्रता वाली सौर ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। इस ऊर्जा को माइक्रोवेव (Microwave) या लेज़र (Laser) के माध्यम से पृथ्वी पर स्थित रिसीवर तक प्रेषित करने पर शोध चल रहा है[26]।

13. जीवन चक्र मूल्यांकन और पर्यावरणीय प्रभाव

यद्यपि सौर ऊर्जा को पूर्णतः स्वच्छ माना जाता है, लेकिन अकादमिक दृष्टिकोण से इसका 'जीवन चक्र मूल्यांकन' (LCA) करना आवश्यक है। सौर पैनलों (विशेषकर मोनोक्रिस्टलाइन सिलिकॉन) के निर्माण में सिलिकॉन को पिघलाने और शुद्ध करने के लिए अत्यधिक ऊर्जा (Energy Intensive Process) की खपत होती है[30]।

हालांकि, वैज्ञानिक शोध बताते हैं कि एक मानक सौर पैनल का 'एनर्जी पेबैक टाइम' (Energy Payback Time - EPBT) केवल 1 से 3 वर्ष होता है[31]। इसका तात्पर्य यह है कि एक पैनल अपने निर्माण में लगी कुल ऊर्जा की भरपाई मात्र 1-3 वर्षों के विद्युत उत्पादन में ही कर देता है। इसके पश्चात, अपने शेष 22-24 वर्षों के जीवनकाल में यह जो भी ऊर्जा प्रदान करता है, वह पूरी तरह से कार्बन-मुक्त (Carbon-free) और शुद्ध लाभ (Net Positive) होती है[30,32]। इससे स्पष्ट होता है कि इसका समग्र पर्यावरणीय लाभ इसके निर्माण के दौरान होने वाले उत्सर्जन की तुलना में कहीं अधिक है।

14. सामाजिक-आर्थिक प्रभाव एवं रोजगार सृजन

सौर ऊर्जा केवल एक तकनीकी समाधान नहीं है, बल्कि यह एक प्रमुख सामाजिक-आर्थिक उत्प्रेरक (Catalyst) भी है। अंतर्राष्ट्रीय नवीकरणीय ऊर्जा एजेंसी (IRENA) की रिपोर्ट के अनुसार, भारत का नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र लाखों नए 'हरित रोजगार' (Green Jobs) पैदा कर रहा है। यह रोजगार न केवल कारखानों में विनिर्माण (Manufacturing) क्षेत्र में है, बल्कि स्थानीय स्तर पर स्थापना (Installation), संचालन और रखरखाव (O&M) में भी बड़े पैमाने पर सृजित हो रहा है[24]।

इसके अतिरिक्त, दूरदराज के ग्रामीण और आदिवासी इलाकों में, जहां पारंपरिक ग्रिड का पहुंचना दुर्गम था, वहां 'सौर माइक्रोग्रिड' (Solar Microgrids) ने शिक्षा (रात में पढ़ाई के लिए रोशनी), स्वास्थ्य (दवाओं और टीकों के लिए सौर रेफ्रिजरेटर) और लघु उद्योगों को पुनर्जीवित किया है[27]। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को 'सौर सखी' (Solar Sakhi) जैसे कार्यक्रमों के तहत सौर लैंप बनाने और मरम्मत करने का तकनीकी प्रशिक्षण देकर उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त और स्वतंत्र बनाया जा रहा है।

15. निष्कर्ष

निष्कर्षतः, सौर ऊर्जा केवल एक वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत नहीं है, बल्कि यह भविष्य की वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा

का मुख्य आधार है। फोटोवोल्टिक (PV) तकनीक में प्रथम पीढ़ी के सिलिकॉन सेल से लेकर तीसरी पीढ़ी के पेरोव्स्काइट और कार्बनिक (P3HT:PCBM) सेलों तक की यात्रा विज्ञान की असाधारण उपलब्धि है। भारत ने भादला और पावागढ़ा जैसे विशाल सोलर पार्कों, फ्लोटिंग सोलर प्रोजेक्ट्स और पीएम-कुसुम जैसी अभिनव नीतियों के माध्यम से वैश्विक मंच पर अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति का प्रदर्शन किया है। यद्यपि ई-कचरा प्रबंधन और ग्रिड एकीकरण जैसी चुनौतियां विद्यमान हैं, तथापि अनुसंधान, कृषिवोल्टाइक जैसे नवीन प्रयोगों और हरित रोजगार सृजन के माध्यम से सौर ऊर्जा भारत को एक पूर्ण रूप से ऊर्जा-आत्मनिर्भर (Energy Independent), सतत और विकसित राष्ट्र बनाने में मील का पत्थर साबित होगा।

संदर्भ सूची (References)

1. बेक्वेरल, ए. ई. (1839). मेम्वार सुर ले एफेट्स इलेक्ट्रिक प्रोडुइट्स सुस एल'इन्फ्लुएंस दे रेयॉन्स सोलेयर्स. कोंप्टेस रेंडस दे एल'एकेडमी डेस साइंसेज, 9, 145-149.
2. आइंस्टीन, ए. (1905). उबेर ईनन डाई एरज़ेयुगुंग उंड वेरवांडलुंग देस लिचटेस बेट्रेफेंडेन ह्यूरिस्टिचेन गेसिचट्सपंक्ट. अनालेन डेर फिजिक, 322(6), 132-148.
3. चैपिन, डी. एम., फुलर, सी. एस., एवं पियर्सन, जी. एल. (1954). ए न्यू सिलिकॉन पी-एन जंक्शन फोटोसेल फॉर कन्वर्टिंग सोलर रेडिएशन इनटू इलेक्ट्रिकल पावर. जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजिक्स, 25(5), 676-677.
4. मुस्तफ़ा, ए., ज़ाकिर, ए., और अन्य। (2023)। ए रिव्यू ऑन सोलर एनर्जी पॉलिसी एंड करंट स्टेटस: टॉप 5 कंट्रीज एंड कजाकिस्तान [ग्राफिकल डेटा]। रिसर्चगेट। https://www.researchgate.net/figure/Electricity-generation-by-solar-PV-worldwide-in-view-of-the-top-5-countries_fig1_371113070
5. एडम्स, डब्ल्यू. जी., एवं डे, आर. ई. (1876). द एक्शन ऑफ लाइट ऑन सेलेनियम. प्रोसीडिंग्स ऑफ द रॉयल सोसाइटी ऑफ लंदन, 25(171-178), 113-117.
6. ग्रीन, एम. ए., डनलोप, ई. डी., होहल-एबिंगर, जे., योशिता, एम., कोपिडाकिस, एन., एवं हाओ, एक्स. (2023). सोलर सेल एफिशिएंसी टेबल्स (वर्जन 61). प्रोग्रेस इन फोटोवोल्टिक्स: रिसर्च एंड एप्लिकेशंस, 31(1), 3-16.
7. कोजीमा, ए., तेशिमा, के., शिराई, वाई., एवं मियासाका, टी. (2009). ऑर्गेनोमेटल हैलाइड पेरोव्स्काइट्स एज़ विज़िबल-लाइट सेंसिटाइज़र्स फॉर फोटोवोल्टिक सेल्स. जर्नल ऑफ द अमेरिकन केमिकल सोसाइटी, 131(17), 6050-6051.
8. स्नैथ, एच. जे. (2013). पेरोव्स्काइट्स: द इमर्जेंस ऑफ ए न्यू एरा फॉर लो-कॉस्ट, हाई-एफिशिएंसी सोलर सेल्स. द जर्नल ऑफ फिजिकल केमिस्ट्री लेटर्स, 4(21), 3623-3630.
9. डेनलर, जी., शार्बर, एम. सी., एवं ब्राबेक, सी. जे. (2009). पॉलीमर-फुलरीन बल्क-हेटराजंक्शन सोलर सेल्स. एडवांस्ड मटेरियल्स, 21(13), 1323-1338. (P3HT:PCBM तकनीक).
10. यिन, डब्ल्यू. जे., शी, टी., एवं यान, वाई. (2014). अनयूज़ुअल डिफेक्ट फिजिक्स इन CH3N_H3PbI3 पेरोव्स्काइट सोलर सेल एब्जॉर्बर. एप्लाइड फिजिक्स लेटर्स, 104(6), 063903.
11. लू, एल., झेंग, टी., वू, क्यू., श्नाइडर, ए. एम., झाओ, डी., एवं यू, एल. (2015). रीसेंट एडवांसेज इन बल्क हेटराजंक्शन पॉलीमर सोलर सेल्स. केमिकल रिव्यूज, 115(23), 12666-12731.

12. साहली, एफ., एवं अन्य. (2018). फुली टेक्स्चर्ड मोनोलिथिक पेरोव्स्काइट/सिलिकॉन टैंडेम सोलर सेल्स विद 25.2% पावर कन्वर्जन एफिशिएंसी. नेचर मटेरियल्स, 17(9), 820-826.
13. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE), भारत सरकार. (2025-2026). एनुअल रिपोर्ट (वार्षिक रिपोर्ट). नई दिल्ली: एम.एन.आर.ई.
14. केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण (CEA). (2026). ऑल इंडिया इंस्टॉल्ड कैपेसिटी ऑफ पावर स्टेशंस (अखिल भारतीय स्थापित क्षमता). विद्युत मंत्रालय, भारत सरकार.
15. नीति (NITI) आयोग. (2022). रिपोर्ट ऑन इंडियाज़ रिन्यूएबल एनर्जी टारगेट्स एंड पॉलिसीज़. भारत सरकार.
16. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE). (2019). गाइडलाइंस फॉर इंप्लीमेंटेशन ऑफ प्रधानमंत्री किसान ऊर्जा सुरक्षा एवं उत्थान महाभियान (पीएम-कुसुम) स्कीम.
17. प्रेस सूचना ब्यूरो (PIB). (2024). पीएम सूर्य घर: मुफ्त बिजली योजना. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय.
18. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE). (2021). प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव (पीएलआई) स्कीम फॉर नेशनल प्रोग्राम ऑन हाई एफिशिएंसी सोलर पीवी मॉड्यूल्स.
19. राजस्थान अक्षय ऊर्जा निगम लिमिटेड (RRECL). (2019). राजस्थान सोलर एनर्जी पॉलिसी 2019. राजस्थान सरकार.
20. गुजरात ऊर्जा विकास एजेंसी (GEDA). (2023). गुजरात रिन्यूएबल एनर्जी पॉलिसी. गुजरात सरकार.
21. इंटरनेशनल सोलर एलायंस (ISA). (2020). टुवर्ड्स 1000 GW ऑफ सोलर एनर्जी: फ्रेमवर्क एंड विजन.
22. इंटरनेशनल रिन्यूएबल एनर्जी एजेंसी (IRENA). (2024). रिन्यूएबल कैपेसिटी स्टैटिस्टिक्स 2024. आबू धाबी: इरेना.
23. इंटरनेशनल एनर्जी एजेंसी (IEA). (2023). वर्ल्ड एनर्जी आउटलुक 2023. पेरिस: आई.ई.ए.
24. इंटरनेशनल रिन्यूएबल एनर्जी एजेंसी (IRENA). (2023). रिन्यूएबल एनर्जी एंड जॉब्स: एनुअल रिव्यू.
25. वर्ल्ड बैंक ग्रुप. (2022). स्केलिंग अप सोलर: रीवा अल्ट्रा मेगा सोलर पावर प्रोजेक्ट. वाशिंगटन, डीसी.
26. दिनेश, एच., एवं पियर्स (Pearce), जे. एम. (2016). द पोटेंशियल ऑफ एग्रीवोल्टाइक सिस्टम्स. रिन्यूएबल एंड सस्टेनेबल एनर्जी रिव्यूज, 54, 299-308.
27. साहू, ए., यादव, एन., एवं सुधाकर, के. (2016). फ्लोटिंग फोटोवोल्टिक पावर प्लांट: ए रिव्यू. रिन्यूएबल एंड सस्टेनेबल एनर्जी रिव्यूज, 66, 815-824.
28. ग्लेसर, पी. ई. (1968). पावर फ्रॉम द सन: इट्स फ्यूचर. साइंस, 162(3856), 857-861.
29. गोर्जियन, एस., एवं अन्य. (2022). टेक्नोलॉजिकल एडवांसमेंट्स एंड रिसर्च प्रॉस्पेक्ट्स ऑफ इनोवेटिव एग्रीवोल्टाइक सिस्टम्स. एप्लाइड एनर्जी, 318, 119278.
30. पेंग, जे., लू, एल., एवं यांग, एच. (2013). रिव्यू ऑन लाइफ साइकिल असेसमेंट ऑफ एनर्जी पेबैक एंड ग्रीनहाउस गैस एमिशन ऑफ सोलर फोटोवोल्टिक सिस्टम्स. रिन्यूएबल एंड सस्टेनेबल एनर्जी रिव्यूज, 19, 255-274.

31. फथेनाकिस, वी. एम. (2000). एंड-ऑफ-लाइफ मैनेजमेंट एंड रीसाइक्लिंग ऑफ पीवी मॉड्यूल्स. एनर्जी पॉलिसी, 28(14), 1051-1058.
32. काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवायरनमेंट एंड वाटर (CEEW). (2023). मैनेजिंग इंडियाज़ पीवी ई-वेस्ट: पॉलिसीज़ एंड स्ट्रेटेजीज़. नई दिल्ली.
33. गुलेरिया, ए., एवं जैन, पी. (2023). सोशियो-इकोनॉमिक इम्पैक्ट्स ऑफ सोलर माइक्रोग्रिड्स इन रूरल इंडिया: ए केस स्टडी अप्रोच. एनर्जी फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट, 72, 112-125.

भाषा विज्ञान के विकास में संस्कृत का अवदान

- डॉ. जितेंद्र कुमार भगत

सार

भारत में भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन की परंपरा बहुत पुरानी है जो गहन चिंतन, मेधा और वैज्ञानिक चेतना के सहज सामन्जस्य से उपजी है। यह कहना असंगत नहीं होगा कि आधुनिक भाषा विज्ञान की नींव संस्कृत व्याकरण और भारतीय भाषा-चिंतन पर टिकी है। भाषा विज्ञान एक स्वतंत्र विज्ञान है जिसे 19वीं सदी में मान्यता मिलना आरंभ हुआ। यास्क, पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि और भर्तृहरि जैसे आचार्यों ने ध्वनि (Phonetics), रूप (Morphology), वाक्य विन्यास (Syntax) और अर्थ विज्ञान (Semantics) के जो सिद्धांत प्रतिपादित किए, वे ही आगे चलकर पाश्चात्य भाषा विज्ञान के लिए मार्गदर्शक बने। पाणिनि से पूर्व 'शिक्षा' और 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों में ध्वनि का वैज्ञानिक वर्गीकरण कर लिया गया था। यह आधुनिक 'इंटरनेशनल फोनेटिक अल्फाबेट' (IPA) की वैज्ञानिक क्रम व्यवस्था के काफी नजदीक है, जहाँ उच्चारण स्थान और प्रयत्न का विभाजन संस्कृत के क्रम से मेल खाता है। 18वीं सदी के अंत में सर विलियम जोंस द्वारा 'अभिज्ञान शाकुंतलम' का अनुवाद और "बंगाल एशियाटिक सोसाइटी" की स्थापना (1784) ने पूर्व और पश्चिम के बीच एक वैचारिक पुल का निर्माण किया। 1786 में जोंस ने उद्घोषणा की कि संस्कृत, ग्रीक और लैटिन का एक ही 'सामान्य पूर्वज' है। उन्होंने स्पष्ट किया कि संस्कृत ग्रीक से अधिक पूर्ण और लैटिन से अधिक समृद्ध है। इस विचार ने 'भारोपीय भाषा परिवार' की आधारशिला रखी और यूरोप में 'तुलनात्मक' तथा 'ऐतिहासिक भाषा विज्ञान' को जन्म दिया। वर्तमान में संगणकीय भाषा विज्ञान (Computational Linguistics) के अंतर्गत कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और 'नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग' (NLP) में संस्कृत अपनी विशिष्टता सिद्ध कर रही है। मशीन अनुवाद और वॉयस असिस्टेंट के संचालन में NLP एक पुल की तरह कार्य करता है, लेकिन अंग्रेजी जैसी भाषाओं में यह अर्थगत अस्पष्टता (Semantic Ambiguity) के कारण भ्रमित हो जाता है। इसके विपरीत, संस्कृत एक

‘विभक्ति-प्रधान’ भाषा है और इसका ‘कारक सिद्धांत’ NLP के लिए एक सटीक रास्ता तैयार करता है।

बीज शब्द: स्फोटवाद, ‘निरूक्त’, व्युत्पत्ति विज्ञान (Etymology), अष्टाध्यायी, महेश्वर सूत्र और प्रत्याहार, सर विलियम जोंस, नोम चॉम्स्की, ग्रिम का नियम, इंटरनेशनल फोनेटिक अल्फाबेट (IPA), मेटा-लैंग्वेज, नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग (NLP), कॉन्टेक्स्ट-फ्री ग्रामर (CFG)।

भारतीय दर्शन में व्याकरण को वेदांग माना गया है। वैदिक ज्ञान को समझने के लिए उसकी भाषा को समझना एक चुनौती था, इसलिए छह सहायक विषयों में शिक्षा, कल्प, निरुक्त, छंद, ज्योतिष के साथ-साथ व्याकरण भी एक महत्वपूर्ण विषय था। इसमें भाषा को केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं माना गया, बल्कि एक वैज्ञानिक संरचना के रूप में देखा गया जबकि पश्चिम में भाषा का अध्ययन दर्शन और तर्कशास्त्र तक सीमित था। संस्कृत विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। यह एकमात्र ऐसी भाषा है जिसका व्याकरणिक ढांचा बेहद सुगठित है और इसकी शुद्धता एवं सटीकता को देखते हुए इसको गणितीय आकलन के समकक्ष माना जाता है।

अंग्रेजों के भारत आगमन के बाद पूर्व और पश्चिम के बीच एक वैचारिक- बौद्धिक सेतु निर्मित होने लगा। भारत की प्राचीन और समृद्ध साहित्यिक धरोहर धीरे धीरे भौगोलिक सीमाओं से बाहर निकलकर पूरी दुनिया के सामने प्रकट होने लगी। संस्कृत की महान साहित्यिक धरोहर से पूरी दुनिया का परिचित तब हुआ जब सर विलियम जोंस ने कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम का अनुवाद (The Fatal Ring,1789) में किया। जर्मन कवि गेटे इससे बहुत प्रभावित हुए। संस्कृत साहित्य की इस विरासत ने प्राचीन ग्रीक साहित्य के वर्चस्व को कम कर दिया। सर विलियम जोंस ने “बंगाल एशियाटिक सोसाइटी” की स्थापना (1784) की। उसके तीसरे वार्षिक अधिवेशन (1786) में जोंस का भाषण मील का पत्थर साबित हुआ:

“संस्कृत भाषा की प्राचीनता चाहे जो भी हो, इसकी संरचना अद्भुत है। यह ग्रीक से अधिक पूर्ण है, लैटिन से अधिक समृद्ध है, और दोनों से अधिक उत्कृष्ट रूप से परिष्कृत है। फिर भी इन तीनों भाषाओं की क्रियाओं के मूल (Roots) और व्याकरण के रूपों में इतनी गहरी समानता है कि यह कोई संयोग नहीं हो सकता। कोई भी भाषाविज्ञानी इन तीनों का अध्ययन करने के बाद यह माने बिना नहीं रह सकता कि ये सभी एक ही ‘सामान्य पूर्वज’ (Common Ancestor) से उत्पन्न हुई हैं, जो शायद अब अस्तित्व में नहीं है।”[1]

इस कथन ने ‘भारोपीय भाषा परिवार’ की आधारशिला रखी। भाषा विज्ञान के इतिहास में यह एक बड़ा बदलाव लेकर आया। जोंस का यह विचार कि संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, गोथिक, सेल्टिक और पुरानी फारसी एक ही परिवार का हिस्सा हैं, आज ‘भारोपीय भाषा परिवार’ के मूल सिद्धांत के रूप में जाना जाता है। उन्होंने घोषणा की कि संस्कृत, ग्रीक और लैटिन का एक ही पूर्वज है। इससे पहले हिब्रू को सभी भाषाओं का स्रोत माना जाता था। इस तरह इन विचारों से भाषा विज्ञान की दो नई शाखाओं का जन्म हुआ। तुलनात्मक भाषा विज्ञान (Comparative Linguistics) के अंतर्गत शब्दों के उत्पत्ति और उसकी तुलना शुरू हुई, जैसे संस्कृत का ‘मातृ’, लैटिन का ‘मातेर’, और अंग्रेजी का ‘मदर’ एक ही स्रोत से उत्पन्न हैं। इसी तरह संस्कृत का ‘पितृ’, लैटिन का ‘पातेर’ और अंग्रेजी का ‘फादर’ भी। इससे स्पष्ट हुआ कि भाषाएँ आपस में कहीं न कहीं जुड़ी हुई हैं। ऐतिहासिक भाषा विज्ञान (Historical Linguistics) के अंतर्गत मूल भाषा से विकसित होने वाली अलग-अलग भाषाओं की उत्पत्ति और विकास का अध्ययन होने लगा। इसी के अंतर्गत ध्वनियों में होने वाले परिवर्तन को भी समझा गया। जर्मन विद्वान जैकब ग्रिम (Jacob Grimm) ने 1822 में यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि मातृ, मातेर, मदर, मुटर (Mutter) जैसे शब्द एक ही अर्थ रखते हैं। यह नियम ही ग्रिम का नियम (Grimm’s Law) कहलाया। उन्होंने बताया कि शब्दों का यह बदलाव यादृच्छिक नहीं है और इसमें मुख्यत: तीन नियम (Sound Shifts) लागू होते हैं:

नियम 1: Voiceless Stops का Voiceless Fricatives में बदलना।

अंग्रेजी में प (P), त (T), और क (K) बदल गया फ (F), थ (Th), और ह (H) में।

नियम 2: Voiced Stops का Voiceless Stops में बदलना।

अंग्रेजी में ब (B), द (D), और ग (G) बदल गया प (P), त (T), और क (K) में।

नियम 3: महाप्राण ध्वनियाँ (Voiced Aspirated) बदल गईं अल्पप्राण (Voiced Stops) में।

अंग्रेजी में भ (Bh), ध (Dh), और घ (Gh) से 'ह' गायब हो गया और वे ब (B), द (D), और ग (G) बन गए।

इस तरह संस्कृत के प्रति भाषाविदों का रूझान बढ़ा और इसके सुगठित ढॉंचे ने सबको काफी प्रभावित किया। इस तरह यह कहना असंगत नहीं है कि संस्कृत केवल एक भाषा नहीं, बल्कि भाषा विज्ञान की प्रयोगशाला रही है। 18वीं और 19वीं शताब्दी में संस्कृत के संपर्क ने पश्चिमी विद्वानों की आंखें खोल दीं।

भारतीय भाषा विज्ञान का ऐतिहासिक परिदृश्य

संस्कृत व्याकरण का विकास अचानक नहीं हुआ। यह एक लंबी परंपरा का परिणाम है जिसे हम मुख्य रूप से तीन चरणों में देख सकते हैं: प्रातिशाख्य और शिक्षा साहित्य (Phonetics and Phonology) ; यास्क का निरुक्त और व्युत्पत्ति विज्ञान (Etymology) तथा पाणिनि का अष्टाध्यायी।

पाणिनि से पूर्व वेदों के शुद्ध उच्चारण के लिए 'शिक्षा' और 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों की रचना हुई। यह वही समय था जब ऋषियों ने उच्चारण स्थान (कंठ, तालु, मूर्धा, दंत, ओष्ठ), उच्चारण प्रयत्न (अल्पप्राण, महाप्राण, घोष, अघोष) का अन्वेषण कर लिया था। ध्वनि का उत्पादन शरीर के किस अंग से होता है, ध्वनि उत्पन्न करते समय श्वास और नाद की क्या भूमिका रहती है, इन सभी का वैज्ञानिक वर्गीकरण किया गया। भाषा विज्ञान में हम जिसे 'International Phonetic Alphabet' (IPA) के नाम से जानते हैं वह संस्कृत वर्णमाला की वैज्ञानिक क्रम व्यवस्था के काफी नजदीक है। अंग्रेजी वर्णमाला यादृच्छिक क्रम में है यानी A के बाद B, B के बाद C क्यों आता है, इसका कोई वैज्ञानिक कारण नहीं है। 19वीं सदी के अंत में पाश्चात्य भाषाविदों ने IPA विकसित किया था। इसके विकास में उच्चारण स्थान, उच्चारण प्रयत्न तथा स्वर-व्यंजन का पृथक विभाजन का ध्यान रखा गया, जो संस्कृत में उस क्रम से मेल खाता है, जहॉं ध्वनि गले (कंठ) से शुरू होकर होठों (ओष्ठ) तक बाहर की ओर आती है।

Velar (k, g, n) = क-वर्ग (क, ख, ग, घ, ङ) : कंठ्य (गले से)

Palatal (t, d, n) = च-वर्ग (च, छ, ज, झ, ञ) : तालव्य (तालु से)

Retroflex (t, d, n) = ट-वर्ग (ट, ठ, ड, ढ, ण) : मूर्धन्य (कठोर तालु से)

Dental / Alveolar (t d n) = त-वर्ग (त थ द ध न) : दंत्य (दांतों से)

Bilabial (p, b, m) = प-वर्ग (प, फ, ब, भ, म) : ओष्ठ्य (होठों से)

इसी तरह संस्कृत वर्णमाला उच्चारण प्रयत्न में घोषत्व और प्राणत्व के आधार पर विभाजन पाया जाता है जिनका क्रम महज संयोग नहीं है बल्कि सॉंस और गूँज पर आधारित है। IPA में भी यही काम करते हैं:

- अघोष, अल्पप्राण (Unvoiced, Unaspirated) = IPA: /k/, /t/, /p/= प्रथम वर्ण (क च ट त प)
- अघोष, महाप्राण (Unvoiced, Aspirated) = IPA: /k^h/, /t^h/, /p^h/ = द्वितीय वर्ण (ख छ ठ थ फ)
- सघोष, अल्पप्राण (Voiced, Unaspirated) = IPA: /g/, /d/, /b/= तृतीय वर्ण (ग ज ड द ब)
- सघोष, महाप्राण (Voiced, Aspirated) = IPA: /g^h/, /d^h/, /b^h/= चतुर्थ वर्ण (घ झ ढ ध भ)
- नासिक्य (Nasal) = IPA: /n/, /n/, /m/= पंचम वर्ण (ङ ञ ण न म)

इन्हें 'स्पर्श' व्यंजन कहा जाता है और IPA चार्ट में इन्हें Plosive (स्पर्श) और Nasal (नासिक्य) के अंतर्गत पाते हैं।

जहाँ तक स्वर और व्यंजन का प्रश्न है, अंग्रेजी वर्णमाला में उनका क्रम बेतरतीब है। A E I O और U, अंग्रेजी के ये 6 स्वर व्यंजनों के बीच में आ जाते हैं और व्यंजनों का क्रम भी वैज्ञानिक नहीं है। संस्कृत में सभी स्वरों का क्रम उच्चारण समय पर आधारित है और उसके बाद व्यंजनों को रखा गया है। इसी के आधार पर IPA में स्वरों को उच्चारण में लगने वाले समय, जीभ और ओठों की स्थिति के आधाार पर एक चतुर्भुज चार्ट बनाकर प्रस्तुत किया गया है।

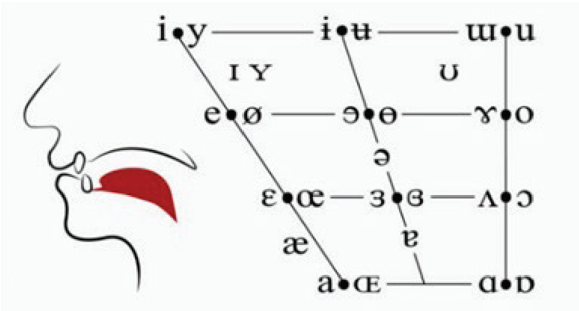

(चित्र गूगल से साभार)

इसमें दर्शाया गया है कि अलग-अलग स्वरों को उच्चरित करते समय मुख में जीभ की स्थिति क्या होती है, बोलते समय मुंह कितना खुलता है या जीभ तालु के कितने पास होती है और जीभ का कौन सा हिस्सा सक्रिय होता है। इस तरह इसमें पाणिनीय संस्कृत वर्णमाला का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

यास्क रचित 'निरूक्त'(लगभग 700 ई.पू.) को विश्व का प्रथम व्यवस्थित व्युत्पत्ति विज्ञान (Etymology) माना जाता है। इसमें यास्क ने बताया कि शब्द कैसे बनते हैं और उसका इतिहास क्या है। आज जिसे हम संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग और निपात के नाम से जानते हैं, यह यास्क का ही दिया हुआ है। इन्होंने शब्दों को चार वर्गों में बांटा— नाम (Noun), आख्यात (Verb), उपसर्ग (Preposition) और निपात (Particle)। यास्क का यह सिद्धांत क्रांतिकारी सिद्ध हुआ जिसमें कहा गया कि "सभी संज्ञा शब्द धातुओं (क्रिया मूल) से बनते हैं।" जैसे 'लेखक' (Noun) शब्द बनने की प्रक्रिया समझें तो ज्ञात होगा कि लेखक 'लिखने' (Verb) का काम करता है। इस तरह यहाँ 'लिख' धातु (Root) है। आधुनिक भाषा विज्ञान में 'रूट वर्ड' (Root word) की अवधारणा इसी पर आधारित है। दूसरे शब्दों में इसे हम रूपिम (Morpheme) के नाम से जानते हैं जो भाषा की लघुतम अर्थवान ईकाई है। यास्क ने शब्दों को छोटे-छोटे 'अर्थपूर्ण टुकड़ों' (धातु + प्रत्यय) में तोड़कर समझाया। आधुनिक भाषा विज्ञान जिन नियमों पर टिका है, उन्हें यास्क ने बहुत समय पहले ही बता दिया था।

पाणिनि ने आम बोलचाल की संस्कृत के नियम को समझाने के लिए अपनी एक बिल्कुल नई 'कृत्रिम भाषा' (मेटा लैग्वेज) का निर्माण किया। उन्होंने 'महेश्वर सूत्र' बनाए। उन्होंने 'अच्' (सभी स्वर), 'हल्' (सभी व्यंजन), 'इक्', 'यण्' जैसे शब्द (प्रत्याहार) गढ़े। आम बोलचाल की संस्कृत में 'अच्' या 'हल्' का कोई मतलब नहीं होता। ये केवल पाणिनि के 'कोड वर्ड' हैं जो व्याकरण के नियम समझाने के लिए बनाए गए थे। महत्वपूर्ण बात यह है कि आज की प्रोग्रामिंग दुनिया 'मेटा-लैंग्वेज' पर ही टिकी है। HTML या XML ये दोनो भी मेटा-लैंग्वेज हैं। ये सीधे तौर पर कोई सॉफ्टवेयर नहीं बनातीं, बल्कि ये कंप्यूटर को बताती हैं कि किसी वेबपेज पर टेक्स्ट या इमेज को कैसे दिखाना है। पाणिनि के अष्टाध्यायी (लगभग 500 ई.पू.) में भाषा को 'प्रकृति' (Root) और 'प्रत्यय' (Suffix) के योग से बनने वाले समीकरणों के रूप में देखा गया है। उदाहरण:

गम् (धातु) + तव्यत् (प्रत्यय) = गन्तव्य ('म' का 'न' हो जाना)

वच् (धातु) + तव्यत् (प्रत्यय) = वक्तव्य ('च' का 'क' हो जाना)

त्यज् (धातु) + तव्यत् (प्रत्यय) = तक्तव्य ('ज' का 'क' हो जाना)

पाणिनि का व्याकरण दिखाता है कि कैसे एक ही 'तव्यत्' प्रत्यय अलग-अलग धातुओं के साथ जुड़कर एल्गोरिद्मिक (Algorithmic) तरीके से शब्द निर्माण करता है। जैसे 'दृश्' से 'द्रष्टव्य' बनने में जो ध्वनि परिवर्तन (संधि नियम) होते हैं, वे यादृच्छिक (Random) नहीं हैं, बल्कि मानव मुख के उच्चारण स्थानों (Places of articulation) के वैज्ञानिक नियमों पर आधारित हैं। यह विश्लेषण आधुनिक 'मॉर्फीम' (Morpheme) सिद्धांत का आधार है जिसका अध्ययन संरचनात्मक भाषा विज्ञान (Structural Linguistics) के अंतर्गत किया जाता है।

पाणिनि ने भाषा विज्ञान को बहुत दूर तक प्रभावित किया। जैसा कि प्रसिद्ध भाषाविद लियोनार्ड ब्लूमफील्ड ने अपनी पुस्तक 'लैंग्वेज' में स्वीकार किया है, पाणिनि का व्याकरण "मानवीय बुद्धि का महानतम स्मारक" है।[2] आधुनिक भाषा वैज्ञानिक नोम चॉम्स्की (Noam Chomsky) ने अपनी 'जेनेरेटिव ग्रामर' (Generative Grammar) के नियमों को ठीक उसी तरह प्रतिपादित किया, जैसे पाणिनि ने अष्टाध्यायी में। 1950 के दशक में नोम चॉम्स्की ने कॉन्टेक्स्ट-फ्री ग्रामर (CFG) की अवधारणा रखी थी। यह अवधारणा भी अष्टाध्यायी के सूत्रों से प्रेरित हैं जिसमें 'संदर्भ-मुक्त' प्रतिस्थापन (Replacement) का तर्क प्रस्तुत किया गया है। CFG गणितीय नियमों का समूह है जिससे तय होता है कि किसी भाषा में वाक्यों या कोड का निर्माण किस तरह किया जाएगा। CFG के माध्यम से ही C++, Java या Python में कोड की जांच होती है। चॉम्स्की ने यह स्वयं स्वीकार किया है कि आधुनिक भाषा विज्ञान पाणिनि का ऋणी है।[3] पाणिनि ने लगभग 4000 सूत्रों में पूरी भाषा को बांध दिया। पाणिनि के सूत्र एक कंप्यूटर प्रोग्राम की तरह काम करते हैं। यदि इनपुट सही है, तो आउटपुट (शब्द/वाक्य) व्याकरणिक रूप से शुद्ध होगा।

पाणिनि के पश्चात कात्यायन, पतंजलि और भर्तृहरि ने व्याकरण की भारतीय परंपरा को और अधिक ऊंचाइयों पर पहुँचाया। पतंजलि ने महाभाष्य में पाणिनि के सूत्रों की दार्शनिक व्याख्या की। उन्होंने 'सिम्युलेशन' (किसी वास्तविक घटना या प्रक्रिया की नकली प्रतिकृति बनाना) की तरह व्याकरण के नियमों को परखा। इसी तरह भर्तृहरि (5वीं शताब्दी) ने 'वाक्यपदीय' में भाषा के दर्शन पर विचार किया। स्फोटवाद यह उनका सबसे मौलिक योगदान है।

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते।।[4]

-वाक्यपदीय (ब्रह्मकांड)
श्लोक संख्या: 1.123 (प्रथम कांड, श्लोक 123)

इसका अर्थ यह है कि संसार में ऐसा कोई ज्ञान/विचार नहीं है जो शब्द के बिना संभव हो। समस्त ज्ञान शब्द से ही प्रकाशित होता है। उन्होंने प्रश्न उठाया— "अर्थ कहाँ रहता है? ध्वनि में या मस्तिष्क में?" स्फोट वह इकाई है जो ध्वनियों के क्रम से मस्तिष्क में स्फुटित होती है और अर्थ का बोध कराती है। इस प्रकार, भाषा केवल बोलने का साधन नहीं, बल्कि सोचने (Cognition) का आधार है। यह आधुनिक 'Cognitive Linguistics' (संज्ञानात्मक भाषा विज्ञान) और 'साइन और सिग्निफायर' (Sign and Signifier) के सिद्धांत के बहुत निकट है। संज्ञानात्मक भाषाविज्ञान (Cognitive Linguistics) में मानव मन की संज्ञानात्मक क्षमताओं को भाषा से जोड़कर देखा जाता है और इस प्रकार यह भाषा की संरचना और अर्थ को समझने का प्रयास करता है।

इसी प्रकार आधुनिक भाषा विज्ञान के जनक माने जाने वाले सस्यूर को संस्कृत की स्पष्ट संरचना ने

सरंचनावाद (Structuralism) की ओर प्रेरित किया। उन्होंने 'Sign' (संकेत), 'Signifier' (संकेतक), और 'Signified' (संकेतित) का सिद्धांत दिया। इसके मूल में भी स्फोट सिद्धांत ही है। इन्होंने बताया कि भाषा में हर संकेत (sign) उच्चरित होनेवाले शब्द और उसकी मानसिक संकल्पना से मिलकर बनता है। यह सिद्धांत सांकेतिकी (semiotics) और संरचनावाद (structuralism) का आधार बना। सांकेतिकी (सेमिओटिक्स) में संकेतों और प्रतीकों के उपयोग का अध्ययन किया जाता है।

संस्कृत व्याकरण में निहित तर्क, गणित और नियम उसे खास बनाते हैं। संगणकीय भाषा विज्ञान (Computational Linguistics) में संस्कृत की इसी विशिष्टता ने ध्यान आकृष्ट किया। संगणकीय भाषा विज्ञान के अंतर्गत कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और 'नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग' (NLP) की चर्चा होती है। NLP कंप्यूटर को इंसानों की तरह भाषा पढ़ने, सुनने, समझने और उसका तर्कपूर्ण उत्तर देने में सक्षम बनाती है। वॉयस असिस्टेंट (Voice Assistants) के रूप में एलेक्सा, सीरी, गूगल असिस्टेंस से हम सभी परिचित हैं, उसकी शक्ति और सीमाओं से भी। कंप्यूटर की मशीनी भाषा केवल '0' और '1' की भाषा (बाइनरी) समझती है, जबकि हम शब्दों और वाक्यों में बात करते हैं। इन दोनों के बीच NLP एक पुल की तरह कार्य करता है। मशीनी अनुवाद के अंतर्गत गूगल ट्रांस्टलेट जैसे टूल भी NLP तकनीक का उपयोग करते हैं। बैंकिंग सेक्टर में, ट्रैवेज एप्लिकेशन में और अन्य सर्विस सेक्टर में एआई चैटबॉट का प्रयोग कई सालों से हो रहा है, जहाँ आप कस्टमर केयर प्रतिनिधि से सीधे बात करने से पहले चैटबॉट से बात करते हैं। स्पैम फ़िल्टर और ऑटो-करेक्शन भी NLP का ही हिस्सा है। लेकिन इसमें अभी और भी काम होना बाकी है। अनुवाद सटीक नहीं होते या काम की फाइल स्पैम में चली जाती है। अनावश्यक ऑटो करेक्शन से शर्मिंदगी उठानी पड़ती है, एक रोचक उदारहण देखें।

I will bring the Snaks for your birthday.

ऑटो करेक्शन ने Snaks को snacks (नाश्ता) के स्थान पर snakes (सॉप) लिख दिया।

I will bring the snakes for your birthday.

इस तरह हम पाते हैं कि ऑटो-करेक्शन (NLP) के पास इंसानों जैसी समझ नहीं है, वह फिलहाल संदर्भों को उठा पाने में कई जगह चूक जाता है। इस अर्थगत अस्पष्टता को NLP के अंतर्गत 'Semantic Ambiguity' के रूप में देखते हैं। एक और उदाहरण देखते हैं-

मैंने भागते हुए चोर को पकड़ा।

इस वाक्य से दो अर्थ निकलते हैं:

पहला अर्थ: वह चोर जो भाग रहा था, मैंने उसे पकड़ लिया।

दूसरा अर्थ: मैं भागा और चोर को पकड़ लिया।

अर्थ की इस अस्पष्टता से कंप्यूटर भ्रमित हो जाता है। संस्कृत में इस तरह की समस्या का निदान है। वह एक 'विभक्ति-प्रधान' (Inflectional) भाषा है। यहाँ वाक्य में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द का स्थान और कार्य उसके अंत में लगी विभक्ति से निर्धारित होता है, न कि वाक्यों के क्रम से। इन शब्दों को किसी भी क्रम में रखें, वह अपना अर्थ बनाए रखेगा। संस्कृत का 'कारक सिद्धांत' (Karaka Theory) NLP के लिए एक रास्ता तैयार करता है। 1985 में नासा के शोधकर्ता रिक ब्रिग्स[5] ने एक पेपर प्रकाशित किया था "Sanskrit & Artificial Intelligence"। उन्होंने तर्क दिया कि संस्कृत की वाक्य संरचना (Syntax) इतनी तार्किक और नियमबद्ध है कि यह कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए सबसे उपयुक्त प्राकृतिक भाषा हो सकती है।

संस्कृत की ध्वन्यात्मक वैज्ञानिकता ने भी ध्यान आकर्षित किया। पश्चिमी लिपियों (जैसे रोमन) में उच्चारण और लेखन में अंतर होता है (जैसे 'But' और 'Put'), जबकि संस्कृत में "जो बोला जाता है, वही लिखा जाता

है।” इसने पश्चिम को ‘फोनेटिक्स’ (Phonetics) के अध्ययन के लिए प्रेरित किया।

निष्कर्ष:

स्पष्ट है कि पाणिनि के सूत्र केवल रटने वाले नियम नहीं, बल्कि सटीक ‘प्रोग्रामिंग कोड’ हैं। आधुनिक कंप्यूटर विज्ञान और औपचारिक भाषा सिद्धांत (Formal Language Theory) में ‘कॉन्टेक्स्ट-फ्री ग्रामर’ (CFG) एक आधारभूत अवधारणा है, जिसका श्रेय मुख्य रूप से नोम चॉम्स्की (1950 के दशक) को दिया जाता है, किन्तु ईसा पूर्व 5वीं शताब्दी में महर्षि पाणिनि द्वारा रचित ‘अष्टाध्यायी’ में CFG के सिद्धांतों की भूमिका रची जा चुकी थी। पाणिनि ने ‘महेश्वर सूत्रों’ के माध्यम से जो ‘प्रत्याहार’ (जैसे- अच्, हल्, यण्) बनाए, वे वास्तव में आधुनिक कोडिंग के ‘वेरिएबल्स’ (Variables) हैं। इस लिए यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि पाणिनि विश्व के प्रथम ‘सॉफ्टवेयर इंजीनियर’ थे। प्रसिद्ध इतिहासकार ए.एल. बाशम ने अपनी कालजयी कृति ‘द वंडर दैट वाज़ इंडिया’ में लिखा है-

“यद्यपि प्राचीन भारत में अन्य विज्ञानों का विकास हुआ, परंतु भाषा विज्ञान (Linguistics) ही वह क्षेत्र था जिसमें भारतीय बुद्धि ने गणितीय पूर्णता और वैज्ञानिक विश्लेषण का चरम स्तर प्राप्त किया।”[6]

बाशम का यह कथन रेखांकित करता है कि महर्षि पाणिनि और उनके उत्तरवर्ती आचार्यों ने भाषा को एक ‘गणितीय समीकरण’ के रूप में देखा। आज जब हम ‘नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग’ (NLP) के लिए एल्गोरिदम तैयार करते हैं, तो हम अनजाने में उसी ‘गणितीय पूर्णता’ का अनुसरण कर रहे होते हैं जिसकी नींव अष्टाध्यायी में रखी गई थी। संस्कृत की प्रासंगिकता भाषा विज्ञान के अनुसंधान कार्यों में निर्विवाद है। संस्कृत ने उच्चारण (Phonetics) से लेकर अर्थ (Semantics) तक हर पहलू का वैज्ञानिक मानकीकरण किया। अतः, संस्कृत केवल भारत की धरोहर नहीं, बल्कि संपूर्ण विश्व के भाषा विज्ञान की आधारशिला है। भाषा विज्ञान के वैश्विक इतिहास में संस्कृत का स्थान केवल एक ‘प्राचीन भाषा’ का नहीं, बल्कि एक ‘वैज्ञानिक प्रवर्तक’ का है। संस्कृत व्याकरण की इसी तार्किकता ने आधुनिक भाषा विज्ञान (Modern Linguistics) को जन्म दिया और आज यह ‘कृत्रिम बुद्धिमत्ता’ (AI) के युग में पुनः अपनी प्रासंगिकता सिद्ध कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. तिवारी, भोलानाथ. भाषा विज्ञान. नई दिल्ली: किताबघर प्रकाशन, 1951.
2. शर्मा, देवेन्द्रनाथ. भाषा विज्ञान की भूमिका. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन, 1966. अंग्रेजी ग्रंथ एवं शोध पत्र:
3. Basham, A. L. The Wonder That Was India. New Delhi: Rupa & Co., 2004.
4. Briggs, R. Knowledge Representation in Sanskrit and Artificial Intelligence. AI Magazine, 6(1), 1985. https://ojs.aaai.org/aimagazine/index.php/aimagazine/article/view/466
5. Jones, W. The Works of Sir William Jones (Vol. 3). London: John Stockdale and John Walker, 1807.

संदर्भ सूची

[1] “The Sanscrit language, whatever be its antiquity, is of a wonderful structure; more perfect than the Greek, more copious than the Latin, and more exquisitely

refined than either, yet bearing to both of them a stronger affinity, both in the roots of verbs and the forms of grammar, than could possibly have been produced by accident; so strong indeed, that no philologer could examine them all three, without believing them to have sprung from some common source, which, perhaps, no longer exists..." Jones, W. (1807). The Works of Sir William Jones (Vol. 3). London: John Stockdale and John Walker, p. 34.

[2] ब्लूमफील्ड, लियोनार्ड. लैंग्वेज. न्यूयॉर्क: हेनरी होल्ट एंड कंपनी, 1933, पृष्ठ 24.

[3] Noam Chomsky, Aspects of the Theory of Syntax (1965)

[4] भर्तृहरि, वाक्यपदीय, प्रकाशक: मोतीलाल बनारसीदास, अनुवाद: के.ए. सुब्रमहण्या अय्यर, 1995 पृ.संख्या- 110

[5] Briggs, R. (1985). Knowledge Representation in Sanskrit and Artificial Intelligence. AI Magazine, 6(1),पृष्ठ संख्या 32.

[6] Basham, A. L. (2004). The Wonder That Was India. New Delhi: Rupa & Co., p. 390. (...Linguistics was the field in which the Indian intellect achieved its greatest triumph of mathematical perfection and scientific analysis.)

डिजिटल मीडिया और राजनीतिक जागरूकता सोशल मीडिया के विशेष संदर्भ में एक मूल्यांकन

- प्रो. (डॉ.) तेज नारायण ओझा
- डॉ रश्मि ओझा

सार

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के विकास ने राजनीतिक जागरूकता और सहभागिता के परिदृश्य को मूल रूप से बदल दिया है। 21वीं सदी में ट्विटर (X), फेसबुक और इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने लोगों की राजनीति के प्रति प्रतिबद्धता, सामूहिक क्रिया और राजनीतिक जानकारी को ग्रहण करने के तरीकों को पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया है। यह संचार और जागरूकता के नए आयामों को दर्शाता है। वर्तमान समय में डिजिटल मीडिया राजनीतिक चेतना को विकसित करने और राजनीतिक मुद्दों पर व्यापक सामाजिक-राजनीतिक संवाद को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

यह लेख राजनीतिक जागरूकता के निर्माण, राजनीतिक जानकारी के प्रसार तथा जन-समूहों को संगठित करने में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स की भूमिका और प्रभाव का अध्ययन करता है। सोशल मीडिया त्वरित जानकारी उपलब्ध कराने का एक प्रभावी माध्यम है, इसलिए यह अध्ययन वर्तमान समय में राजनीतिक सामग्री के प्रबंधन में सोशल मीडिया की भूमिका का भी विश्लेषण करता है। इस शोध में मिश्रित पद्धति (Mixed Method) का उपयोग किया गया है, जिसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों का संकलन किया गया है।

बीज शब्द: सोशल मीडिया, राजनीतिक जानकारी, राजनीतिक जागरूकता, युवा, जन-संगठन

प्रस्तावना:

आज के डिजिटल मीडिया और मीडिया अभिसरण (Media Convergence) के युग में तकनीक जीवन के प्रत्येक पहलू में उपयोग हो रही है और समाज को गहराई से प्रभावित कर रही है। सामाजिक संस्थाएँ विभिन्न क्षेत्रों में लोगों को जानकारी प्रदान करती हैं और राजनीतिक जागरूकता को बढ़ावा देती हैं। लोगों की

राजनीतिक चेतना और राजनीतिक परिवर्तन के प्रति विचार अलग-अलग होते हैं; वास्तव में, यह चेतना और जागरूकता उन साधनों की गुणवत्ता और विविधता पर निर्भर करती है जिनका उपयोग सामाजिक अंतःक्रिया के लिए किया जाता है। इस संदर्भ में सोशल मीडिया की उपस्थिति वास्तव में सामाजिक परिवर्तन की गति को तेज कर रही है। हमारी सामाजिक-राजनीतिक सोच और जीवन के विभिन्न पहलू तेजी से बदल रहे हैं। फेसबुक, इंस्टाग्राम और यूट्यूब रील्स जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म तथा हैशटैग ट्रेंड्स सरल, आकर्षक और व्यापक राजनीतिक मुद्दों पर संवाद को प्रोत्साहित करते हैं, जो हमारे विचारों और सोच पर गहरा प्रभाव डालते हैं। सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति का विभिन्न राजनीतिक आंदोलनों के साथ निश्चित रूप से एक संबंध होता है। विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से चलाए जा रहे अभियान वर्तमान सामाजिक गतिविधियों के लिए एक वरदान सिद्ध हो रहे हैं, क्योंकि ये लोगों के अधिकारों के लिए सामूहिक सोच और आंदोलनों को संगठित करते हैं। सोशल मीडिया और उसके अनुप्रयोगों के व्यापक उपयोग के कारण वर्चुअल संवाद तथा विचारों और अवधारणाओं का प्रसार निरंतर विकसित हो रहा है। ऐसे अनेक सामाजिक आंदोलनों और राजनीतिक संगठनों के उदाहरण मौजूद हैं। नेपाल का गेंजि आंदोलन, मी-टू आंदोलन तथा विशेष रूप से मध्य-पूर्व का 'अरब स्प्रिंग' इसके हालिया उदाहरण हैं। भारतीय संदर्भ में किसानों का आंदोलन एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जिसने जनभावनाओं को प्रभावित किया और किसानों को एक मंच पर एकजुट किया। जनता द्वारा सशक्त सामाजिक संस्थाएँ अब सामूहिक रूप से सामग्री के संप्रेषण का एक नया तकनीकी ढांचा प्रस्तुत करती हैं। बरुआह के अनुसार, डिजिटल मीडिया, विशेषकर सोशल मीडिया, उपयोगकर्ताओं को ऑनलाइन विमर्श में भाग लेने, सामग्री निर्माण करने तथा समुदाय के साथ संवाद स्थापित करने की सुविधा प्रदान करता है। सार्वजनिक भागीदारी किसी भी प्रगतिशील सामाजिक रणनीति का मूल तत्व होती है; सामाजिक पूंजी का विकास सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक विषयों तथा नीतियों पर होने वाली चर्चाओं और जनमत पर निर्भर करता है। सोशल मीडिया समाज में पहचान, विचारों और पीढ़ियों की अभिव्यक्ति को समझने और प्रदर्शित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इंस्टाग्राम, फेसबुक, यूट्यूब और ट्विटर (X) जैसे प्लेटफॉर्म एक पीढ़ी को जोड़ते हैं और संचार के नए अवसर तथा पैटर्न विकसित करते हैं। उल्लेखनीय है कि पहले सामाजिक संचार स्थान, समय और संसाधनों तक सीमित था, जबकि अब एक व्यक्ति लाखों लोगों से जुड़कर अपने विचार साझा कर सकता है। शक्ति और संचार के बदलते तरीकों ने सामाजिक व्यवस्था में नए आयाम उत्पन्न किए हैं और सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न उपयोगकर्ताओं के लिए संवाद के नए स्तर तैयार किए हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म सार्वजनिक संचार के ऑनलाइन माध्यम हैं, जिनका उद्देश्य समाज के विभिन्न वर्गों को जोड़ना, विविध विचारों और मूल्यों को सामने लाना, सामाजिक भागीदारी को सुदृढ़ करना तथा विकास को प्रोत्साहित करना है। ये प्लेटफॉर्म प्रस्तोता और दर्शकों के बीच प्रत्यक्ष संवाद स्थापित कर संचार की पारंपरिक नीतियों को परिवर्तित कर रहे हैं

सोशल मीडिया – अवधारणा और समझ

सोशल मीडिया की अवधारणा साहित्यिक विमर्श, विचारों और दृष्टिकोणों में भिन्न-भिन्न रूपों में प्रस्तुत की जाती है। साथ ही, वैश्विक संचार और मीडिया प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास के कारण भी इस अवधारणा में निरंतर परिवर्तन देखने को मिलता है। यह अवधारणा उन तकनीकी प्रगतियों को प्रतिबिंबित करती है, जो व्यक्तियों द्वारा विभिन्न प्लेटफॉर्म्स पर संचार के लिए तकनीक के उपयोग से उत्पन्न हुई हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स को उन प्रणालियों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो विभिन्न सामाजिक प्रकारों और संरचनाओं से संबंधित होते हैं तथा जिनमें मूल्य, दृष्टिकोण, साझा विचार, सामाजिक संचार, पारिवारिक संबंध,

संघर्ष, परिवर्तन, आर्थिक और व्यावसायिक मुद्दे शामिल होते हैं। ये प्लेटफॉर्म विशेष उद्देश्यों के लिए कार्यरत संगठनों और समूहों के बीच पारस्परिक संवाद, सहयोग और सहभागिता के साधन प्रदान करते हैं।इसके अतिरिक्त, ये माध्यम सामाजिक संबंधों (नातेदारी), विचारों के आदान-प्रदान, संघर्षों के समाधान, आर्थिक एवं व्यावसायिक लेन-देन तथा विभिन्न आयोजनों में संगठनों और प्रतिभागियों की सक्रिय भागीदारी को भी सुदृढ़ बनाते हैं।

सैद्धांतिक ढांचा

अरब स्प्रिंग तथा अन्य कई सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में सोशल मीडिया की भूमिका को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक जागरूकता और चेतना के निर्माण में सोशल मीडिया अत्यंत शक्तिशाली माध्यम है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स राजनीतिक कार्यकर्ताओं के बीच संवाद का प्रमुख माध्यम बन गए थे। इन्हें सूचना के आदान-प्रदान, प्रदर्शनों के आयोजन तथा सामाजिक आंदोलनों को संगठित करने के प्रभावी साधन के रूप में देखा गया। अरब स्प्रिंग के दौरान इसकी शुरुआत ट्यूनीशिया और मिस्र से हुई, जो बाद में लीबिया सहित मध्य-पूर्व के लगभग सभी देशों में फैल गई। आंदोलन की शुरुआत में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने कार्यकर्ताओं को संगठित करने, कार्यक्रमों को संचालित करने तथा बैठक स्थलों पर सूचना के आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनका उपयोग देश-विदेश में सहज रूप से किया गया। सामाजिक नेटवर्क राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं के समाधान में भी प्रभावी सिद्ध होते हैं तथा व्यापक सर्वेक्षणों के संचालन के लिए डिजिटल माध्यम उपलब्ध कराते हैं। राजनीतिक सर्वेक्षण और अभियान कभी-कभी समाज में भ्रम की स्थिति भी उत्पन्न कर देते हैं। राजनीतिक समाचारों और नीतियों का अध्ययन समाज के प्रतिनिधित्व को वैधता प्रदान करने तथा सामाजिक गतिशीलता को व्यवस्थित करने में सहायक होता है। राजनीतिक संघर्षों के परिणाम विकास के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं, वहीं वे समाज के लिए हानिकारक भी सिद्ध हो सकते हैं। सोशल मीडिया को सूचना के एक महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में भी देखा जाता है, जहाँ उपयोगकर्ता-निर्मित सामग्री (User Generated Content) चर्चा का मंच प्रदान करती है। साधारण चर्चा मंचों से लेकर वैश्विक सार्वजनिक क्षेत्र तक, सामाजिक-राजनीतिक विमर्श में सोशल मीडिया की भूमिका अत्यंत व्यापक है। यह विशेषज्ञों की भावनात्मक एवं संज्ञानात्मक क्षमताओं को एकीकृत करने की संभावनाओं को भी बढ़ाता है।

विशेष रूप से, 'वॉट्सऐप' जैसे अनेक एप्लिकेशन अत्यंत लोकप्रिय हैं और संदेशों के आदान-प्रदान तथा एजेंडा निर्धारण के लिए व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं। भारत जैसे देश में, जहाँ व्हाट्सएप संचार का प्रमुख माध्यम बन चुका है, इसका उपयोग राजनीतिक जानकारी के प्रसार में भी व्यापक रूप से होता है। चुनाव, राजनीतिक एजेंडा, बैठकों की तिथियाँ तथा सरकारी योजनाओं से संबंधित सूचनाएँ इन माध्यमों के जरिए आसानी से प्रसारित होती हैं। वास्तव में, व्हाट्सएप ने राजनीतिक संचार को एक नया स्वरूप प्रदान किया है और लगभग सभी राजनीतिक दल इसका उपयोग मतदाताओं और समर्थकों के प्रबंधन के लिए कर रहे हैं। कई उदाहरणों में व्हाट्सएप ने राजनीतिक संचार को बढ़त दी है, जैसे भारत में 2018 के पश्चिम बंगाल पंचायत चुनाव। इसके अतिरिक्त, फेसबुक और वर्तमान में एक्स (पूर्व में ट्विटर) जैसे अन्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म भी सामाजिक और राजनीतिक संचार के प्रभावी साधन बनते जा रहे हैं। यह माध्यम अत्यंत प्रभावशाली और सफल है, विशेष रूप से युवाओं के बीच, जो सोशल मीडिया से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। युवा इन माध्यमों का उपयोग केवल जानकारी प्राप्त करने के लिए ही नहीं करते, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन और विचारों के आदान-प्रदान को भी बढ़ावा देता है। राजनीतिक जागरूकता का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि किसी

भी समाज या देश में सामाजिक परिवर्तन काफी हद तक राजनीतिक जागरूकता पर निर्भर करता है। इसके लिए जन-भागीदारी आवश्यक है, और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स ने इसे सरल और सुलभ बना दिया है। फेसबुक जैसे प्लेटफॉर्म लोगों के निकट और प्रभावी हैं, वहीं यूट्यूब भी जनमत निर्माण और राजनीति की समझ विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।आंकड़ों के अनुसार, भारत की लगभग 35% जनसंख्या सोशल मीडिया का उपयोग करती है, जिससे उन्हें विभिन्न समाचारों, विचारों और चर्चाओं तक व्यापक पहुंच प्राप्त होती है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य राजनीतिक जागरूकता और जन-संगठन के लिए सोशल मीडिया के महत्व और भूमिका का विश्लेषण करना है।

समस्या का प्रतिपादन

2010 के दशक के उत्तरार्ध से अरब विश्व में उभरते राजनीतिक आंदोलनों ने विद्वानों और राजनीतिक वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है। कई देशों में पुराने शासन तंत्रों के विरुद्ध क्रांतियाँ सामने आई हैं, जिन्होंने लंबे समय तक राजनीतिक परिदृश्य को प्रभावित किया था।इन सभी सामाजिक अंतःक्रियाओं और संगठित जन-आंदोलनों के केंद्र में सोशल मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, जिसने शासन परिवर्तन की प्रक्रियाओं को गति दी है। पिछले डेढ़ दशक में सोशल मीडिया पर जनता की उपस्थिति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। राजनीतिक जागरूकता से संबंधित अनेक शोध, साहित्य और लेख उपलब्ध हैं।

इसी परिप्रेक्ष्य में यह शोध समस्या निम्नलिखित अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए प्रस्तुत की गई है —क्या युवा वर्ग आभासी (वर्चुअल) वास्तविकता को वास्तविकता में परिवर्तित करने में सक्षम है? क्या वर्तमान वैश्विक समाज में युवा डिजिटल मीडिया के माध्यम से सामाजिक मान्यताओं में परिवर्तन ला सकते हैं? क्या राजनीतिक एजेंडा के प्रति सामाजिक जागरूकता में सोशल मीडिया की गहरी भूमिका है? क्या सोशल मीडिया साइट्स युवाओं की भागीदारी और व्यापक सामाजिक अंतःक्रियाओं को प्रभावित करती हैं? उपरोक्त प्रश्नों तथा वैश्विक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, प्रस्तुत शोध मुख्य रूप से सोशल मीडिया के मानदंडों, मूल्यों और उसके उपयोगों से संबंधित है, जो विश्व में राजनीतिक परिवर्तनों के प्रति सामाजिक जागरूकता के निर्माण हेतु सामाजिक परिदृश्यों की स्थापना में सहायक हैं।

उद्देश्य

- राजनीतिक जागरूकता को प्रभावित करने के एक माध्यम के रूप में सोशल मीडिया को समझना।
- युवाओं की भागीदारी और व्यापक सामाजिक अंतःक्रियाओं पर सोशल मीडिया के प्रभाव का परीक्षण करना।

अनुसंधान पद्धति

जनसंख्या एवं नमूना आकार

सोशल मीडिया के उपयोग और प्रभावशीलता को ध्यान में रखते हुए, यह शोध देहरादून (भारत) क्षेत्र के 4 कॉलेज, 66 नमूने जाने वाले विद्यार्थियों पर प्रश्नावली के माध्यम से किया गया। अधिकांश प्रतिभागी स्नातक (UG) स्तर के विद्यार्थी थे। जनसांख्यिकीय विवरण नीचे तालिका 1 में प्रस्तुत हैं—

तालिका 1: नमूने का जनसांख्यिकीय विवरण

विवरण	संख्या	शिक्षा
पुरुष	44	स्नातक (UG)
महिला	22	स्नातक (UG)

इस अध्ययन में मात्रात्मक (Quantitative) शोध पद्धति का उपयोग किया गया है तथा सुविधा-आधारित नमूना चयन (Convenience Sampling) विधि अपनाई गई है। अनुसंधान मुख्यतः प्राथमिक प्रकृति का है और इसके उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया। उत्तरों के स्तर को समझने हेतु लाइकरट स्केल (Likert Scale) का प्रयोग किया गया है।

परिणाम एवं नमूना प्रतिक्रियाएँ

पहचाने गए नमूनों से प्रतिक्रियाएँ प्राप्त करने के लिए सुविधा-आधारित नमूना चयन (Convenience Sampling) और सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। यह सर्वेक्षण भारत के देहरादून क्षेत्र में विशेष रूप से स्नातक (UG) स्तर के विद्यार्थियों के बीच किया गया, ताकि सोशल मीडिया और राजनीतिक जागरूकता के प्रति उनके दृष्टिकोण को समझा जा सके। अध्ययन में शामिल प्रश्न तथा उनके उत्तर लाइकरट स्केल (Likert Scale) पर आधारित हैं, जिनका विवरण निम्नलिखित है—

2. राजनीतिक सामग्री साझा करने के एक माध्यम के रूप में सोशल मीडिया

स्तर	नमूना (%)
पूर्णतः सहमत	40
सहमत	25
तटस्थ	20
असहमत	8
पूर्णतः असहमत	7

तालिका–2

तालिका–2 यह दर्शाती है कि सोशल मीडिया को राजनीतिक सामग्री साझा करने के एक प्रभावी माध्यम के रूप में सर्वाधिक प्रतिक्रिया प्राप्त हुई है। लगभग 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य से सहमति व्यक्त की कि राजनीतिक जागरूकता में सोशल मीडिया की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

3. राजनीतिक सामग्री के प्रबंधन के एक माध्यम के रूप में सोशल मीडिया

स्तर	नमूना (%)
पूर्णतः सहमत	32
सहमत	28
तटस्थ	16
असहमत	13
पूर्णतः असहमत	11

तालिका–3 यह दर्शाती है कि सोशल मीडिया का उपयोग राजनीतिक सामग्री के प्रबंधन के एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में किया जा रहा है। लगभग 32 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य से सहमति व्यक्त की कि राजनीतिक जागरूकता में सोशल मीडिया की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

4. राजनीतिक मुद्दों और सूचनाओं को बढ़ावा देने के प्रमुख माध्यम के रूप में सोशल मीडिया

स्तर	नमूना (%)
पूर्णतः सहमत	41
सहमत	25
तटस्थ	13
असहमत	10
पूर्णतः असहमत	11

तालिका–4

तालिका–4 यह दर्शाती है कि राजनीतिक जानकारी के प्रसार के लिए सोशल मीडिया का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। लगभग 41 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य से सहमति व्यक्त की कि राजनीतिक जागरूकता में सोशल मीडिया की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

राजनीतिक जानकारी के प्रमुख स्रोत के रूप में सोशल मीडिया

तालिका–5

स्तर	नमूना (%)
पूर्णतः सहमत	33
सहमत	22
तटस्थ	17
असहमत	16
पूर्णतः असहमत	12

तालिका–5 यह दर्शाती है कि सोशल मीडिया का उपयोग राजनीतिक जानकारी के एक प्रमुख स्रोत के रूप में किया जाता है। लगभग 33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य से सहमति व्यक्त की कि राजनीतिक जागरूकता में सोशल मीडिया की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

तालिका–6

स्तर	नमूना (%)
पूर्णतः सहमत	42
सहमत	23
तटस्थ	15
असहमत	11
पूर्णतः असहमत	9

तालिका–6 यह दर्शाती है कि सोशल मीडिया राजनीतिक मुद्दों की समझ के स्तर को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लगभग 42 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस तथ्य से सहमति व्यक्त की कि राजनीतिक जागरूकता में सोशल मीडिया की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है।

चर्चा एवं विश्लेषण

सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों और उत्तरदाताओं की प्रतिक्रियाओं से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश प्रतिक्रियाएँ राजनीतिक जानकारी के प्रसार में सोशल मीडिया के महत्व को दर्शाती हैं। नमूना प्रतिक्रियाएँ यह भी इंगित करती हैं कि लोग राजनीतिक सामग्री का बेहतर मूल्यांकन कर सकते हैं और उसके आधार पर निर्णय लेने में सक्षम होते हैं। वर्तमान समाज में सोशल मीडिया अत्यंत लोकप्रिय और सर्वव्यापी हो चुका है तथा विशेष रूप से युवाओं के बीच यह वैश्विक स्तर पर संचार का प्रमुख माध्यम बनता जा रहा है।

सोशल मीडिया अब राजनीतिक विश्लेषण और नीतियों पर चर्चा के एक महत्वपूर्ण मंच के रूप में भी उपयोग किया जा रहा है। प्रस्तुत अध्ययन में विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के बीच राजनीतिक जागरूकता के निर्माण में सोशल मीडिया की उपयोगिता पर सर्वेक्षण किया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि सामाजिक नेटवर्क विचारों, मतों और दृष्टिकोणों के आदान-प्रदान का एक प्रमुख माध्यम हैं, जो अंततः सामाजिक परिवर्तन में सहायक होते हैं। सर्वेक्षण के आंकड़े यह भी दर्शाते हैं कि सोशल मीडिया का मुख्य उद्देश्य लोगों को जोड़ना, सामाजिक मुद्दों पर चर्चा करना और विशेष रूप से राजनीतिक जागरूकता को बढ़ावा देना है। सोशल मीडिया के तीव्र विकास ने राजनीतिक अभियानों और विमर्श को प्रभावी और सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे जनसहभागिता को बढ़ावा मिला है। अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि सोशल मीडिया के माध्यम से होने वाला संवाद राजनीतिक अभिकर्ताओं और आम जनता के बीच दूरी को कम करता है तथा संवाद और सहभागिता के नए अवसर प्रदान करता है।

राजनीतिक जागरूकता का विस्तार खुले संवाद के वातावरण को बढ़ावा देता है, जो नीतियों और योजनाओं के सुधार में सहायक हो सकता है।सामाजिक नेटवर्क्स की प्रगति ने राजनीतिक अभियानों और जनसंगठन के लिए आवश्यक और प्रभावी माध्यम के रूप में अपनी उपयोगिता सिद्ध की है। इंटरनेट के माध्यम से सोशल नेटवर्क्स पर व्यक्तिगत संवाद राजनीतिक विकास की संभावनाओं को भी सुदृढ़ करता है।वर्तमान युग में डिजिटल क्रांति अपने चरम पर है, और सोशल मीडिया अपने विविध स्वरूपों—जैसे वीडियो, क्लिप्स, रील्स, ग्राफिक्स और एनीमेशन—के माध्यम से सामाजिक अंतःक्रिया और वैश्विक संपर्क का एक सशक्त माध्यम बन चुका है। हैशटैग संस्कृति भी विभिन्न प्रकार की राजनीतिक बहसों के लिए अत्यंत लोकप्रिय हो गई है। यह शोध इन सभी पहलुओं का विश्लेषण करते हुए लोगों की भावनाओं और राजनीतिक जागरूकता के स्तर को समझने का प्रयास करता है। इस प्रकार, सोशल मीडिया राजनीतिक अभियानों और सामाजिक आंदोलनों में जन-संगठन को सुलभ और प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

निष्कर्ष

प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया ने विश्वभर में लोगों के संचार के तरीकों को बदल दिया है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स का मूल उद्देश्य समाज के प्रत्येक वर्ग तक पहुँचना और विचारों तथा सामाजिक समझ के आदान-प्रदान के लिए एक सुलभ संचार माध्यम प्रदान करना है। वर्तमान परिदृश्य में सोशल मीडिया राजनीतिक जागरूकता बढ़ाने और राजनीतिक मुद्दों से संबंधित जानकारी प्रसारित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यद्यपि पारंपरिक मीडिया भी प्रभावशाली रहा है, लेकिन सोशल मीडिया अधिक तेज़, सुलभ और

संवादात्मक है, जो लोगों को अपने राजनीतिक विचारों और मुद्दों को व्यक्त करने और साझा करने का अवसर प्रदान करता है। सार्वजनिक नीतियों और उनसे संबंधित चर्चाओं को भी सोशल मीडिया पर व्यापक रूप से स्थान मिलता है, जहाँ विभिन्न दृष्टिकोणों के साथ अधिक पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के साथ विश्लेषण प्रस्तुत किए जाते हैं। सोशल मीडिया पर लोगों की भागीदारी भी स्पष्ट रूप से बढ़ी है और यह प्रत्येक राजनीतिक अभियान तथा जन-संगठन का एक महत्वपूर्ण घटक बन चुकी है। वास्तव में, राजनीतिक जागरूकता और अंतःक्रियाओं ने एक नया स्वरूप ग्रहण किया है, जिसका श्रेय सोशल मीडिया और उसके विभिन्न अनुप्रयोगों को जाता है।सोशल मीडिया त्वरित और सुलभ माध्यम है, जो जन-जागरूकता अभियानों में राजनीतिक मुद्दों और अद्यतनों के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनेक राजनीतिक नेता और लगभग सभी राजनीतिक दल सामाजिक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए सोशल मीडिया का व्यापक उपयोग कर रहे हैं। अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ कि आज के समय में छोटे से छोटा राजनीतिक मुद्दा या घटना—जैसे किसी नेता का वक्तव्य, विरोध प्रदर्शन या मीम—तुरंत सोशल मीडिया पर ट्रेंड बन जाता है। जनता भी राजनीतिक परिवर्तन, आर्थिक सुधारों और दीर्घकालिक प्रभावों जैसे नीतिगत मुद्दों पर त्वरित प्रतिक्रिया देती है। डिजिटल मीडिया और उसकी राजनीतिक उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि राजनीति अब केवल राजनीतिक संबद्धताओं तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि यह युवाओं और महिलाओं की भागीदारी को भी प्रोत्साहित कर रही है। हालाँकि, एक महत्वपूर्ण चिंता यह है कि यदि उपयोगकर्ता भविष्य में सोशल मीडिया का जिम्मेदारी और नैतिकता के साथ उपयोग करें, तो यह राजनीतिक जागरूकता, सुशासन, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि सोशल मीडिया ट्रेंड्स लोगों में जागरूकता और सहभागिता बढ़ाने में प्रभावी हैं। विशेष रूप से, सोशल मीडिया लोगों की राजनीतिक जागरूकता को बढ़ाने में सक्रिय भूमिका निभाता है। अंततः, यह अध्ययन अपने उद्देश्यों को प्राप्त करता है और यह स्थापित करता है कि वर्तमान समय में सोशल मीडिया अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा राजनीतिक संगठनों द्वारा इसे राजनीतिक जागरूकता और सूचना प्रसार के एक प्रभावी उपकरण के रूप में व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है।

संदर्भ सूची

- अल-ख़ज़ा'लेह, एम. एस., एवं लाहियानी, एच. (2021). यूनिवर्सिटी एंड पॉलिटिकल अवेयरनेस अमंग स्टूडेंट्स: ए स्टडी इन द रोल ऑफ यूनिवर्सिटी इन प्रमोटिंग पॉलिटिकल अवेयरनेस। जर्नल ऑफ एजुकेशनल एंड सोशल रिसर्च, 11(2), 204–204. https://doi.org/10.36941/jesr-2021-0041
- ऑल्कॉट, एच., एवं जेंट्ज़को, एम. (2017). सोशल मीडिया एंड फेक न्यूज़ इन द 2016 इलेक्शन। जर्नल ऑफ इकोनॉमिक पर्सपेक्टिव्स, 31(2), 211–236।
- बराती, एम. (2023). कैज़ुअल सोशल मीडिया यूज़ अमंग द यूथ: इफेक्ट्स ऑन ऑनलाइन एंड ऑफलाइन पॉलिटिकल पार्टिसिपेशन। जे-डेम – ईजर्नल ऑफ ई-डेमोक्रेसी एंड ओपन गवर्नमेंट, 15(1), 1–21।
- एनली, जी. (2017). ट्विटर ऐज़ एरीना फॉर द ऑथेंटिक आउटसाइडर: एक्सप्लोरिंग द सोशल मीडिया कैंपेन ऑफ ट्रम्प एंड क्लिंटन इन द 2016 यूएस प्रेसिडेंशियल इलेक्शन। यूरोपियन जर्नल ऑफ कम्युनिकेशन, 32(1), 50–61।
- फ्रीलॉन, डी., मैकइलवेन, सी. डी., एवं क्लार्क, एम. डी. (2018). क्वांटिफाइंग द पावर एंड

कॉन्सीक्वेंसेज़ ऑफ सोशल मीडिया प्रोटेस्ट। न्यू मीडिया एंड सोसाइटी, 20(3), 990–1011।

- कैट्ज़, ई., ब्लूमलर, जे. जी., एवं गुरेविच, एम. (1973). यूज़ेस एंड ग्रैटिफिकेशन्स रिसर्च। पब्लिक ओपिनियन क्वार्टरली, 37(4), 509–523।
- कीटिंग, ए., एवं मेलिस, जी. (2017). सोशल मीडिया एंड यूथ पॉलिटिकल एंगेजमेंट: प्रीचिंग टू द कन्वर्टेड ऑर प्रोवाइडिंग ए न्यू वॉइस फॉर यूथ? द ब्रिटिश जर्नल ऑफ पॉलिटिक्स एंड इंटरनेशनल रिलेशन्स, 19(4), 877–894।
- ली, जे. (2023). द नेक्सस बिटवीन पॉलिटिकल अवेयरनेस एंड सोशल मीडिया पॉलिटिकल एक्सप्रेशन: एग्ज़ामिनिंग द मेडिएटिंग रोल ऑफ पॉलिटिकल एफिकेसी। जर्नल ऑफ यूथ स्टडीज़, 26(2), 234–251।
- पापाचारिसी, ज़ेड. (2015). अफेक्टिव पब्लिक्स: सेंटिमेंट, टेक्नोलॉजी, एंड पॉलिटिक्स। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- पार्मेली, जे. एच., एवं बिचार्ड, एस. एल. (2012). पॉलिटिक्स एंड द ट्विटर रिवोल्यूशन: हाउ ट्वीट्स इन्फ्लुएंस द रिलेशनशिप बिटवीन पॉलिटिकल लीडर्स एंड द पब्लिक। लेक्सिंगटन बुक्स।
- राज, एच. (2024). सोशल मीडिया इन लर्निंग। इन रहीश, आर. एवं अन्य (संपा.), इनोवेशन एंड न्यू ट्रेंड्स इन एजुकेशन (खंड 2, पृ. 67–82)। दिल्ली: रचनाकर पब्लिशिंग हाउस।
- शिर्की, सी. (2011). द पॉलिटिकल पावर ऑफ सोशल मीडिया: टेक्नोलॉजी, द पब्लिक स्फीयर, एंड पॉलिटिकल चेंज। फॉरेन अफेयर्स, 90(1), 28–41।

सामाजिक समरसता का भाव और संत रविदास का काव्य

- डॉ. मनोरमा गौतम

सार

भारत का मध्यकाल सामाजिक , राजनीतिक , धार्मिक , आर्थिक , सांस्कृतिक तमाम तरह की समस्याओं से ग्रसित था। तानाशाही शासक जनता का शोषण करते थे। समाज तमाम तरह की बुराईयों और समस्याओं को झेल रहा था। ऊँच – नीच की भावना , अमीरी – गरीबी की भावना, हिन्दू–मुस्लिम की भावना, सम्पूर्ण समाज को तथा मनुष्य के मस्तिष्क को चारों ओर से अपना शिकार बना रही थी। धार्मिक स्तर पर समाज फिर चाहे वो हिन्दू हो या मुसलमान अंधविश्वास कर्मकांड , बाह्य आडम्बर से घिरा हुआ था। सांस्कृतिक स्तर पर शिक्षा तथा ज्ञान के अभाव में समाज की प्रगति रुकी हुई थी। सिर्फ इतना भर ही नहीं तत्कालीन समाज भी कर्म के आधार पर चार वर्णों में विभक्त था- ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र। जैसे – ब्राह्मण का कार्य था पूजा पाठ करना , क्षत्रिय का कार्य था युद्ध करना , वैश्य का कार्य था व्यापार करना और शूद्र का कार्य था इन तीनों वर्णों की सेवा करना। जब तक समाज कर्म के आधार पर विभाजित रहा तब तक सब कुछ सही से चलता रहा। समाज में संतुलन बना रहा। किसी भी तरह का कोई विरोधाभास नहीं उत्पन्न हुआ और न ही कोई आंतरिक कलह ही नज़र आया। किन्तु बाद में यही कर्म आधारित समाज जाति आधारित समाज में तब्दील हो गया और कर्म से ही व्यक्ति की जाति निर्धारित की जाने लगी। जिसके कारण समाज में बहुत बड़ा बदलाव आया जिसने भारतीय समाज की नींव हिलाकर रख दी। अचानक से समाज में विभाजन की रेखा खिंच गई। मनुष्यों के बीच बहुत बड़ी खाई आ गई जिसको पाटने का काम संत रविदास ने किया। उन्होंने अपनी वाणी तथा उपदेशों के माध्यम से समाज में एकता , सद्भावना , प्रेम , भाईचारा फ़ैलाने का प्रयास किया। समाज की चेतना को जागृत करने के लिए संत रविदास ने मंडली , विमर्श , कीर्तन – भजन , सत्संग आदि को माध्यम बनाया और इसके द्वारा जन सामान्य का हृदय – परिवर्तन करना चाहा। जिसके लिए उन्हें खुद शक्तिशाली वर्ग की कटूक्तियों तथा अवहेलना

का शिकार होना पड़ा। किंतु वे हारे नहीं , शक्तिशाली वर्ग से डर कर पीछे हटे नहीं बल्कि और भी दृढ़ होकर उनका सामना किया और अपनी सूक्तियों तथा दोहों आदि के माध्यम से निरंतर समाज का मार्गदर्शन करते रहें ताकि समाज में शांति तथा सद्भावना बनी रहे।

बीज शब्द : समरसता, परिकल्पना, बाह्याडम्बर, वैमनस्य, समतामूलक, विद्रुपता, उन्माद।

उद्देश्य : आज हम 21वी सदी में प्रवेश कर चुके हैं और बहुत सी शैक्षिक और वैज्ञानिक प्रगति कर रहें हैं किन्तु इन सबके बावजूद भी मानवता के स्तर पर आज भी हम उन्नति नही कर पाएं हैं। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मनुष्य आगे बढ़ने की चाह में अपने परिवार, अपने समाज, अपने सगे – सम्बन्धी , मित्र आदि को पीछे छोड़ता जा रहा है जिसके कारण उसके भीतर का प्रेम, लगाव, अपनापन समाप्त होता जा रहा है और यही दुराव तथा अलगाव ही मानव समाज के पतन का कारण है। यही वजह है कि आज से कई सौ वर्षों पहले ही संत रविदास ने इस स्थिति को भांप लिया था तभी तो वो अपनी वाणी द्वारा समाज में विद्यमान तमाम तरह की बुराइयों का विरोध करते हैं। ऐसे समय में आज भी संत रविदास की कही बातें समाज पर लागू होती हैं।संत रविदास ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अत: इस शोध – पत्र को लिखने के पीछे मेरा उद्देश्य यह है कि संत रविदास की वाणी को उन लोगों तक भी पहुंचाया जाए जो अभी तक संत रविदास की विचारों से अनभिज्ञ हैं, ताकि लोग उनको पढ़े – समझे और उनके दिखाए मार्ग पर चले।

प्राकल्पना : प्रत्येक साहित्य फिर वो किसी भी भाषा, समाज या क्षेत्र विशेष का हो तत्कालीन समय तथा समाज की अनुभूति , विचारधारा और परम्पराओं के उत्थान – पतन का जीवंत दस्तावेज़ होता है। उसमें उस समय का समाज स्पष्ट नजर आता है। साहित्यकार या रचनाकार जिस समाज में विचरण कर रहा होता है उस समाज की तमाम परिस्थितियां फिर वो चाहे सामाजिक , राजनीतिक , धार्मिक , आर्थिक कैसी भी हो उसके साहित्य में या रचना में स्पष्टत: दृष्टिगत होता है। लेखक उस समय का दृष्टा और भोगी दोनों ही होता है। संत रविदास भी एक ऐसे ही भक्तिकालीन कवि हैं जिन्होनें अपने समय तथा समाज की उपेक्षा कभी नही की।

जिस समय में संत रविदास का प्रादुर्भाव हुआ वो भारतीय इतिहास का मध्यकाल था। मध्यकालीन भारत तमाम तरह की सामाजिक , राजनीतिक , आर्थिक , धार्मिक , सांस्कृतिक बुराईयों से ग्रसित था। समाज वर्गगत , वर्णगत , जातिगत , धर्मगत आधार पर नियोजित था। मनुष्यों के बीच वैमनस्य विद्यमान था। व्यक्ति – व्यक्ति से ही घृणा करता था। लोग आपसी कलह में उलझे हुए थे। धार्मिक संगठन आमजन को गुमराह कर रहे थे। कहा जाता है धर्म मनुष्य को जोड़ता है किन्तु धर्म ने या फिर धर्म के ठेकेदारों ने तो यहाँ तोड़ने का काम किया है। संत रविदास ने अपनी वाणी द्वारा इसी धार्मिक विभाजन को पाटने का प्रयास किया है।

जातिगत समानता के पक्षधर : संत रविदास इस चौथे वर्ण से आते थे जो कि कर्म के आधार पर चमार जाति से सम्बन्धित था। संत रविदास के पिता चमड़े से जूते बनाने का काम करते थे जो कि उनका पारम्परिक व्यवसाय था। आगे चलकर संत रविदास ने भी इसी व्यवसाय को अपनाया। संत रैदास ने जब देखा कि मात्र जाति के आधार पर समाज में कलह मचा हुआ है , लोगों में एकता नही है। मानव – मानव के प्रति नफरत रखता है तो उन्होंने जाति आधारित बंटे समाज का विरोध किया। रैदास ने जन्म पर आधारित बंटे समाज को नकारा है। उन्होंने समाज के इस भयंकर कोढ़ के खिलाफ आवाज उठाई। तभी तो वो कहते हैं –

“ तुम चंदन हम रंड बापुरों , संग तुम्हारे बासा।
नीच वृत तै ऊंच भयो है , गंध सुगंध निवास। ”1

संत रैदास ने मानव जाति को प्रेम की राह दिखाई। उनका समर्पित व्यक्तित्व प्रेम और विनम्रता को महत्व

देता है। उनके मतानुसार जाति का निर्धारण व्यक्ति के कर्म के अनुसार होना चाहिए। सुकर्म से नीच समझा जाने वाला व्यक्ति भी उच्च हो जाता है और कुकर्म से ऊंची जाति से जुड़ा व्यक्ति भी नीच हो जाता है। उनका मानना था कि सुकर्म करने वाला व्यक्ति उच्च जाति का माना जाए और कुकर्म करने वाला व्यक्ति नीच जाति का जिससे समाज में समानता बनी रहे। संत रैदास समतामूलक समाज चाहते थे जिसके लिए उन्होंने बहुत प्रयास भी किए। वे कहते हैं –

" रविदास सुकरमन करन सौ नीच ऊंच हो जाय
करह कुकरम ऊंच भी तो महानीच कहलाय। "2

रैदास जाति व्यवस्था के कुटिल कुचक्र को पहचान गए थे , वो समझ चुके थे कि ये जाति व्यवस्था ही मनुष्यत्व को खा रही है। इसीलिए उन्होंने मानव एकता की स्थापना पर बल दिया। वो जानते थे कि जाति व्यवस्था को दूर किए बगैर देश व समाज की उन्नति असंभव है। सिर्फ ऊंचे कुल या जाति में जन्म लेने भर से ही कोई व्यक्ति महान नही हो सकता बल्कि महान बनने के लिए कर्म भी महान करने होते हैं। सत्कर्म से ही मनुष्य श्रेष्ठ बनता है फिर चाहे वो किसी भी जाति या कुल का हो। जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था को नकारते हुए उन्होंने कर्म की प्रधानता को महत्व दिया। तभी तो वो कहते हैं –

" रविदास ब्राह्मण मत पूजिए , जेऊ होवे गुणहीन
पूजहिं चरण चंडाल के जेऊ होवे गुण परवीन। "3

रैदास जाति के आधार पर बंटे समाज के घोर विरोधी थे। जिस समय तथा समाज में वे थे जात-पात का भेदभाव बहुत ही विकराल रूप में था। जाति रुपी राक्षसी सुरसा के समान मुंह खोले समग्र समाज को निगल रही थी। संत रविदास समाज के इस भयंकर बुराई से त्रस्त थे और भुक्तभोगी भी थे तथा इस कोढ़ को समूल उखाड़कर फेंकना चाहते थे। ताकि समाज में विभेदता न रहे। संत रविदास ने ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें कोई ऊंच – नीच , राग – द्वेष , भेद – भाव न हो। जहां किसी भी प्रकार की कुरीति न हो , जहां धर्म के नाम पर बाह्यआडम्बर न हो , जहां ऊंच – नीच का भेदभाव न हो। जहां सभी को बराबरी हो , जहां सभी मनुष्य एक समान हो। वो एक ऐसे आदर्श समाज की परिकल्पना करते थे जहां सभी मनुष्य एक समान जीवन जीते हों , सभी में आपसी प्रेम और भाईचारा हो। तभी तो वो कहते हैं –

" जात पात के फेर महि उरझि गई सब लोग
मनुषता को खात है , रविदास जात का रोग। "4

इतना ही नही वर्ण – व्यवस्था जैसे अभिशाप का भी संत रविदास ने सैधांतिक स्तर पर विरोध किया। वर्ण के आधार पर बंटे समाज को रविदास स्वीकार नही करते थे। उनका मानना था कि सिर्फ वर्ण के आधार पर किसी व्यक्ति का भाग्य निर्धारित नही किया जा सकता। वो कहते हैं कि इस पृथ्वी पर जन्मे सभी मनुष्य समान हैं , सभी हांड – मांस के बने मानव हैं फिर किसी विशेष वर्ण में जन्म लेने भर से ही व्यक्ति – व्यक्ति के बीच भेद नही किया जा सकता। वो समाज में समानता , एकता तथा बराबरी के पक्षधर हैं। इसीलिए वो कहते हैं कि –

" रैदास जन्म के कारणे , होत न कोई नीच
नर को नीच करि डारि है , ओछे करम की कीच। "5

हिन्दू–मुस्लिम एकता के अनुयायी: मध्यकालीन समाज में सिर्फ जातिगत उन्माद ही नही विद्यमान था बल्कि धार्मिक उन्माद भी विद्यमान था। हिन्दू - मुस्लिम के बीच यह उन्माद बहुत अधिक था। धर्म के नाम पर लोग आपस में कट मर रहें थे। दोनों ही धर्म अपने आपको श्रेष्ठ बता रहे थे और दूसरे धर्म को अपने से निम्न। मंदिर–मस्जिद , राम–रहीम के नाम पर धार्मिक ठेकेदार अपनी–अपनी रोटियां सेंक रहे थे और आम जनता को

धर्म के नाम पर भड़का रहे थे। संत रविदास यह बात अच्छी तरह से जानते थे कि जब तक हिन्दू–मुसलमान के बीच यह विवाद चलता रहेगा तब तक समाज में शांति स्थापित करना तथा समानता , एकता लाना मुस्किल होगा। उनका मानना था कि समाज में शांति स्थापित करने के लिए हिन्दू – मुस्लिम दोनों भाईयों को एक साथ लाना बहुत जरुरी है। जब तक दोनों आपस में भाईचारे तथा प्रेमभाव से नही रहेंगे तब तक सामाजिक एकीकरण को लाना असम्भव होगा। इसलिए वो हिन्दू – मुस्लिम एकता की बात करते हैं। वो कहते हैं –

" मुसलमान ले कर दोस्ती , हिन्दुअन से कर प्रीत
रविदास ज्योति सब राम की , सभी हैं अपने मीत। "6

रविदासकालीन समाज विभिन्न प्रकार की विद्रूपताओं से भरा हुआ था। समाज में व्यक्ति – व्यक्ति के बीच सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक झगड़े विद्यमान थे, विशेषत: हिन्दू – मुस्लिम के बीच। हिन्दू, मुस्लिम दोनों आपस में एक–दूसरे को दुश्मन मान रहे थे। दोनों ही एक–दूसरे के खून के प्यासे थे। दोनों एक दूसरे के धर्म के विरोध में थे। इतना ही नही इन दोनों के झगड़े के कारण पूरा समाज अजीब से दहशत के माहौल में जीता था। हिन्दू–मुस्लिम की लड़ाई में वो इंसान भी पिसते थे जो इन सबसे बहुत अलग रहते थे। जो सुकून तथा शांति का जीवन जीना चाहते थे या फिर जीते थे। ऐसे समय में संत रविदास ने अपने बारे में न सोचकर समाज के बारे में सोचा और अपने जान की परवाह किए बगैर तत्कालीन शासक तथा तत्कालीन समाज के ठेकेदारों के विरूद्ध आवाज उठाई जो कि उनकी कविताओं, दोहों, चौपाइयों में स्पष्ट नजर आता है। उन्होंने एक अगुवा की तरह हिन्दू–मुस्लिम के बीच एकता स्थापित करने में अपना पूरा सहयोग दिया। उनका कहना था कि भगवान और खुदा कोई अलग–अलग नही बल्कि एक ही हैं। राम–रहीम भी कोई अलग शक्ति नही, वो भी एक ही हैं। वेद और कुरआन को भी एक समझा जाए तथा दोनों को ही बराबर सम्मान दिया जाए। तभी तो वो कहते हैं –

" कृष्णा–करीम, राम–हरि, राघव , जब लग एक न पेशा
वेद – कतेब – कुरान – पुरातन सहज एक नहीं वेशा। "7

इतना ही नही संत रविदास ने हिन्दू–मुस्लिम के बीच मौजूद मस्जिद – मंदिर के झगड़े को भी समाप्त करने का पूरा प्रयास किया। उनका मानना था कि जब ईश्वर एक ही है तो हम मनुष्य मंदिर – मस्जिद के नाम पर उन्हें बांटते क्यूँ हैं ? ईश्वर तो सभी का है और वो सब जगह मौजूद है और सबके हृदय में वास करता है। ईश्वर को मंदिर , मस्जिद में कैद करने की क्या जरूरत जब कि वो घट – घट में मौजूद है। फिर ईश्वर मंदिर में हो या मस्जिद में क्या फर्क पड़ता है? दोनों ही धार्मिक स्थल हैं, दोनों ही जगह ईश्वर या अल्लाह–भगवान की उपासना हो रही है तो दोनों ही समान हुए ऐसे में कोई श्रेष्ठ या अश्रेष्ठ कैसे हो सकता है। इस तरह उन्होंने मंदिर, मस्जिद दोनों को ही पवित्र स्थली बताया और कहा कि दोनों ही जगह ईश्वर का वास होता है। इस तरह उन्होंने हिन्दू, मुस्लिम को आपस में न लड़ने तथा एकता स्थापित करने की सलाह दी है। वो कहते हैं –

" मंदिर मस्जिद एक है इनमे अनतर नाहिं
रैदास राम रहमान का झगडा कोऊ नाहिं
रैदास हमारा राम जोई , सोई है रहमान
काबा कासी जानि यहि , दोऊ एक समान। "8

संत रविदास मानवीयता को महत्व देते हैं। उनके लिए सभी धर्मों तथा जाति से ऊपर 'मानव धर्म' है। और इसी मानवीयता को बनाए रखने के लिए वो समाज में अपनी वाणी के माध्यम से जागृति लाते हैं। वो मानव द्वारा ईश्वर को बांटे जाने की घोर निंदा करते हैं। उनका मानना है कि ईश्वर को कहीं तीर्थ स्थली पर जाकर ढूढने की जरूरत नही, वो तो सभी मनुष्य के दिलों में विराजमान है। बस जरूरत है उसे अपने मन की आंखों से देखने

की। व्यक्ति अपने हृदय में मौजूद ईश्वर को नही देख पाता और उसे दर–दर ढूंढ़ता फिरता है। वो कहते हैं कि ईश्वर को कहीं काशी, मथुरा, हरिद्वार, या फिर मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारे, गिरिजाघर जाकर ढूंढ़ने की जरूरत नही, वो तो हमारे दिलों में वास करता है। बस तुम सद्कर्म करते जाओ ईश्वर तुम्हें स्वत: ही मिल जाएगा। इसीलिए वो कहते हैं –

"का मथुरा का द्वारका , का कासी हरिद्वार
रैदास खोजा दिल आपना , तउ मिलिया दिलदार। "9

इसे भारत का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि यहाँ पर सदियों से जाति ही इंसान की पहचान बनी हुई है और जाति ही व्यक्ति की सामाजिक स्थिति निर्धारित करती है। संत रविदास के समय में भी समाज में यही स्थिति विद्यमान थी। संत रविदास ने तत्कालीन समाज में प्रचलित इन सड़ी–गली मान्यताओं का विरोध कर सामाजिक समरसता की बात करते हैं। उनका मानना था कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी एक ही सत्ता से बनी हैं अर्थात् सभी को बनाने वाला वह एक ही सिरजनहार है। उस एक ही ईश्वर ने सबको बनाया है फिर समाज में ये कैसा भेदभाव है। सारे संसार की रचना उस एक शक्ति ने की है , प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा में उसी परमात्मा का अंश विद्यमान है। जब उस सिरजनहार, उस परमात्मा ने इंसान में भेद नही किया फिर भेद करने वाले हम मानव कौन होते हैं! आखिर किस आधार पर ब्राह्मण श्रेष्ठ या उच्च है और शूद्र निम्न है। समाज की इसी मानसिकता का खंडन करते नजर आते हैं संत रैदास। उनका मानना है कि जब बनाने वाले ईश्वर ने अंतर नही किया, कोई भेद नही किया, फिर मानव क्यूं समाज में ये असमानता फैला रहा है। संत रविदास समाज में विद्यमान इस बुराई का विरोध करते हैं और समाज में समानता की बात करते हैं। वो कहते हैं –

" एकै माटी के सभै भांडे , सभ का एकै सिरजनहार
रैदास व्यापै एकौ घट भीतर , सभ को एकै घडै कुम्भार
रैदास एकै ब्रह्म का होई रह्यौ सगल पसार
एकै माटी सब घट सजे , एकै सभ कूं सरजनहार। "10

मानवीयता को महत्व देना : संत रविदास सामाजिक समरसता के पक्षधर हैं ऐसा उनकी रचनाओं से स्पष्ट होता है। वो समाज में धर्मगत , जातिगत विभेदता के विरोधी हैं। सदियों से समाज चार वर्णों में विभक्त रहा है। और चारों वर्णों के उनकी स्थिति के अनुसार कार्य निर्धारित रहे हैं। और यही कार्य उनकी पहचान बन गई है और आज तक समाज इसी आधार पर चलता आ रहा है जोकि मानवीय धरातल पर सही नही है। संत रविदास इस आधार पर बंटे समाज का विरोध करते हैं। वो कहते हैं कि समाज ने जो एक बार निर्धारित कर दिया व्यक्ति उस आधार पर बंट गया लेकिन यह सही नही है। उनका मानना है कि व्यक्ति की पहचान उनके कर्म के आधार पर होनी चाहिए। कोई भी व्यक्ति सिर्फ जन्म के आधार पर ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य या शूद्र नही हो सकता। उन्होंने अपने अनुसार समाज द्वारा बनाऐ गए चारों वर्णों को परिभाषित किया है। संत रविदास ब्राह्मण को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि सिर्फ ऊंचे कुल या जाति में जन्म लेने से ही कोई ब्राह्मण नही होता बल्कि जिसका हृदय ब्रह्मा की तरह विकराल होता है सही माईने में वही ब्राह्मण होता है -

" ऊंचे कुल के कारडै ब्राह्मण कोय न होय
जउ जानहिं ब्रह्म आत्मा , रैदास कहि ब्राह्मण सोय। "11

क्षत्रिय की विशेषता बताते हुए वो कहते हैं कि जो दीन दुखियों के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दे वही सच्चा क्षत्रिय है -

" दीन - दुखी के हेत जउ वारे अपने प्रान
'रैदास' उह नर सूर कौ , साँचा छत्री जान। "12

वैश्य की विशेषता बताते हुए वो कहते हैं कि सिर्फ व्यापार करके पैसे कमा लेने से कोई व्यापारी या वैश्य नही हो जाता। सही वैश्य तो वो है जो इंसानियत कमाए, जो समाज में मान – सम्मान कमाए -

" रैदास वैस सोई जानिए , जउ सतकार कमाय
पून कमाई सदा लहै , लौटे सर्वत सुखाय
साँची हाटी बैठी करि , सौदा साँचा देई
तकड़ी तीले साँच की , रैदास वैस है सोई। "13

शूद्र को परिभाषित करते हुए वो कहते हैं कि निम्न जाति में जन्म लेने से कोई शूद्र नही हो जाता है बल्कि जो नीच काम करता है , पाप करता है , अप्रिय कार्य करता है वो शूद्र होता है -

" रैदास जउ अति अपवित , सोई सूदर जान
जउ कुकरमी असुधजन , तिन्ह ही सूदन मान। "14

संत रविदास इस तरह से विभक्त समाज का विरोध करते हैं। वो अपनी सूक्तियों – उक्तियों द्वारा उन लोगों को सीधी चुनौती देते हैं, जो लोग स्वयं को ऊंचा समझते हैं। और उन लोगों को भी उत्साहित करते हैं जो लोग स्वयं को निम्न मान हीनभावना से ग्रसित हैं। वे समाज में विद्यमान गैर बराबरी के सिद्धांत के घोर विरोधी हैं। उनका मानना है कि ईश्वर अपनी अनुकम्पा जिस पर कर दे वो व्यक्ति नीच से भी ऊंच हो सकता है। आखिर परमात्मा ने ही जब भेद नही किया तो मनुष्य क्यूँ भेद करता है। परम पिता परमात्मा चाहे तो अपनी कृपा से किसी को भी नीच से ऊंच कर सकता है। वो कहते हैं –

" ऐसी लाल तुझ कौन करै
गरीब निवाज गुसयियाँ मेरा माथै धरै
जाती छोति जगत को लागौ ता पर तूही ढरै
नीचहु ऊंच करै मेरा गोबिंद काहू ते न डरे। "15

व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर बल : तत्कालीन समाज में जाति रुपी पराधीनता तो विद्यमान थी ही लेकिन इसके अतिरिक्त एक दूसरी पराधीनता भी विद्यमान थी जो कि राजनीतिक पराधीनता थी। उस समय देश में मुगलों का शासन था और मुगल शासक अपनी मनमानी करते थे। सामाजिक पराधीनता तो फिर भी बर्दास्त हो जाती है किन्तु राजनीतिक पराधीनता गले की फांस बन जाती है। सामाजिक पराधीनता में व्यक्ति आपस में ही जूझते रहते हैं किन्तु राजनीतिक पराधीनता पूरे समाज को दूषित कर देती है। सत्ता में बैठा शासक या नेता पूरे समाज तथा राष्ट्र में अपने ही नाम का डंका बजाना चाहता है जो कि किसी भी स्वस्थ समाज के लिए सही नही है। रविदास राजनीतिक पराधीनता को समाज के लिए घातक मानते हैं। इसीलिए वो अपनी सूक्तियों के माध्यम से लोगों को यह ज्ञात कराना चाहते हैं कि जब लोग आपस में ही कटते – मरते रहेंगे तो राजनीति की कुर्सी पर बैठे शासक का सामना कैसे कर पाएंगे। उस शासक का विरोध करने के लिए सबको अपने आपस के मतभेद भुलाकर एक होना होगा। रैदास पराधीनता को पाप के रूप में देखते हैं तभी तो वो कहते हैं –

" पराधीन पाप है जान लेहू रे मीत
रैदास दास पराधीन सो कौन करैं हैं प्रीत
पराधीन कौ दीन क्या , पराधीन बे – दीन
रैदास दास पराधीन कौ , साहिब समझे हीन। "16

मनुष्य को सुमार्ग पर चलने की प्रेरणा देना : यह स्वाभाविक मानवीय गुण है कि जब व्यक्ति को उसके मनमुताबिक फल की प्राप्ति होने लगती है या फिर व्यक्ति की सभी इच्छाओं की पूर्ति होने लगती है, या फिर व्यक्ति को सफलता मिलने लगती है तो व्यक्ति में गुरुर या फिर घमंड आ जाता है। वो व्यक्ति स्वयं को महान या फिर श्रेष्ठ समझने लगता है। रविदास जी कहते हैं कि अहंकार व्यक्ति के पतन का कारण होता है इसलिए मानव को इससे दूर रहना चाहिए। वो कहते हैं कि काम , क्रोध , माया , मद और मत्स्य आदि पाँच विकार होते हैं जो व्यक्ति की बुद्धि को भ्रमित कर देते हैं। जब ये पांचो शत्रु व्यक्ति पर हावी हो जाते हैं तो व्यक्ति बेकाबू हो जाता है और अनुचित आचरण करने लगता है। कुल मिलाकर रविदास कहना चाहते हैं कि व्यक्ति को अहंकार नही करना चाहिए न खुद को सर्वेसर्वा समझना चाहिए और न ही दूसरे को अपने से कमतर आंकना चाहिए तभी तो वो कहते हैं –

" कामक्रोध माइया मद मत्सर , इन पाचहु मिलि लूटे
हम बड कवि कुलीन हम पंडित , हम जोगी सनियासी
गियानी गुनी सूर हमदाते , इहु बुधि कवहि न नासी। "17

इतना ही नही रविदास व्यक्ति को नम्रता से व्यवहार करने की सलाह देते हैं। वो कहते हैं कि व्यक्ति को सभी के साथ सद्व्यवहार करना चाहिए फिर वो चाहे छोटा हो या बड़ा , अमीर हो या गरीब , उच्च हो या निम्न। सभी को आदर – सम्मान देना चाहिए। कभी किसी का अपमान या निरादर नही करना चाहिए। कभी किसी के साथ कटु वचन नही बोलना चाहिए। कभी किसी का दिल नही दुखाना चाहिए। कभी किसी को पीड़ा नही देनी चाहिए। कभी किसी से ईर्ष्या – द्वेष नही रखना चाहिए। कभी किसी के साथ दुर्व्यवहार नही करना चाहिए। वो सभी को प्रेमभाव से भाईचारे के साथ मिल – जुलकर रहने का संदेश देते हैं। इसीलिए वो कहते हैं –

" मुरखि मुख कमान है , कटुक वचन भयो तीर
संचारी मारे कान मंहि , साले सगल सरीर। "18

इतना ही नही संत रैदास समाज में एकता स्थापित करने के लिए तथा शांति बनाए रखने के लिए कथनी – करनी में एकता पर बल देते हैं। उन्होंने पर – निंदा का त्याग , अहंकार का त्याग आदि को महत्व दिया है। वो समाज को संदेश देते हैं कि व्यक्ति को अपना व्यवहार अच्छा रखना चाहिए तथा अपना आचरण शुद्ध रखना चाहिए। व्यक्ति को अहंकार नही करना चाहिए। दूसरों की निंदा या आलोचना नही करना चाहिए। यदि व्यक्ति इन सब गुणों को अपना ले तो समाज में एकता स्थापित होने से कोई नही रोक सकता। इस विषय में वो कहते हैं कि –

" पुत्र कलत्र का करहिं अहंकारु , ठाकरु लेखा मगहनहारू
फेडे का दुख सहै जीउ , पीछे किसहि पुकारहि पीउ पिउ। "19

संत रविदास व्यक्ति को निष्काम कर्म करने तथा सुख – दुख और लाभ – हानि को समान भाव से देखने पर बल देते हैं। वे मनुष्य से कहते हैं कि हर स्थिति में उसे समान आचरण करना है किसी भी तरह उसे विचलित नही होना है। संयम रखने वाले मनुष्य को सफलता जरुर मिलती है तथा व्यक्ति को अपना संयम नही खोना चाहिए। इसीलिए वे कहते हैं –

" सुख दुख हानि लाभ कह जउ समझहिं इक समान
रविदास तिन्हहि जानिए , जोगी पुरुष सुजान। "20

परोपकार तथा सेवाभाव को महत्व देना : रविदास समाज को तीन मूल आधार देना चाहते थे – सत्य ,

संतोष और सेवाभाव। उनका कहना था कि इन तीन मूल मन्त्रों के द्वारा ही समाज में प्रेम तथा शांति स्थापित की जा सकती है। वे कहते हैं मनुष्य को सदैव सत्य बोलना चाहिए , मन में संतोष की भावना रखनी चाहिए और हमेशा दूसरों की या फिर जरुरतमन्दो की सेवा करनी चाहिए। यही गुण किसी भी व्यक्ति को श्रेष्ठ बनाता है। वे कहते हैं –

" मन महिं सत्त रखहू , सभ करि सेवा लाग
सेवा सब कुछ देत है , रविदास सेवहिं मत त्याग। "21

संत रैदास ने परिश्रम को महत्व दिया है। वो कहते हैं कि व्यक्ति को सदैव परिश्रम करते रहना चाहिए। वे कहते हैं कि जब तक व्यक्ति का वश चले उसे कमाकर ही खाना चाहिए। कभी किसी पर निर्भर नही होना चाहिए और न ही कभी किसी का हक मारना चाहिए। व्यक्ति को हमेशा ईमानदार ही रहना चाहिए और ईमानदारी तथा मेहनत से ही कमाना चाहिए। वो कहते हैं कि परिश्रम करके कमाने वाला व्यक्ति उस व्यक्ति से सौ गुना महान होता है जो व्यक्ति बैठे–बैठे मुफ्त की रोटियां तोड़ता है या फिर दूसरों का हक मारता है। उनके अनुसार व्यक्ति का परिश्रम कभी व्यर्थ नही जाता। परिश्रम करने वाले व्यक्ति की मदद तो ईश्वर भी करता है। वे कहते हैं –

" रैदास स्रम करि खाइए , जो लौ पार बसाय
नेक कमाई , जो करहूं , कबहू न निहफल जाय
स्रम को ईश्वर जानि के , जऊ पूजहिं दिन रैन
रैदास तिम्हाहि संसार में , सदा मिलिहिं सुख चैन। "22

सदियों से समाज में ऐसा ही होता आया है कि मेहनत कोई और करता है और फल कोई और खाता है। व्यक्ति को उसके परिश्रम के बदले सही पारिश्रमिक या मजदूरी नही मिलता है। व्यक्ति जितना काम करता है उसके बदले उसको वो मजदूरी या वेतन नही मिलता जो कि जायज होता है या फिर जिसका वो हकदार होता है। रविदास इस बात के घोर विरोधी हैं कि व्यक्ति की मेहनत का फल उसे नही मिल रहा है। इसीलिए रविदास एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जहां व्यक्ति को उसके परिश्रम के बदले उसे उचित पैसे या फिर वेतन मिले। कभी किसी का हक न मारा जाए। सभी मनुष्य को उसके अपने – अपने हक की कमाई मिले। कभी किसी के साथ पारिश्रमिक के आधार पर भेदभाव न हो। तभी तो वे कहते हैं –

" काइम दाइम सदा पातिसाही
दोम न सेम एक सो आही। "23

रविदास ने एक ऐसे समाज का स्वप्न देखा था जहाँ किसी भी प्रकार की विभेदता न हो। और ऐसे समाज के निर्माण के लिए वो कहते हैं कि ऐसे समाज का निर्माण तभी हो सकता है जब सभी व्यक्ति सात्विक जीवन व्यतीत करें। उन्होंने काम वासना को समाज के लिए कोढ़ बताया है। उनका मानना है कि काम वासना से युक्त मानव समाज में अनैतिक व्यवहार करता है। वो समाज में अनैतिकता , अराजकता , विश्रृंखलता को फैलाता है जिसके कारण समाज में झगड़े–विवाद पनपते हैं। इसीलिए वे कहते हैं –

" भेष लियो पै भेद न जान्यो , अमृत लेइ विशै सो मान्यो
काम क्रोध में जनम गंवायो , साधू संगति मिलि राम न गयो। "24

व्यष्टि से समष्टि की ओर प्रेरित करना : संत रविदास समाज में लोगों को यह शिक्षा देते हैं कि मनुष्य को परोपकारी होना चाहिए , सिर्फ अपने ही बारे में नही सोंचना चाहिए बल्कि दूसरों के बारे में भी सोंचना चाहिए। मनुष्य को कुछ ऐसा काम करना चाहिए जिससे खुद के भले के साथ – साथ दूसरों का भी भला हो। खुद भी सही रास्ते पर चलें और दूसरों को भी सही मार्ग दिखाएं। वे व्यक्ति को नि: स्वार्थ भाव से आचरण करने की सलाह देते हैं जिसका पर्याय यह है कि व्यक्ति खुद भी सुकून से जिए और दूसरों को भी जीने दे , यदि किसी का भला नहीं कर सकता है तो बुरा भी न करें। तभी तो वो कहते हैं -

" आप तिरै औरन कूं तारै। "25

संत रविदास समाज को एक सूत्रता के डोर में बांधना चाहते हैं जिसके लिए उन्होंने आजीवन प्रयास किया। रविदास एक ऐसे राष्ट्र की कल्पना करते हैं जहाँ सभी व्यक्ति समान हो , जहाँ किसी प्रकार का कोई भेदभाव न हो। जहां न कोई शासक हो और न कोई शोषित हो। जहाँ उत्पादन की वस्तुओं का समान वितरण हो। जहां न कोई अमीर हो . न कोई गरीब हो , जहां न कोई उच्च हो न कोई निम्न हो। जहाँ लोगों को बोलने की आजादी हो , जहाँ किसी पर किसी तरह का कोई टैक्स न लगे। जहां सभी को उनका परिश्रम मिले , जहां सभी को जीवन जीने का समान अवसर मिले। जहां सभी सुखी एवं सम्पन्न हो। जहाँ सभी मिल-जुलकर प्रेम–भाव से रहते हो। जहाँ सिर्फ खुशहाली ही खुशहाली हो। तभी तो वे अपनी कविता बेगमपुरा में कहते हैं कि –

" अब हम खूब वतन घर पाया
ऊंचा खेर सदा मन भाया
बेगमपुरा शहर का नाउ
दुख अनहोनी नहीं तिही ठाऊ
न तसबीस खिराजू ना मालू
खौफ न खता न तरसु जवालू
कायेम दायेमु सदा पातिशाही
मदा न साम एक सा आही
आवादामु सदा मसहूर
ऊहाँ ठगी बसहिं मामूर
तिंउ – तिंउ सैर करहिं जिउ भावै
हरम महल मोंहि अटकावै
कह रैदास खलास चमारा
जो उस सहर सो मीत हमारा। "26

निष्कर्ष : कहा जा सकता है कि संत रविदास भारतीय समाज को भेदभाव रहित देखना चाहते थे। उनका मानना था कि यदि समाज का प्रत्येक व्यक्ति आत्म–परिष्कार अनेकविधि उत्कर्ष से सम्पन्न हो जाए तो सामाजिक एकीकरण अवश्यम्भावी है। इसीलिए उन्होंने मनुष्य के भीतर मानवता , समानता , एकता , सादगी , सेवाभाव , परोपकार , त्याग , समपर्ण की भावना को विकसित करने का प्रयास किया। संत रविदास सिर्फ तत्कालीन समाज तथा उस समय की छिन्न – भिन्न परिस्थितियों के विरुद्ध ही आवाज नही उठाते हैं बल्कि तत्कालीन मानव को सही मार्ग भी दिखाते हैं ताकि समाज में समरसता बनी रहे। वे अपनी उक्तियों , सूक्तियों तथा कविताओं के माध्यम से लोगों को सीख देते हैं ताकि समाज में स्वच्छ तथा स्वस्थ मानसिकता उत्पन्न हो और एक स्वस्थ तथा सुदृढ़ राष्ट्र का निमार्ण हो सके।

सहायक ग्रंथ सूची :

1. गुरु रविदास : वाणी : एवं महत्व : सम्पादक : मीरा गौतम : वाणी प्रकाशन : नई दिल्ली।
2. संत रविदास : सम्पादक : आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री : जगतराम एण्ड कम्पनी : आजादपुर , दिल्ली।
3. रैदास : धर्मपाल मैनी : साहित्य अकादमी : नई दिल्ली।
4. संत रैदास : कृतित्व , जीवन और विचार : डॉ. योगेन्द्र सिंह : अक्षर प्रकाशन प्राईवेट लिमिटेड : दरियागंज : नई दिल्ली।
5. गुरु रविदास : जीवन एवं दर्शन : डॉ. धर्मपाल सिहल : पब्लिकेशन्स ब्यूरो : पंजाब यूनिवर्सिटी , चंडीगढ़।
6. संत रविदास : जीवन और दर्शन : कन्हैयालाल चंचरीक : यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन : नई दिल्ली।
7. संत गुरु रविदास – वाणी : डॉ. बी.पी.शर्मा : नई सड़क : दिल्ली।
8. संत रविदास की निगुर्ण – भक्ति : डॉ. मीरा गौतम : निर्मल पब्लिकेशन , दिल्ली – 94।
9. संत रविदास : विचारक और कवि : डॉ. पदम गुरुचरण सिंह : नव – चिंतन प्रकाशन : न्यू जवाहर नगर : जालन्धर।
10. गुरु रविदास : डॉ. धर्मवीर : समता प्रकाशन : शाहदरा दिल्ली – 32
11. संतों एवं भक्तों का जीवन – चरित्र : डॉ. विक्रमसिंह राठौर : राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी , जोधपुर।
12. संत कवि रैदास : डॉ. भगवती प्रसाद निदारिया : इन्द्रप्रस्थ इंटरनेशनल : दिल्ली – 51
13. युग प्रवर्तक : संत गुरु रविदास : आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद : दीपक पब्लिसर्ज : जालन्धर
14. संत – काव्य में समभाव : डॉ. राजेन्द्र प्रसाद : संजय प्रकाशन : नई दिल्ली
15. भारतीय भक्ति साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक समरसता : सम्पादक : डॉ. सुनील बाबुराव कुलकर्णी : लोकभारती प्रकाशन , महात्मा गांधी मार्ग : इलाहबाद

संदर्भ ग्रन्थ :

1. रविदास वाणी : बी.पी.शर्मा : पृष्ठ – 90
2. वही : वही : बी.पी.शर्मा : पृष्ठ – 92
3. रविदास दर्शन : आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद : पृष्ठ – 131
4. वही : वही : पृष्ठ – 125
5. वही : वही : पृष्ठ – 130
6. वही : वही : पृष्ठ – 127
7 . संत गुरु रविदास वाणी : बी.पी.शर्मा : पृष्ठ – 69
8. रविदास दर्शन : आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद : पृष्ठ – 146
9. वही : वही : पृष्ठ – 150
10. वही : वही : पृष्ठ – 154
11. रविदास दर्शन : आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद : पृष्ठ – 134
12. वही : वही : पृष्ठ – 138
13. वही : वही : पृष्ठ – 140

14. वही : वही : पृष्ठ – 144
15. वही : वही : पृष्ठ – 185
16. वही : वही : पृष्ठ – 190
17. संत गुरु रविदास वाणी : बी.पी.शर्मा : पृष्ठ – 140
18. वही : वही : पृष्ठ – 142
19. वही : वही : पृष्ठ – 145
20. वही : वही : पृष्ठ – 148
21. रविदास दर्शन : आचार्य पपृथ्वी सिंह आजाद : पृष्ठ – 176
22. वही : वही : पृष्ठ – 115
23. रविदास दर्पण : डॉ. धर्मपाल सिंघल : पृष्ठ – 232
24. वही : वही : पृष्ठ – 234
25. संत रैदास : डॉ. योगेन्द्र सिंह : पृष्ठ – 171
26. रविदास वाणी : बी.पी.शर्मा : पृष्ठ – 100

क्वांटम युग: डिजिटल सुरक्षा के नए प्रतिमान

- आशुतोष सिंह
- राजीव कुमार राय
- डॉ. रौशन कुमार

सार

क्वांटम कंप्यूटिंग आधुनिक युग की एक ऐसी दोधारी तलवार है जो विज्ञान के नए द्वार खोलती तो है परंतु साथ ही साथ वर्तमान डिजिटल बुनियादी ढाँचे की नींव को हिला देने की क्षमता भी रखती है। यह आलेख क्वांटम कंप्यूटरों द्वारा पब्लिक की क्रिप्टोग्राफी पर मँडरा रहे अस्तित्वगत खतरों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। फरवरी-मार्च 2026 में गूगल द्वारा जारी साइबर सुरक्षा चेतावनी के संदर्भ में, जिसमें 2029 तक Q-Day की संभावना व्यक्त की गई है। यह पत्र ब्लॉकचेन, क्रिप्टोकरेंसी (विशेषकर बिटकॉइन) और वैश्विक संचार नेटवर्क की भेद्यता को रेखांकित करता है। शॉर के एल्गोरिदम (Shor's Algorithm) की क्षमता, 'स्टोर नाउ, डिक्रिप्ट लेटर' (SNDL) आक्रमण-रणनीति और पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी (PQC) में संक्रमण की अनिवार्यता को केंद्र में रखकर यह अध्ययन नीति-निर्माताओं, प्रौद्योगिकीविदों और सामान्य उपयोगकर्ताओं के लिए एक समग्र चेतावनी और कार्य-योजना प्रस्तुत करता है। इस शोध पत्र में NIST ने आधिकारिक तौर पर भविष्य के साइबर खतरों से निपटने के लिए तीन अंतिम मानकों (ML-KEM, ML-DSA और SLH-DSA) की घोषणा की है। इनका उद्देश्य उन डेटा को सुरक्षित करना है जिसे भविष्य के शक्तिशाली क्वांटम कंप्यूटर तोड़ सकते हैं।

बीज शब्द (Keywords): क्वांटम कंप्यूटिंग, साइबर सुरक्षा, पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी (PQC), शॉर का एल्गोरिदम, क्रिप्टोकरेंसी, Q-Day, SNDL, NIST मानक, बिटकॉइन भेद्यता।

प्रस्तावना : मानव सभ्यता के इतिहास में कुछ ऐसे क्षण आते हैं जब कोई नई तकनीक न केवल भविष्य के द्वार खोलती है, बल्कि वर्तमान की नींव पर भी प्रश्नचिह्न लगा देती है। क्वांटम कंप्यूटिंग ऐसा ही एक प्रतिमान-परिवर्तन (Paradigm Shift) है। एक ओर यह औषध-अनुसंधान, जलवायु मॉडलिंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और सामग्री-विज्ञान में असाधारण सफलताओं का वादा करती है तो वहीं दूसरी ओर यह उस डिजिटल ताले को भी

तोड़ने में सक्षम है जिस पर आज के समस्त इंटरनेट लेनदेन, बैंकिंग प्रणालियाँ, सरकारी संचार और व्यक्तिगत निजता निर्भर हैं।

7 फरवरी 2026 को गूगल के वैश्विक मामलों के अध्यक्ष केंट वॉकर और गूगल क्वांटम AI के संस्थापक हार्टमुट नेवेन ने एक ऐतिहासिक चेतावनी जारी की। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि क्वांटम कंप्यूटर्स वर्तमान क्रिप्टोग्राफिक मानकों के लिए एक महत्त्वपूर्ण खतरा बन चुके हैं और शत्रु-राष्ट्र तथा साइबर-अपराधी पहले से ही 'स्टोर नाउ, डिक्रिप्ट लेटर' (SNDL) आक्रमणों में संलग्न हैं। 25 मार्च 2026 को गूगल ने अपनी रिपोर्ट अद्यतन कर Q-Day की संभावित तिथि 2029 निर्धारित की तथा समस्त उद्योग जगत को 'पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी' (PQC) में संक्रमण हेतु इस समय-सीमा को लक्ष्य बनाने का आह्वान किया।

31 मार्च 2026 को गूगल क्वांटम AI ने एक और श्वेत-पत्र प्रकाशित किया जिसमें दर्शाया गया कि भविष्य के क्वांटम कंप्यूटर, क्रिप्टोकरेंसी की सुरक्षा आधार 'एलिप्टिक कर्व क्रिप्टोग्राफी' (ECC) को पहले की धारणा से कहीं कम संसाधनों में तोड़ सकते हैं। यह शोध-पत्र इन्हीं बहुआयामी खतरों, वर्तमान तैयारियों और आगे की राह का विश्लेषण करता है।

उद्देश्य एवं शोध-पद्धति: इस शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. वर्तमान RSA एवं ECC एन्क्रिप्शन पर क्वांटम कंप्यूटिंग के प्रभावों का सैद्धांतिक विश्लेषण करना।
2. शॉर के एल्गोरिदम (Shor's Algorithm) की कार्यप्रणाली और उसके व्यावहारिक खतरों को स्पष्ट करना।
3. बिटकॉइन सहित क्रिप्टोकरेंसी और ब्लॉकचेन पर क्वांटम हमलों की संभावना और प्रकृति का आकलन करना।
4. 'क्यू-डे' (Q-Day) और 'स्टोर नाउ, डिक्रिप्ट लेटर' (SNDL) जैसी रणनीतियों से उत्पन्न वर्तमान जोखिम का मूल्यांकन करना।
5. NIST द्वारा अनुमोदित पोस्ट-क्वांटम मानकों (ML-KEM, ML-DSA, SLH-DSA) का विश्लेषण करना और 2029 तक पोस्ट क्वांटम क्रिप्टोग्राफी (PQC) में सुरक्षित संक्रमण (Transition) की रणनीति का मूल्यांकन करना।

शोध-पद्धति की दृष्टि से यह पत्र मुख्यतः द्वितीयक स्रोत-आधारित है। गूगल के आधिकारिक श्वेत-पत्र, NIST के तकनीकी मानक-दस्तावेज़, Euronews, Ars Technica, CoinDesk और PYMNTS जैसे विश्वसनीय प्रकाशनों की रिपोर्टें, तथा नोबेल पुरस्कार विजेता भौतिकशास्त्री जॉन मार्टिनिस जैसे विशेषज्ञों के साक्षात्कार इसके प्राथमिक स्रोत हैं। विश्लेषण की पद्धति तुलनात्मक एवम् मूल्यांकनात्मक है।

1) क्वांटम कंप्यूटिंग: सिद्धांत और क्रांति

क) क्वांटम बिट (Qubit) और सुपरपोज़िशन : पारंपरिक कंप्यूटर डेटा को संसाधित करने के लिए 'बिट' (Bit) का उपयोग करते हैं, जो केवल 0 या 1 की बाइनरी स्थिति में सीमित होते हैं। इसके विपरीत, क्वांटम कंप्यूटर 'क्यूबिट' (Qubit) पर आधारित होते हैं। क्वांटम यांत्रिकी के 'सुपरपोज़िशन' (Superposition) सिद्धांत के कारण एक क्यूबिट एक साथ 0 और 1, दोनों अवस्थाओं में रह सकता है। इसके अलावा, 'क्वांटम एंटैंगलमेंट' (Quantum Entanglement) की मदद से कई क्यूबिट आपस में जुड़कर एक जटिल जाल बुनते हैं, जिससे कंप्यूटर अत्यंत तीव्र गति से समानांतर गणनाएँ (Parallel Calculations) करने में सक्षम हो जाता है। यही क्षमता क्वांटम कंप्यूटर को कुछ विशेष प्रकार की गणनाओं में विशेषकर बड़ी अभाज्य संख्याओं के गुणनखंडन में, पारंपरिक सुपरकंप्यूटरों की तुलना में अकल्पनीय रूप से तेज़ बना देती है। हालाँकि, वर्तमान में

उपलब्ध क्वांटम कंप्यूटर 'NISQ' (Noisy Intermediate-Scale Quantum) श्रेणी के हैं अर्थात उनके क्यूबिट अत्यधिक त्रुटि-प्रवण (Error-Prone) होते हैं और अभी तक व्यावसायिक रूप से एन्क्रिप्शन तोड़ने में असमर्थ हैं।

ख) शॉर का एल्गोरिदम: एन्क्रिप्शन का काल: 1994 में अमेरिकी गणितज्ञ पीटर शॉर ने एक क्रांतिकारी एल्गोरिदम प्रस्तुत किया जो किसी बड़ी संख्या के अभाज्य गुणनखंड को बहुपद समय (Polynomial Time) में हल कर सकता है। यह वही गणितीय समस्या है जिस पर RSA और ECC एन्क्रिप्शन की सुरक्षा टिकी है। सामान्य कंप्यूटर को 2048-बिट RSA कुंजी तोड़ने में अरबों वर्ष लगेंगे। 2023 में गूगल के शोधकर्ताओं ने दिखाया कि 10 लाख 'नॉइज़ी क्यूबिट' वाला क्वांटम कंप्यूटर इसे एक सप्ताह से भी कम समय में हल कर सकता है। और 2026 की अद्यतन रिपोर्ट के अनुसार, 256-बिट ECC (जो बिटकॉइन की रक्षा करती है) को तोड़ने के लिए केवल 1,200 लॉजिकल क्यूबिट और 5 लाख से भी कम भौतिक क्यूबिट की आवश्यकता होगी, जो पिछले अनुमान से लगभग 20 गुना कम है।

2) वर्तमान डिजिटल सुरक्षा और क्वांटम भेद्यता

क) पब्लिक की क्रिप्टोग्राफी की संरचना : आज का इंटरनेट दो स्तंभों पर खड़ा है RSA (Rivest-Shamir-Adleman) और ECC (Elliptic Curve Cryptography)। ये दोनों 'असममित एन्क्रिप्शन' (Asymmetric Encryption) के उदाहरण हैं जिनमें एक 'सार्वजनिक कुंजी' (Public Key) और एक 'निजी कुंजी' (Private Key) होती है। कोई भी व्यक्ति सार्वजनिक कुंजी से संदेश एन्क्रिप्ट कर सकता है, किंतु उसे केवल निजी कुंजी के स्वामी ही डिक्रिप्ट कर सकते हैं। इनकी सुरक्षा इस गणितीय कठिनाई पर आधारित है कि दो बड़ी अभाज्य संख्याओं का गुणनफल करना आसान है, लेकिन उस गुणनफल को पुनः उन दो संख्याओं में विभाजित करना असाधारण रूप से कठिन होता है। HTTPS, SSH, TLS, e-mail एन्क्रिप्शन, डिजिटल हस्ताक्षर ये सभी इसी आधार पर कार्य करते हैं। वेबसाइटों से लेकर बैंकिंग लेनदेन और सरकारी संचार तक सब कुछ इसी ढाँचे पर निर्भर है।

ख) क्वांटम हमले की प्रकृति: एक शक्तिशाली क्वांटम कंप्यूटर शॉर के एल्गोरिदम का उपयोग करते हुए किसी भी सार्वजनिक कुंजी से उसकी निजी कुंजी मिनटों में ज्ञात कर सकता है। इसका अर्थ है कि जो कुंजी आज 'अभेद्य' मानी जाती है वह भविष्य में एक क्वांटम कंप्यूटर के सामने कुछ ही क्षणों में खुल जाएगी। इसके परिणामस्वरूप इंटरनेट सुरक्षा की रीढ़ कहे जाने वाले TLS/HTTPS संचार चैनलों को आसानी से भेदा जा सकेगा, जिससे गोपनीय डेटा की गोपनीयता समाप्त हो जाएगी। इतना ही नहीं, यह तकनीक डिजिटल हस्ताक्षरों की नकल करने और एन्क्रिप्टेड संदेशों को बिना किसी वैध अनुमति के पढ़ने को संभव बना देगी, जो वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्था और व्यक्तिगत डेटा सुरक्षा के लिए एक गंभीर अस्तित्वगत खतरा है।

गूगल के वैज्ञानिकों ने यह भी स्पष्ट किया कि यह खतरा केवल भविष्य का नहीं है। वर्तमान में भी दुर्भावनापूर्ण कारक एन्क्रिप्टेड डेटा चुराकर इस उम्मीद में संग्रहीत कर रहे हैं कि जब क्वांटम कंप्यूटर आएंगे, तो वे उसे डिक्रिप्ट कर सकेंगे। इसे 'स्टोर नाउ, डिक्रिप्ट लेटर' (SNDL) आक्रमण कहते हैं और यह अभी से एक सक्रिय खतरा है।

3) Q-Day और SNDL: एक अदृश्य युद्ध

क) Q-Day की अवधारणा: 'Q-Day' (क्यू-डे) वह काल्पनिक क्षण है, जब एक क्रिप्टोग्राफिक रूप से प्रासंगिक क्वांटम कंप्यूटर वर्तमान की सुरक्षित एन्क्रिप्शन प्रणालियों को व्यावहारिक रूप से ध्वस्त करने में

सक्षम हो जाएगा। हालांकि इस समय सीमा को लेकर विशेषज्ञों में मतभेद हैं, किंतु गूगल जैसे तकनीकी दिग्गजों का अनुमान है कि यह निर्णायक मोड़ वर्ष 2029 के आसपास आ सकता है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि Q-Day को केवल एक भविष्य की घटना मान लेना आत्मघाती हो सकता है। PYMNTS की विश्लेषण रिपोर्ट के अनुसार, वास्तविक चुनौती यह नहीं है कि Q-Day कब आएगा बल्कि यह है कि क्या वैश्विक संगठन उस समय से पहले अपने सुरक्षा बुनियादी ढॉंचे को क्वांटम-सुरक्षित प्रणालियों में सफलतापूर्वक स्थानांतरित (Transi_ tion) कर पाएँगे क्योंकि जो डेटा 2026 में एन्क्रिप्ट किया जा रहा है, वह भविष्य में एक क्वांटम कंप्यूटर द्वारा खोला जा सकता है।

ख) SNDL: एक वर्तमान आपदा : 'स्टोर नाउ, डिक्रिप्ट लेटर' (SNDL) एक ऐसी रणनीति है जिसमें साइबर अपराधी और शत्रु-राष्ट्र आज भारी मात्रा में एन्क्रिप्टेड संवेदनशील डेटा, वित्तीय अभिलेख, व्यापार-रहस्य, सैन्य संदेश, व्यक्तिगत चिकित्सा डेटा चुराकर संग्रहीत कर रहे हैं। इस डेटा को वे अभी नहीं पढ़ सकते, लेकिन भविष्य में शक्तिशाली क्वांटम कंप्यूटर की सहायता से इसे डिक्रिप्ट करने की योजना है। गूगल ने 7 फरवरी 2026 की चेतावनी में स्पष्ट कहा कि ये अभियान सैद्धांतिक नहीं बल्कि सक्रिय हैं। Kiteworks के विश्लेषण के अनुसार, सरकारी एजेंसियों से 2026 में पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी अनुपालन की अपेक्षा की जाने लगी है, और CISA (साइबर सुरक्षा एवं अवसंरचना सुरक्षा एजेंसी) ने उत्पाद श्रेणियों की पहचान कर ली है जहाँ पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी तत्काल उपलब्ध है। यह खतरा लंबी अवधि के गोपनीय डेटा जैसे परमाणु कार्यक्रम, राजनयिक संचार, स्वास्थ्य रिकॉर्ड के लिए विशेष रूप से गंभीर है जिसे दशकों तक सुरक्षित रहना आवश्यक है।

4) क्रिप्टोकरेंसी और ब्लॉकचेन: विशेष संकट

क) बिटकॉइन पर क्वांटम खतरा : बिटकॉइन नेटवर्क अपनी सुरक्षा के लिए ECDSA (Elliptic Curve Digital Signature Algorithm) पर निर्भर करता है। जब कोई उपयोगकर्ता कोई लेनदेन करता है तो वह अपनी सार्वजनिक कुंजी नेटवर्क पर प्रसारित करता है। एक शक्तिशाली क्वांटम कंप्यूटर इस क्षणिक अवसर का लाभ उठाकर जब सार्वजनिक कुंजी उजागर होती है, उससे निजी कुंजी मिनटों में निकाल सकता है। इससे हमलावर मूल लेनदेन को रद्द कर फंड डायवर्ट कर सकता है। गूगल के नवीनतम श्वेत-पत्र के अनुसार लगभग 6.9 मिलियन बिटकॉइन (अनुमानित बाज़ार मूल्य: कई सौ अरब डॉलर) ऐसे पुराने पतों में हैं जहाँ सार्वजनिक कुंजी पहले से उजागर है जो सीधे क्वांटम हमले के प्रति संवेदनशील है। इनमें बिटकॉइन के रहस्यमय संस्थापक सांतोशी नाकामोतो के शुरुआती बिटकॉइन भी शामिल माने जाते हैं। नोबेल पुरस्कार विजेता भौतिकशास्त्री जॉन मार्टिनिस, जिन्होंने स्वयं गूगल के क्वांटम कंप्यूटर बनाने में योगदान दिया है, उन्होंने अप्रैल 2026 में CoinDesk को दिए साक्षात्कार में चेताया कि क्रिप्टो समुदाय को इसके लिए योजना बनानी होगी। यह एक गंभीर मसला है, जिससे निपटना ही होगा। उन्होंने यह भी कहा कि हालाँकि ऐसे शक्तिशाली क्वांटम कंप्यूटर बनाने में अभी पाँच से दस वर्ष लग सकते हैं, तथापि बिटकॉइन के विकेंद्रीकृत शासन की धीमी प्रकृति को देखते हुए अभी से तैयारी आवश्यक है।

ख) ब्लॉकचेन संक्रमण की चुनौतियाँ : बैंकों और परंपरागत वित्तीय संस्थाओं के विपरीत, ब्लॉकचेन नेटवर्क को सुरक्षा अद्यतन (Security Updates) एक केंद्रीय प्राधिकरण के निर्णय से नहीं, बल्कि विकेंद्रीकृत सहमति (Decentralized Consensus) से करने पड़ते हैं। बिटकॉइन समुदाय में किसी बड़े बदलाव पर आम सहमति बनाना अत्यंत कठिन और समय-साध्य है। इसके अतिरिक्त, पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी एल्गोरिदम के हस्ताक्षर और कुंजियाँ वर्तमान ECC से काफी बड़ी होती हैं जो ब्लॉकचेन की कुशलता और लेनदेन गति को

प्रभावित कर सकती हैं। PYMNTS की रिपोर्ट के अनुसार BOB (‘Build on Bitcoin’) के सह-संस्थापक एलेक्सई ज़म्यातिन ने जनवरी 2026 में कहा था कि अभी से क्वांटम सुरक्षा की चर्चा शुरू करना उचित है क्योंकि बिटकॉइन पारिस्थितिकी तंत्र में सहमति बनने में समय लगता है। यह विकेंद्रीकृत शासन की सबसे बड़ी चुनौती है।

5. पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी (PQC): समाधान और चुनौतियाँ

क) NIST के नए मानक : पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी उन नए गणितीय एल्गोरिदमों का समूह है जिन्हें इस प्रकार से रचा गया है कि क्वांटम कंप्यूटर भी उन्हें तोड़ने में सफल न हो सकें। अमेरिकी मानक संस्था NIST ने 13 अगस्त 2024 को एक ऐतिहासिक उपलब्धि प्राप्त करते हुए अपने पहले तीन पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी मानक जारी किए:

- FIPS 203 - ML-KEM (Module-Lattice-Based Key-Encapsulation Mechanism): सामान्य एन्क्रिप्शन और कुंजी-विनिमय के लिए प्राथमिक मानक। CRYSTALS-Kyber एल्गोरिदम पर आधारित।
- FIPS 204 - ML-DSA (Module-Lattice-Based Digital Signature Algorithm): डिजिटल हस्ताक्षर के लिए प्राथमिक मानक। CRYSTALS-Dilithium पर आधारित। इसे IBM के शोधकर्ताओं ने विकसित किया।
- FIPS 205 - SLH-DSA (Stateless Hash-Based Digital Signature Standard): ML-DSA के बैकअप के रूप में, उच्चतम दीर्घकालिक सुरक्षा के लिए।

ये तीनों मानक ‘लैटिस-आधारित क्रिप्टोग्राफी’ (Lattice-Based Cryptography) की जटिल गणितीय संरचनाओं पर आधारित हैं जिन्हें क्वांटम कंप्यूटरों के लिए हल करना गणितीय रूप से अत्यंत कठिन माना जाता है। क्लाउडफ्लेयर (Cloudflare) के आँकड़ों के अनुसार, मध्य-2024 तक क्लाउडफ्लेयर (Cloudflare) के सर्वरों पर आने वाले 16% से अधिक मानव-जनित अनुरोध पहले से ही पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी कुंजी-विनिमय से सुरक्षित हो चुके थे।

ग) गूगल की अपनी तैयारी: गूगल ने यह केवल एक सैद्धांतिक चेतावनी नहीं दी है, बल्कि वह स्वयं भी संक्रमण प्रक्रिया में अग्रणी है। कंपनी ने अपनी सेवाओं में ML-KEM आधारित क्वांटम-प्रतिरोधी कुंजी-विनिमय पहले से लागू कर दिया है। Android 17 बीटा संस्करण में ML-DSA आधारित ‘Android Verified Boot’ परीक्षण आरंभ किया गया है। Google Play ने नए ऐप्स के लिए ML-DSA हस्ताक्षर कुंजियाँ उत्पन्न करना शुरू कर दिया है।

5) संक्रमण की बाधाएँ

पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी में संक्रमण न केवल तकनीकी है, बल्कि एक विशाल लॉजिस्टिकल, वित्तीय और समन्वयात्मक चुनौती भी है। Trusted Computing Group के एक सर्वेक्षण के अनुसार, 91% व्यवसायों के पास क्वांटम-सुरक्षित एल्गोरिदम में संक्रमण के लिए कोई औपचारिक रोडमैप नहीं है। संक्रमण की प्रमुख चुनौतियाँ इस प्रकार हैं:

❒ **पैमाने की समस्या:** अरबों उपकरणों,वेब सर्वर, राउटर, IoT डिवाइस, स्मार्टफोन, एम्बेडेड सिस्टम को नए एल्गोरिदम के साथ अद्यतन करना एक विशाल इंजीनियरिंग कार्य है।

❒ **प्रदर्शन प्रभाव:** पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी एल्गोरिदम की कुंजियाँ और हस्ताक्षर वर्तमान RSA/

ECC से काफी बड़े होते हैं, जो बैंडविड्थ और प्रसंस्करण समय को प्रभावित करते हैं।

❒ **विरासती प्रणालियाँ:** बहुत सी सरकारी और औद्योगिक प्रणालियाँ दशकों पुरानी हैं जिनमें क्रिप्टोग्राफी 'हार्ड-कोडेड' है। इन्हें पुनर्लेखन अत्यंत महँगा और जटिल है।

❒ **वैश्विक समन्वय:** विभिन्न देशों और संस्थाओं के बीच मानकों पर एकमत होना आवश्यक है। NIST के मानक वैश्विक स्तर पर स्वीकार्य आधार प्रदान करते हैं, लेकिन क्षेत्रीय विविधताएँ जटिलता बढ़ाती हैं।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए 'क्रिप्टोग्राफिक चपलता' (Cryptographic Agility) का सिद्धांत महत्त्वपूर्ण है अर्थात ऐसे सिस्टम डिज़ाइन करना जिनमें एल्गोरिदम को पूरे तंत्र को पुनःलिखे बिना बदला जा सके। Palo Alto Networks की पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी मार्गदर्शिका के अनुसार, ML-KEM + X25519 जैसे 'हाइब्रिड परिनियोजन' (Hybrid Deployments) एक व्यावहारिक संक्रमण-मार्ग प्रदान करते हैं जो पुरानी और नई प्रणालियों के बीच सामंजस्य सुनिश्चित करते हैं।

6. भारत के संदर्भ में: अवसर और दायित्व

भारत, जो UPI और DigiLocker जैसे अत्यंत सफल डिजिटल अवसंरचना का संचालन करता है तथा 2024-25 में 250 बिलियन से अधिक UPI लेनदेन संपन्न कर चुका है, के लिए यह खतरा विशेष रूप से प्रासंगिक है। आधार पहचान प्रणाली जिसमें 140 करोड़ नागरिकों के बायोमेट्रिक डेटा संग्रहीत हैं, यदि किसी SNDL आक्रमण का शिकार बने, तो परिणाम अकल्पनीय हो सकते हैं।

भारत सरकार का राष्ट्रीय क्वांटम मिशन (National Quantum Mission), जिसे 2023 में 6000 करोड़ रुपये के बजट के साथ अनुमोदित किया गया, एक सही दिशा में उठाया गया कदम है। किंतु, पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी में संक्रमण की रणनीति, सरकारी पोर्टल्स का ऑडिट और क्रिप्टोग्राफिक चपलता को अनिवार्य सरकारी नीति बनाने की दिशा में और ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है।

7. निष्कर्ष

क्वांटम कंप्यूटिंग का उदय मानव सभ्यता की तकनीकी क्षमता का एक अभूतपूर्व प्रमाण है, परंतु यह हमारी डिजिटल नींव के लिए सबसे जटिल चुनौती भी है। गूगल की 2026 की चेतावनी कोई दूरस्थ भविष्यवाणी नहीं बल्कि एक सक्रिय संकट की स्वीकृति है।

इस शोध-पत्र के विश्लेषण से निम्नलिखित निष्कर्ष उभरते हैं:

प्रथम, शॉर के एल्गोरिदम की क्षमता में सुधार और क्वांटम हार्डवेयर की प्रगति को देखते हुए 2029 की समय-सीमा अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। द्वितीय, SNDL आक्रमण एक वर्तमान वास्तविकता है जो दीर्घकालिक संवेदनशील डेटा के लिए तत्काल संकट उत्पन्न कर रही है। तृतीय, NIST के ML-KEM, ML-DSA और SLH-DSA मानक उपलब्ध हैं और उन्हें अभी से लागू किया जाना चाहिए। चतुर्थ, ब्लॉकचेन और क्रिप्टोकरेंसी के लिए संक्रमण विशेष रूप से जटिल है और इसके लिए विकेंद्रीकृत समुदायों में तत्काल संवाद आवश्यक है।

क्वांटम युग में डिजिटल सुरक्षा कोई मंज़िल नहीं, बल्कि एक कभी न रुकने वाला सफर है। अगर हम 2029 तक 'पोस्ट-क्वांटम क्रिप्टोग्राफी' को पूरी तरह नहीं अपना सके, तो पिछले 50 सालों में हमने डिजिटल भरोसे और सुरक्षा की जो इमारत खड़ी की है, वह ताश के पत्तों की तरह बिखर सकती है। यह संकट तकनीक की कमी का नहीं, बल्कि हमारी सोच और राजनैतिक इच्छा शक्ति की परीक्षा है। असली सवाल यह नहीं कि क्या हम यह बदलाव कर सकते हैं, बल्कि सवाल यह है कि क्या हम इसे वक्त रहते पूरा करेंगे।

संदर्भ सूची :

1. Walker, K. & Neven, H. (February 6, 2026). The quantum era is coming. Are we ready to secure it? Google Research Blog. https://blog.google/innovation-and-ai/technology/safety-security/the-quantum-era-is-coming-are-we-ready-to-secure-it/
2. Babbush, R. & Neven, H. (March 31, 2026). Safeguarding cryptocurrency by disclosing quantum vulnerabilities responsibly. Google Research Blog. https://research.google/blog/safeguarding-cryptocurrency-by-disclosing-quantum-vulnerabilities-responsibly/
3. Google Security Team. (March 25, 2026). Google sets 2029 PQC migration timeline. Google Cybersecurity Report. [Referenced via PYMNTS, March 2026]
4. NIST. (August 13, 2024). NIST Releases First 3 Finalized Post-Quantum Encryption Standards. U.S. Department of Commerce. https://www.nist.gov/news-events/news/2024/08/nist-releases-first-3-finalized-post-quantum-encryption-standards
5. NIST. (2024). FIPS 203: Module-Lattice-Based Key-Encapsulation Mechanism Standard (ML-KEM). https://csrc.nist.gov/pubs/fips/203/final
6. NIST. (2024). FIPS 204: Module-Lattice-Based Digital Signature Algorithm (ML-DSA). U.S. Department of Commerce.
7. NIST. (November 2024). NIST IR 8547: Transition to Post-Quantum Cryptography Standards (Initial Public Draft). https://nvlpubs.nist.gov/nistpubs/ir/2024/NIST.IR.8547.ipd.pdf
8. Martinis, J.M. (April 7, 2026). Interview: Bitcoin quantum threat is real and closer than it looks. CoinDesk. https://www.coindesk.com/business/2026/04/07/bitcoin-quantum-threat-is-real-and-closer-than-it-looks-says-nobel-physicist
9. PYMNTS. (March 25, 2026). Google Says Q-Day Coming, Migration Deadline Now 2029. https://www.pymnts.com/cybersecurity/2026/breaking-google-says-q-day-coming-migration-deadline-now-2029/
10. PYMNTS. (April 2, 2026). Why Google Thinks Crypto Is Vulnerable to Quantum Progress. https://www.pymnts.com/cryptocurrency/2026/why-google-thinks-crypto-is-vulnerable-to-quantum-progress/
11. Euronews. (March 27, 2026). A new era of quantum computing may pose threats closer than we think, Google warns. https://www.euronews.com/next/2026/03/27
12. Kiteworks. (February 10, 2026). Google Warns Quantum Threats to Encryption

Are Imminent. https://www.kiteworks.com/cybersecurity-risk-management/google-quantum-computing-encryption-threat-post-quantum-cryptography/

13. Help Net Security. (March 26, 2026). Google races to secure encryption before quantum threats arrive. https://www.helpnetsecurity.com/2026/03/26/google-pqc-migration-timeline-2029/
14. Cloudflare Blog. (August 2024). NIST's first post-quantum standards. https://blog.cloudflare.com/nists-first-post-quantum-standards/
15. IBM Newsroom. (August 13, 2024). IBM-Developed Algorithms Announced as NIST's First Published Post-Quantum Cryptography Standards. https://newsroom.ibm.com/2024-08-13-ibm-developed-algorithms-announced-as-worlds-first-post-quantum-cryptography-standards
16. Palo Alto Networks. (2026). A Complete Guide to Post-Quantum Cryptography Standards. https://www.paloaltonetworks.com/cyberpedia/pqc-standards
17. Gizmodo. (March 26, 2026). Google Issues New Warning About the Quantum Computing Security Apocalypse. https://gizmodo.com/google-issues-new-warning-about-the-quantum-computing-security-apocalypse-2000738326
18. BritBrief. (March 26, 2026). Google Warns Quantum Threat to Internet Security Accelerating. https://britbrief.co.uk/tech/cybersecurity/google-warns-quantum-threat-to-internet-security-accelerating.html
19. सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार. (2023). राष्ट्रीय क्वांटम मिशन। नई दिल्ली: भारत सरकार।

प्रारंभिक हिन्दी पत्रकारिता में नवचेतना एवं जीवंतता के विविध आयाम

- डॉ. राजेश कुमार पांडेय

सार

प्रारंभिक हिन्दी पत्रकारिता और भारतेन्दु युग के साहित्य का संगम भारत में केवल सूचनाओं का प्रसार नहीं, बल्कि एक व्यापक सांस्कृतिक और वैधानिक नवजागरण का उद्घोष था। इस कालखंड की पत्रकारिता ने औपनिवेशिक दासता के विरुद्ध जनमत तैयार करने और समाज में व्याप्त जड़ता को तोड़ने में एक 'मिशन' की तरह कार्य किया। 1829 में राजा राममोहन राय के 'बंगदूत' से शुरू हुई यह यात्रा 20वीं सदी के प्रारंभ तक 'सरस्वती', 'केसरी' और 'कर्मयोगी' जैसे पत्रों के माध्यम से राष्ट्रीय आंदोलन का मुख्य स्तंभ बन गई। जहाँ तिलक के पत्रों ने पत्रकार को 'जनता का कोतवाल' मानकर निर्भीकता का पाठ पढ़ाया, वहीं अरविन्द घोष के विचारों को प्रसारित करने वाले पत्रों ने स्पष्ट किया कि 'स्वराज्य' राष्ट्र की आत्मा है, जिसे याचना से नहीं बल्कि आत्म-संघर्ष से प्राप्त किया जा सकता है। इसी दौर में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता को 'हास्य और व्यंग्य' का एक नया शस्त्र दिया। पत्रकारिता के क्षेत्र में हास्य-व्यंग्य का यह सिलसिला 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका', 'हिन्दी प्रदीप' और 'ब्राह्मण' जैसे पत्रों में निरंतर प्रवाहित हुआ। बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप' में सरकारी व्यवस्था की दमनकारी नीतियों को व्यंग्यात्मक परिभाषाओं में बांधा, जहाँ उन्होंने 'चुंगी' को व्यापार का मुनाफा चाटने वाली 'डाइन' और 'पुलिस' को 'सभ्य लोगों की फजीहत की तरकीब' बताया। इन पत्रों में प्रकाशित 'स्यापे' (शोक-गीतनुमा व्यंग्य) और चुटकुलों ने जनता के भीतर के डर को कम किया और उन्हें सत्ता की गलत नीतियों पर हंसने व प्रश्न करने का साहस दिया। आगे चलकर द्विवेदी युग में 'मतवाला' और 'मदारी' जैसे पत्रों ने इस परंपरा को और अधिक धारदार बनाया। 'मतवाला' ने अपने 'चाबुक' स्तंभ के जरिए साहित्यिक और सामाजिक विसंगतियों पर चोट की, वहीं 'मदारी' ने अपने तीखे दोहों से देश का अहित करने वालों को सचेत किया। निष्कर्षतः, प्रारंभिक हिन्दी पत्रकारिता ने एक ओर जहाँ गंभीर राजनैतिक विश्लेषण और स्वदेशी का आह्वान किया, वहीं दूसरी ओर हास्य-व्यंग्य के तेजाबी तेवरों से समाज के हर वर्ग—चाहे वह भ्रष्ट

नौकरशाही हो, ढोंगी धर्मगुरु हों या अत्याचारी शासक-सभी की जवाबदेही तय की। यह पत्रकारिता आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद की वह नींव थी, जिसने जनमानस में स्वाभिमान और क्रांति का संचार किया।

बीज शब्द: नवजागरण, स्वराज्य, देशभक्ति, स्वदेशी, बहिष्कार, जनमत, निर्भीकता, साम्राज्यवाद, दमन, हास्य-व्यंग्य, यथार्थवाद, प्रहसन, पाखंड-खंडन, आर्थिक शोषण, टैक्स, सामंतवाद, नौकरशाही, चाटुकारिता, रंगभेद, स्यापा, पैरोडी, जनवादी, सांस्कृतिक चेतना, साहित्यिक परिष्कार, स्वतंत्रता संग्राम, बंगदूत, सरस्वती, हिन्दी प्रदीप, मतवाला, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, नवचेतना।

मानव जीवन की आपाधापी में हिन्दी पत्रकारिता नयी धारा के अनुकूल ढालने का माध्यम रही, और साहित्य तथा राजनीति को एक साथ लेकर आगे बढ़ी। जैसे देश की आजादी का इतिहास बलिदान की स्याही में लिखा गया, वैसे ही पत्रकारिता का इतिहास भी त्याग और तपस्या की गाथा है। पत्र-पत्रिकाएं लोकवाणी होते हैं, इससे लोकमत के निर्माण में सहायता मिलती है, जिससे सही, सशक्त एवं प्रभावशाली अभिव्यक्ति संभव हो पाती है। इससे विमुख होनेपर समाचार पत्र की जिजीविषा के दम घुटने लगते हैं। इसका उद्देश्य जनता की इच्छाओं विचारों को समझना और उन्हें व्यक्त करना है। जनता की वांछनीय भावनाओं को जागृत करना और सार्वजनिक दोषों को निर्भयतापूर्वक प्रकट करना हिंदी पत्रकारिता का लक्ष्य है। हिन्दी समाचार-पत्रों का जनमत बनाने एवं पत्रकारिता के दायित्व निर्वाह में उल्लेखनीय योगदान रहा है। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय हिन्दी के अनेक पत्रों का दृष्टिकोण देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत रहा। राजा राममोहन राय ने समस्त भारतीय जनमानस को नवजागरण का सन्देश देने के उद्देश्य से 10 मई, 1827 को साप्ताहिक 'बंगदूत' अँगरेजी, बॅगला, फारसी तथा हिन्दी भाषा में निकाला। 1868 तक अनेक पत्र प्रकाशित होने लगे।

सन् 1900 में मासिक 'सरस्वती' का प्रकाशन काशी से हुआ तथा इसके सम्पादक 1903 में महावीरप्रसाद द्विवेदी नियुक्त हुए । सन् 1881 में प्रकाशित 'कवितेन्दु' मासिक पत्र कविता से सम्बन्धित था। किसानों का 'कृषिकारक' पत्र अमरावती से निकाला गया। 1883 में जबलपुर से साप्ताहिक 'शुभचिन्तक' का प्रकाशन शुभचिंतक प्रेस से हुआ, जिसके सम्पादक सीताराम थे। 1 मार्च 1885 से ही नरसिंहपुर से नन्हेंलाल द्वारा सम्पादित मासिक 'सरस्वती विलास' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यहीं से हिन्दी पाक्षिक 'आर्यसेवक' प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निकाला गया।

सन् 1893 में नारायण बालकृष्ण राव नाखरे ने सागर से मासिक 'विचारवाहन' का प्रकाशन थियोसोफिकल सोसायटी के जीवनदर्शन के प्रचार हेतु किया। 13 जून 1906 को नागपुर में तिलक के दो व्याख्यान स्वदेशी और बंगभंग के विरोध में जातीय स्तर पर हुए थे। व्यापारियों की सभा में उन्होंने स्वदेशी का महत्व समझाते हुए जनता और व्यापारियों से अनुरोध किया था कि वे लोग विलायती वस्त्र और शक्कर का व्यापार करना त्याग दें। इनके प्रयत्नों से प्रदेश के कई स्थानों में स्वदेशी की अनेक दुकानें खुल गईं और अनेक व्यापारियों ने विदेशी माल न मँगाने की प्रतिज्ञा की।

17 जुलाई 1906 को नागपुर में खापर्डे की अध्यक्षता में विद्यार्थियों की एक विराट् सभा हुई थी। इस सभा में उपस्थित विद्यार्थियों ने विदेशी वस्त्रों के व्यवहार का त्याग करने का निश्चय किया । नागपुर में यह पहला अवसर था जब विद्यार्थियों ने विलायती वस्त्रों की होली जलाई थी। बंगभंग के विरोध में स्वदेशी और बायकाट का आन्दोलन उठने के पूर्व देवरी में स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार का आन्दोलन जोर पकड़ा। सभाओं तथा पंचायतों द्वारा स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार करने, देवरी के बुने स्वदेशी वस्त्र पहनने और विदेशी शक्कर न खाने की प्रतिज्ञा कराई जाती थी।

'हिन्द केसरी' ने "क्या हमारे रोने पर भी रोक है" शीर्षक से एक लम्बा तथा तीखा लेख लिखा। समस्त

सार्वजनिक सभाओं में स्वदेशी मालों का अधिकाधिक प्रयोग करने तथा समस्त अँगरेजी वस्तुओं का बहिष्कार करने के लिए सुदृढ़ प्रतिज्ञाएँ की गईं। हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास भारत की सामाजिक तथा सांस्कृतिक जागृति और नवचेतना का प्रेरणाप्रद इतिहास है। देश की स्वतंत्रता की लड़ाई के इतिहास के लगभग समानान्तर ही पत्रकारिता का इतिहास है। जैसे-जैसे राजनीतिक चेतना बढ़ती जा रही थी और जनता में राष्ट्रीयता की भावना का उदय हो रहा था, वैसे-वैसे पत्रों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी और साथ ही समाचार पत्रों की गर्दन पर साम्राज्यवादी दमन का फंदा अधिक कसा जा रहा था।

जनता को जागृत करने एवं उसे स्वातंत्र्योन्मुख बनाने के उद्देश्य से 4 फरवरी 1881 को मराठी साप्ताहिक 'केसरी' और अँगरेजी साप्ताहिक 'मराठा' का प्रकाशन तिलक ने आरंभ किया। 'केशरी' के प्रथम अग्रलेख में लिखा गया कि पत्रकार जनता का कोतवाल एवं वकील है। 'केसरी' निर्भीक होकर अँगरेज नौकरशाही पर अपने तीखे-तीक्ष्ण प्रहार करता था और 'मराठा' उसका साथ देता था।

ऋषि जैमिनी कौशिक 'बरुआ' ने लिखा है कि 'सरस्वती' तथा 'प्रभा' दोनों हिन्दी मासिक अपने युग के दो पूरक दृष्टिकोणों का प्रतिनिधित्व करते थे। 'सरस्वती' के माध्यम से महावीरप्रसाद द्विवेदी विशुद्ध साहित्यिक व शिक्षाधारित, जनहिताय संस्कृति पर लगे अंकुशों से अवरुद्ध मार्ग को प्रशस्त करने में लगे थे। 'प्रभा' के माध्यम से माखनलाल चतुर्वेदी इस राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना की घायल साँसों का पोषण करने में लगे थे, जो मरण-विनाश से घिरी अबोली और बावरी सी बनी हुई थी। 'सरस्वती' अध्ययनशील साहित्य की प्रेरक थी, जबकि 'प्रभा' राजनीतिक आंदोलन के क्षणों में प्रेरक वाणी का शंख बजाने में विश्वास करती थी।

उरई से कृष्णगोपाल शर्मा ने साप्ताहिक 'उत्साह' का प्रकाशन प्रारंभ किया। शर्माजी ने गाँधीजी के असहयोग आंदोलन को अधिक तीव्र बनाने के लिए उसे निकाला था। अँगरेजों की तीव्र आलोचना के कारण 'उत्साह' की जमानत जब्त हो गई। विजय प्राप्ति के लिए पत्र अपने देशकाल के लेख और कविताएँ छापने का काम ही नहीं करते थे, अपितु विदेशों में हो रहे स्वतंत्रता संग्रामों के समाचार भी बड़े मनोयोग से प्रकाशित करते थे। 'कर्मयोगी' ने 'वीर वीरांगनाएँ' शीर्षक से एक लेखमाला प्रकाशित की। इससे युवकों में कुछ कर दिखाने की भावना साकार रूप लिए हुई थी। युवक संपादक भी नाना प्रकार से देशसेवा कार्यों में जुटे रहते थे। उन दिनों उग्रवादियों के कारनामों के प्रति जनता में बड़ी ललक थी, लेकिन उनके समाचारों को जानना या छापना खतरनाक था। फिर भी निडर पत्रकार इस काम को बखूबी अंजाम देते थे; भय और चिंता जैसे शब्द उन दिनों संपादकों के शब्दकोश में होते ही नहीं थे।

आर्यसमाज के समाचार-पत्रों ने सर्वतोन्मुखी सामाजिक चेतना में जितना क्रांतिकारी मंत्र फूंका था, वह भारतीय समाज सुधार के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है, लेकिन उन पत्रों में एकनिष्ठता और सिद्धांत दृढ़ता जरूरत से ज्यादा रहती थी। ऐसे पत्रों का भी अभाव नहीं था जो पारस्परिक समन्वय और सांस्कृतिक भावनाओं को बढ़ावा देते थे। इस संबंध में उन दिनों 'महारथी' की धूम थी।

1858 के पश्चात् भारतीय अर्थव्यवस्था पर अनेक प्रहार होते रहे थे। नये-नये आर्थिक कदम उठाए जा रहे थे। आयकर, विक्रयकर, लाइसेंस कर और नमक कर आदि के माध्यम से लगातार भारतीय जनता का आर्थिक शोषण किया जा रहा था। इस शोषणकारी नीति के विरोध में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं ने पुरजोर अभियान चलाया और इन करों के विरोध में जो सभाएँ होती थीं, उनकी कार्यवाही वे विस्तार से प्रकाशित कर सामान्य जनता तक पहुँचाते थे। हिंदी पत्रों ने खर्चीले प्रशासन की भी आलोचना की। अँगरेज अफसर भारत में बहुत भारी वेतन लेते थे; यहाँ तक कि यूरोपीय अफसर अपने देश में कठिनाई से प्रतिवर्ष 5 या 6 हजार रुपये ही कमा पाते थे, जबकि वे भारत में 3 या 4 हजार रुपये प्रतिमाह कमा लेते थे। ऐसे बेमेल वातावरण में भारतीयों की स्थिति सुधरने का

प्रश्न ही खड़ा नहीं होता था।

आर्थिक शोषण से भारतीयों में असंतोष की भावना घनीभूत होकर उभर रही थी। इस असंतोष को पैने ढंग से उभारने का कार्य हिन्दी पत्रकारिता ने अपने हाथ में लेकर स्वदेशी आन्दोलन को जन्म दिया। 'भारतजीवन' ने शिक्षित भारतीयों को संबोधित करते हुए कहा कि यदि वे भारत की आर्थिक दशा सुधारना चाहते हैं तो उन्हें विदेशी चीजों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। भारतीय असंतोष का मूल कारण अँगरेजों की जाति एवं रंगभेद की नीति भी थी। यह नीति 1859 के बाद जोर पकड़ती गई और रंग-भेद उनका जन्मजात गुण बन गया था। हिन्दी पत्रों ने इस नीति के विरुद्ध सिंहनाद किया। सरकारी सेवा के अतिरिक्त हिन्दी पत्रकारिता ने लेजिस्लेटिव कौंसिल में भारतीय प्रतिनिधित्व की माँग भी सरकार के सामने रखी एवं इसके लिए जनता में एक नवजागरण उत्पन्न किया।

'हिन्दोस्तान' ने भारतीयों को आंदोलित किया कि अँगरेज जो लंदन में बैठे राज कर रहे हैं, वे भारत की आर्थिक दुर्दशा को नहीं समझ सकते; अतः आप स्वयं आन्दोलन करो और ब्रिटिश संसद में प्रवेश लो। उग्रवादी पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों की लेखनी ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध आग और शोले उगलने आरंभ कर दिए थे। 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका ने इन शब्दरूप शोलों से भारतीय जनता को प्रेरित एवं जागृत किया: "ओ स्वतन्त्रता! तुम भारत को छोड़कर क्यों भाग गई और अकेला छोड़ दिया? भगवान की बेरी, विश्व की प्रेमिका और गुणों का पुन्ज तुम कहाँ चली गई? भारतवासी इस हानि पर बुरी तरह सुबक रहे हैं"। अन्य हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं जैसे 'कायस्थ समाचार', 'अभ्युदय', 'वसुंधरा', 'हिन्दोस्तान', 'एडवोकेट', 'इंडियन नेशन' तथा 'कर्मयोगी' आदि ने उदारवादियों की "भीख माँगने वाली नीति" का विरोध किया। 'हिन्दुस्तान' (लाहौर) ने अरविन्द घोष के विचारों को उद्धृत करते हुए लिखा कि स्वराज्य एक राष्ट्र के लिए उसी प्रकार है, जिस प्रकार शरीर के लिए आत्मा जो मनुष्य को जीवित रखने के लिए इससे पृथक् नहीं की जा सकती। इसे दूसरों से भीख माँगकर प्राप्त नहीं किया जा सकता बल्कि मनुष्य स्वयं अपने प्रयत्नों से प्राप्त करता है। इस प्रकार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता ने जनमानस में नवीन चेतना का संचार किया।

'कायस्थ समाचार', 'अभ्युदय', 'वसुंधरा', 'हिन्दोस्तान', 'एडवोकेट', 'इंडियन नेशन' तथा 'कर्मयोगी' आदि ने उदारवादियों की "भीख माँगने वाली नीति" का विरोध किया. 'हिन्दुस्तान' (लाहौर) ने अरविन्द घोष के विचारों को लिखते हुए कहा कि स्वराज्य एक राष्ट्र के लिए उसी प्रकार है जिस प्रकार शरीर के लिए आत्मा, जो मनुष्य को जीवित रखने के लिए इससे पृथक् नहीं की जा सकती. इसे दूसरों से भीख माँगकर प्राप्त नहीं किया जा सकता, बल्कि मनुष्य स्वयं अपने प्रयत्नों से प्राप्त करता है। इस प्रकार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता ने जनमानस में नवीन चेतना का संचार किया।

युगीन विकृतियों पर व्यंग्य के स्वर

भारतेन्दु की असाधारण और उर्वर प्रतिभा ने जहाँ 'नई चाल' की हिन्दी को ढालकर उसे कविता, नाटक, निबंध आदि विधाओं में प्रवेश कर सकने की अभूतपूर्व लचीली क्षमता दी और जहाँ उसने हमारे साहित्य की धारा को एक सर्वथा नया यथार्थवादी, राष्ट्रीय और जनवादी मोड़ देने का कार्य किया, वहाँ उसने तत्कालीन जीवन को भावभूमियों की अनेकता में चित्रित कर उस युग के तथा परवर्ती लेखकों के लिए वस्तु और रूप के नए क्षितिज भी उद्घाटित किये. इस संबंध में यह कहना शायद अतिशयोक्ति न होगी कि हिन्दी में भारतेन्दु ने ही पहली बार हास्य और व्यंग्य को सामाजिक जीवन के चित्रण के सशक्त माध्यम के रूप में स्थापित किया.

भारतेन्दु-युग में बहुत कुछ ऐसा था जिसे हास्य और व्यंग्य के माध्यम से देखा जा सकता था। स्वयं भारतेन्दु एक ऐसे वर्ग में पैदा हुए थे जो श्रम के बिना ही अपार सम्पत्ति का स्वामी था, जो स्वभावतः उसे आलस्य,

विलासिता, ऐश्वर्य प्रदर्शन, पाखण्ड और चाटुप्रियता आदि जैसे दुर्गुणों की ओर ले जाती थी। अपने वर्ग की इन कमजोरियों के बीच जीते और अंशतः उनसे प्रभावित होते हुए भी भारतेन्दु ने अपने युग के नवजागरण से वह प्रबुद्धता, नैतिक प्रेरणा और अपने समाज को निस्संग व वस्तुपरक दृष्टि से देखने की क्षमता प्राप्त की, जिससे वह स्वयं अपने वर्ग पर हँस सके और उसे व्यंग्य व कटाक्ष का निशाना बना सके।

सामंती संस्कारों से घिरे हुए व्यवसायी वर्ग के ऊपर देश में राजे-रजवाड़ों का पूर्ण सामंती वर्ग था, जो स्वाभिमान और शौर्य के पुराने सामंती आदर्शों से सर्वथा रिक्त होकर विदेशी शासकों के हाथों में कठपुतली की तरह नाच रहा था। व्यक्तिगत रूप से तत्कालीन काशीनरेश के साथ अच्छे संबंध होने के बावजूद, आमतौर पर इस पतनशील मरणोन्मुख वर्ग के साथ भारतेन्दु की सहानुभूति नहीं थी और उनका जीवन भी भारतेन्दु के हास्य और व्यंग्य का लक्ष्य था।

धनी व्यापारी वर्ग, रईसों, जमींदारों और राजे-रजवाड़ों से जुड़ा हुआ तथा उन पर आश्रित परजीवी वर्ग के जीवन को भी भारतेन्दु ने बड़े ही यथार्थवादी तरीके से हास्य और व्यंग्य का विषय बनाया। महंतों, पंडे-पुजारियों, सन्यासियों, दलालों, तीर्थस्थानों में स्नान, पूजा-पाठ और दान आदि के अवसर पर यात्रियों को नोचने वाले गिद्धों तथा धर्मभीरु समाज के अंग में लगे हुए छोटे-बड़े जोंकों पर भी भारतेन्दु की पैनी दृष्टि पड़ी और उन्हें बेनकाब करने के लिए उन्होंने हास्य और व्यंग्य का माध्यम ही चुना। हास्य और व्यंग्य के सहारे ही भारतेन्दु ने देश के उस नवशिक्षित और महात्वाकांक्षी नौकरशाह वर्ग की अच्छी खबर ली, जो विदेशी शासन के प्रति भक्ति प्रदर्शन कर पद, यश, सम्मान तथा उपाधियों की प्राप्ति के लिए लालायित था। उन्होंने उन तथाकथित समाज-सुधारकों और बुद्धिजीवियों की भी खिल्ली उड़ायी, जो इस भय से कि कहीं उन पर राजद्रोह या 'डिसलॉयल्टी' का आरोप न लग जाए, देश की उन्नति के लिए आवश्यक सुधारों की माँग करने का साहस नहीं रखते थे। ज्यादातर हास्य और व्यंग्य के माध्यम से ही भारतेन्दु ने विदेशी शासन द्वारा भारतीय जनता पर भारी टैक्स लादने, देश के आर्थिक शोषण की नीतियों तथा उनकी अन्यायपूर्ण न्यायिक व्यवस्था का विरोध किया। भारतेन्दु के निकट धार्मिक या सम्प्रदायगत दम्भ, अन्धविश्वास और असहिष्णुता से ग्रस्त कट्टरपंथी और पुनरुत्थानवादी, जो किसी भी नई चीज को स्वीकार करने के पूर्व उसे वेदों के भीतर से निकाल लेना चाहते थे, हास्य और व्यंग्य के ही पात्र थे।

परिणाम और गुण की दृष्टि से भारतेन्दु का सबसे महत्वपूर्ण हास्य और व्यंग्य साहित्य उनके प्रहसनों में मिलता है। 'पाखंड-विडम्बन' उनके द्वारा अनूदित एकांकी प्रहसन है, किन्तु इस अनुवाद में भी भारतेन्दु ने हास्य और व्यंग्य को हमेशा यथार्थ की भूमि पर रखा। वे अपने पात्रों की भाषा में वैशिष्ट्य प्रदान करने के उद्देश्य से विविधता का ध्यान रखते थे। इसमें दिगम्बर सिद्धांत और भिक्षुक बुद्धागम को अतिरिक्त हास्यास्पद बनाने के लिए उन्होंने दिगम्बर पात्र को राजस्थानी के निकट 'खिचड़ी-भाषा' दी है।

'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति' भारतेन्दु का प्रसिद्ध प्रहसन है। ऊपर से देखने पर यह प्रहसन वेद, शास्त्र, पुराण और तंत्र आदि का सहारा लेकर बलि और मांस-सेवन की निंदा करने के लिए लिखा गया जान पड़ता है, किन्तु वास्तव में 'बलि' उस सारे अनाचार का प्रतीक है जो धर्म के नाम पर समाज में व्याप्त थी। अवश्य ही भारतेन्दु के हास्य और व्यंग्य का तीखापन सामंती अभिजात-वर्ग और उनके लग्गुओं-भग्गुओं को तेजाब जैसा लगता रहा होगा। इस प्रहसन में भारतेन्दु की शब्द-क्रीड़ा पर आधारित विनोद की प्रवृत्ति भी दिखाई पड़ती है। विदूषक, वेदांती की खिल्ली उड़ाता हुआ कहता है— "आप वेदांती अर्थात् बिना दाँत के हैं, सो आप भक्षण कैसे करते होंगे?"। इसके अतिरिक्त भारतेन्दु ने इस प्रहसन में अनेक बार पैरोडी का प्रयोग किया है, जो आधुनिक काल के हास्य-कवियों को बहुत प्रिय है।

भारतेन्दु-काल में हिन्दी गद्य-साहित्य का विकास हुआ। समाचार पत्र तथा साहित्यिक मासिक एवं पाक्षिक पत्रों तथा पत्रिकाओं का प्रकाशन भी भारतेन्दु काल में ही हुआ। यद्यपि प्रमुख रूप से भारतेन्दु काल में हास्य रस का कोई स्वतंत्र पत्र नहीं निकला, किन्तु उस समय के अधिकांश पत्रों में हास्य एवं विनोद का महत्वपूर्ण स्थान रहता था।

'हरिश्चन्द्र मैगनीज' 1873 में निकली, जिसका नाम बाद में बदलकर 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' हो गया! इसके ही खंड संख्या 9, सन् 1874 के अंक में राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' की उर्दूप्रियता पर 'है है उर्दू हाय हाय' शीर्षक से एक स्यापा छपा था। भारतेन्दु बाबू की हार्दिक इच्छा थी कि अँगरेजी के 'पंच' पत्र की भाँति हिन्दी में भी विशुद्ध हास्य रस का एक पत्र प्रकाशित किया जाए, जैसा कि उनकी सूचना से स्पष्ट है – मेरी बहुत दिनों से इच्छा है कि एक हास्यरस का हिंदी भाषा में पंच पत्र प्रचलित करूँ, सब हिंदी के रसिकों से सहायता की प्रार्थना की है। अभी केवल 13 ग्राहक हुए हैं और 100 ग्राहक होने पर पत्र छपेगा।

'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' में 'चोज की बातें' शीर्षक से मनोरंजक चुटकुले निरंतर प्रकाशित होते थे। इसी पत्र में उनकी 'बंदरसभा', 'ठुमरी जुबानी शुतुरमुर्ग परी के' और 'चिड़ीमार का टोला' जैसी हास्य कविताएँ भी प्रकाशित हुईं।

'हिन्दी प्रदीप' का संपादन पं० बालकृष्ण भट्ट ने 1878 में प्रारंभ किया। इसके मुखपृष्ठ पर सूचना रहती थी- "विद्या, नाटक, समाचारावली, हास-परिहास, साहित्य, दर्शन इत्यादि के विषय में" के विषय में है। 'हिन्दी प्रदीप' मे तत्कालीन टैक्स आदि पर व्यंग्यात्मक स्यापे लिखे जाते थे। भट्टजी इस पत्र में हास्यमय परिभाषाएँ भी दिया करते थे, जैसे:

- डॉक्टर: बेपरवाह वैद्य।
- चुंगी: व्यापार का नफा चट कर जाने वाली डाइन।
- टैक्स: जबरदस्त का डेंगा सिर पर, दाल-भात में मूसलचंद; हो या न हो सरकार को भरना है।
- पुलिस: भले मानुषों के फजीहत की तदबीर।

प्रश्नोत्तर के रूप में भी भट्टजी हास्य-रस की सामग्री बराबर देते थे,

"महापाप का फल क्या? हिन्दुस्तान में जन्म लेना"

"महापापी कौन? देश भाषा के अखबारों के एडीटर"।

इसके अतिरिक्त हास्य-रसमय विज्ञापन, उर्दू तथा संस्कृत-मिश्रित पैरोडियाँ आदि बराबर उसमें निकला करती थीं। यहाँ तक कि वे समाचार भी अधिकतर हास्यमय भाषा में देते थे: "पुलिस इंस्पेक्टर की कृपा से दिवाली यहाँ पंदरहियों के पहले से शुरू हो गयी थी, पर अब तो खूब ही गली-गली जुआ की धूम मची है। खैर लक्ष्मी तो रही न गई जो दीपमालिका कर महालक्ष्मी पूजनोत्सव हम लोग करते, तो पूजनोत्सव कर लक्ष्मी की बहिन दरिद्रा ही का आवाहन सही"।

'ब्राह्मण' पत्र के प्रत्येक अंक में 'गपशप' शीर्षक स्तंभ में मनोरंजक टिप्पणियाँ प्रकाशित होती थीं। इसमें उनकी हास्य-रसात्मक कविता 'तृप्यताम्' 15 दिसंबर 1884 के अंक में प्रकाशित हुई थी। द्विवेदी-युग में 'मतवाला' नाम से एक साप्ताहिक निकला, जो हास्य-व्यंग्य का एक ऐतिहासिक पत्र था। इसका पहला अंक 23 अगस्त 1923 को निकला और इसके प्रकाशन की प्रेरणा बंगाल के साप्ताहिक 'अवतार' से मिली थी। इसमें अधिकतर लेख गुप्त नामों से प्रकाशित होते थे। इसके 'चाबुक' शीर्षक स्तंभ में साहित्यिक चोरों पर व्यंग्यबाण बरसाये जाते थे और 'मतवाला की बहक' स्तंभ में सामयिक विषयों पर टिप्पणियाँ दी जाती थीं। इलाहाबाद में हास्य रस का साप्ताहिक 'मदारी' कई वर्षों तक निकला। इसका मूल्य 'फी तमाशा दो पैसे' था। इसके सम्पादक

एम. पी. श्रीवास्तव थे। सितंबर 1923 के 'मदारी' के मुखपृष्ठ पर यह दोहा छपा था:

"सोटा लेकर नये ठाठ से सदा मदारी आवेगा।

जो भारत का अहित करेंगे, उनको पकड़ नचावेगा।"

इसके स्थायी स्तंभों के शीर्षक 'मदारी का सोंटा', 'बानर का नाच', 'घंटाकर के कँगूरे से' और 'डमरू की डिमडिम' आदि थे। लखनऊ से अमृतलाल नागर 'तस्लीम लखनवी' उपनाम से 'नवाबी मसनद' शीर्षक से हास्य-व्यंग्य की कहानियाँ लिखते थे। 'गुस्ताखीनामा' तथा 'कुकइँकूँ' इसके स्थायी स्तंभ थे।

निष्कर्ष

19वीं और 20वीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में समाचार पत्र केवल सूचना के संवाहक नहीं, बल्कि राष्ट्र निर्माण के सबसे प्रखर औजार थे। हिन्दी पत्रकारिता ने एक ओर जहाँ 'स्वराज्य' को राष्ट्र की अपरिहार्य आत्मा के रूप में स्थापित कर उदारवादी 'याचना' की राजनीति को 'आत्म-शक्ति' और 'निर्भीकता' से बदल दिया, वहीं दूसरी ओर भारतेन्दु हरिश्चंद्र जैसे मनीषियों ने 'हास्य-व्यंग्य' को सामाजिक और राजनीतिक क्रांति का एक मौलिक शस्त्र बना दिया। इन पत्रों ने आर्थिक शोषण, कर-नीति, धार्मिक पाखंड और ब्रिटिश रंगभेद जैसी जटिल युगीन विकृतियों पर तीखा प्रहार कर जनमानस में अदम्य 'जिन्दादिली' और 'नवचेतना' का संचार किया। अंततः, यह स्पष्ट है कि उस दौर की मिशनरी पत्रकारिता ने न केवल हिन्दी गद्य को यथार्थवादी और जनवादी मोड़ दिया, बल्कि औपनिवेशिक दासता की बेड़ियों को काटने के लिए एक वैचारिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी तैयार की, जिसने भारत की स्वतंत्रता और आधुनिक चेतना के मार्ग को प्रशस्त किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राजीव दुबे: हिन्दी पत्रकारिता और राष्ट्रीय आंदोलन, सत्येन्द्र प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988 ई.।
2. द्वारका प्रसाद मिश्र: मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास, ग्वालियर, 1965 ई.।
3. डॉ. वेदप्रताप वैदिक: हिन्दी पत्रकारिता: विविध आयाम, हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2002 ई.।
4. शम्भुनाथ एवं अशोक जोशी (सम्पा.): भारतेन्दु एवं भारतीय नवजागरण, आने वाला कल प्रकाशन, कलकत्ता, 1986 ई.।
5. 'अल्मोड़ा अखबार': 30 अक्टूबर, 1882 ई.।
6. 'भारतजीवन': 26 दिसम्बर, 1892 ई.।
7. 'हिन्दोस्तान': 20 जून, 1884 ई.।
8. 'हिन्दी-प्रदीप': 24 जुलाई, 1900 ई.।
9. 'हिन्दुस्तान' (लाहौर): 14 फरवरी, 1908 ई.।

भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रीयता की अवधारणा

- गौरव

सार

भारतीय ज्ञान परंपरा का आरंभ वैदिक काल से माना जाता हैं। इस परंपरा में वैदिक साहित्य 'ऋग्वेद', 'सामवेद', 'यजुर्वेद' और 'अथर्ववेद' भारत में सर्वप्रथम ज्ञान के स्रोत रहे हैं। यह हमारी अपनी परंपरा, हमारा अपना ज्ञान है जिसके अंतर्गत हमारी भारतीय संस्कृति में भारत-भूमि को 'माँ' का स्थान दिया गया है जो अन्य किसी और संस्कृति में देखने को नहीं मिलता। ज्ञान की यह परंपरा साहित्यिक धरा पर वैदिक साहित्य से लेकर स्वतंत्र भारत के आधुनिक साहित्य में जीवंत दिखाई देती है। इस ज्ञान परंपरा में जहाँ तुलसीदास, कबीरदास, रविदास जैसे मध्यकालीन भक्त कवि विद्यमान हैं, तो वहीं आधुनिक चिंतकों में विवेकानंद, राजा राममोहन राय, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गाँधी, डॉ. भीमराव अंबेडकर आदि इस परंपरा की अनन्य धरोहर हैं, जिन्होंने राष्ट्र को एक नवीन दृष्टिकोण से परिभाषित किया। हमारी ज्ञान परंपरा हमें बताती है कि 'भारतीय' कुछ अक्षरों से मिलकर बना मात्र एक शब्द नहीं है, बल्कि यह शब्द भारत-भूमि पर जन्मे लोगों की एकता का पर्याय है। भारतीय राष्ट्रवाद का सही रूप और अर्थ भारतीय ज्ञान-दर्शन में हमें बखूबी दिखाई देता है। इस शोध आलेख में हम भारतीय ज्ञान परंपरा में साहित्य के माध्यम से इसी राष्ट्रीयता की भावना को सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक रूप से समझने की कोशिश करेंगे।

बीज शब्द : भारतीय राष्ट्रवाद, देश-प्रेम, भारतीय ज्ञान परंपरा, राष्ट्रीयता, संस्कृति, स्वतंत्रता, एकता, संवैधानिक मूल्य, लोकतंत्र, मातृभूमि-प्रेम, मानवतावाद, नैतिकता इत्यादि।

भारत की भौगोलिक सीमा के भीतर विभिन्न भाषा, जाति, धर्म एवं संप्रदाय के लोग निवास करते हैं। इसी कारणवश 'भारतीय' एक प्राचीन अवधारणा के साथ-साथ एक समावेशी अवधारणा भी है। 'मन' और 'आत्मा' में अपनी जन्मभूमि के प्रति प्रेम को स्थापित करने के लिए आधुनिक युग में 'भारतीय राष्ट्रवाद' की आवाज बुलंद हुई। जिसको हम 'मातृभूमि प्रेम' के रूप में अपने वेदों और उपनिषदों में भी देख सकते हैं। यह एक ऐसी

चेतना है जो व्यक्ति को सभी बंधनों से मुक्त कर उसको उसकी मातृभूमि से जोड़ती है। कहा जा सकता है कि 'भारतीय' चेतना किसी एक क्षेत्र, एक जाति, एक संप्रदाय या किसी एक संस्कृति से बंधी हुई नहीं है। हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और विविधतापूर्ण धरोहर है जो हजारों वर्षों की सभ्यता, संस्कृति, और बौद्धिक गतिविधियों के परिणाम स्वरूप हमे उपलब्ध हुई हैं। यह परंपरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, और अन्य प्राचीन ग्रंथों में समाहित ज्ञान की एक अनमोल धरोहर है। भारतीय ज्ञान परंपरा ने न केवल धर्म और दार्शनिकता को आकार दिया है, बल्कि जीवन के अन्य क्षेत्रो सहित साहित्य के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वेदों और उपनिषदों में जीवन के मूलभूत प्रश्नों का गहराई से विश्लेषण किया गया है, और यह आज भी जीवन के गहरे रहस्यों को उजागर करने में सहायक है।

भारतीय ज्ञान परंपरा की अद्वितीयता उसकी समग्रता और विविधता में है। यह परंपरा न केवल चिंतन और अध्ययन का माध्यम है, बल्कि यह एक जीवंत प्रक्रिया भी है, जो आज भी समाज की सांस्कृतिक और बौद्धिक जरूरतों को पूरा कर रही है। रामविलास शर्मा ने भारतीय ज्ञान परंपरा में संस्कृत भाषा और साहित्य की इसी शक्ति की ओर इशारा किया है। वे कहते हैं कि, "संस्कृत साहित्य के आलोचनात्मक अध्ययन से ऐसे अनेक संदर्भ सामने आएंगे जो देश-प्रेम की तीव्र अनुभूति की व्यापक चेतना प्रकट करते हैं। सच्चाई तो यह है कि पितृभूमि के लिए प्रगाढ़ अनुराग सारे संस्कृत साहित्य में व्याप्त है। राष्ट्र निर्माण का सबसे पहला उपादान है जन्मभूमि के लिए गहरा अनुराग जिसमें संस्कृत साहित्य का हाथ दिखाई देता है।"1 आदिकाल से ही भारत में देश प्रेम या राष्ट्रीयता की भावना को जगाने में धर्म की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अपने-अपने गाँव या जनपद को ही देश मानने वाली जनता को सम्पूर्ण भारत से जोड़ने का काम चाहे वह तीर्थ स्थानों के द्वारा हुआ हो या संस्कृत भाषा के द्वारा, दोनों के मूल में धर्म की ही केंद्रीय सत्ता रही है। डॉ. नगेन्द्र ने भी लिखा है कि, "पहले एक गाँव दूसरे गाँव से और गाँव शहर से अलग थे। साहित्य संस्कृति पर नागरिक संस्कृति की गहरी छाप थी। सबको एकसूत्रता प्रदान करने वाला तत्व धर्म था।"2

वर्तमान में जो राष्ट्रवादी चेतना सामाजिक और राजनीतिक रूप में विद्यमान हैं भले ही आदिकाल में इसका अभाव रहा परंतु सांस्कृतिक और धार्मिक दृष्टि से देखा जाए तो सम्पूर्ण भारत में एकरूपता अवश्य ही पाई जाती है। आदिकालीन कवि 'कालिदास' "प्रकृति के श्रेष्ठ कवि हैं वह मानव और प्रेम की उपासना नगर से दूर वनों, उपवनों, पर्वतों और शस्त्रों की सीमाओं के बाहर करते हैं। भवभूति, शेकस्पीयर से अनेक शताब्दियों पहले मानव मन के विघटन का चित्रण करते हैं और यूनानी लोग जिस तरह के नाटकों को ट्रेजडी कहते थे उनकी रचना में वह शेक्सपियर और सोफ़ोक्लेस दोनों के प्रतिद्वंदी हैं। उनका संबंध उत्तर भारत के प्रसिद्ध सांस्कृतिक केंद्र कान्यकुब्ज से था। संस्कृत के अनेक केंद्र दक्षिण भारत में थे और महान व्याकरणाचार्य पाणिनी तक्षशिला के थे। संस्कृत के माध्यम से इस तरह से देश एक ही सांस्कृतिक सूत्र में बंध गया था।"3 यह कविता भारत की उसी महत्ता और सांस्कृतिक धरोहर का गुणगान करती है, जो कुछ इस प्रकार है –

"मस्तक ऊँचा हुआ मही का, धन्य हिमालय का उत्कर्ष।
हरि का क्रीड़ा-क्षेत्र हमारा, भूमि-भाग्य-सा भारतवर्ष।।
हरा-भरा यह देश बना कर विधि ने रवि का मुकुट दिया,
पाकर प्रथम प्रकाश जगत ने इसका ही अनुसरण किया।"4

भारतीय ज्ञान परंपरा में 'भगवत गीता' का नाम सर्वोपरि लिया जाता है। कहा जाता है इसमें जीवन के हर पहलुओं को दर्शाया गया है और सभी प्रश्नों के उत्तर इसमें विद्यमान हैं। वैसे तो इसमें राष्ट्रवाद का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता है, लेकिन इसमें ऐसे कई श्लोक हैं जो राष्ट्र के प्रति समर्पण, कर्तव्य और धर्म के महत्व को दर्शाते हैं,

भगवत गीता के अध्याय दो का यह श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।"5

अर्थात व्यक्ति को सर्वदा अपने कर्म करते रहना चाहिए। ऐसा ही भाव एक देशभक्त का भी होता है। भारतीय संस्कृति में मानवीय जीवन में प्रेम को सबसे ज्यादा महत्व प्राप्त है। फिर चाहे यह प्रेम व्यष्टि रूप में हो या समष्टि रूप में, वह देश प्रेम का रूप होता है। कई महापुरुषों ने प्रेम की महिमा तक गाई है। मध्यकालीन युग के निर्गुण संत कवि कबीरदास ने तो बिन प्रेम हृदय के मनुष्य को मनुष्य ही नहीं माना। उनके अनुसार मनुष्य के हृदय में प्रेम होना मनुष्यता के लिए अनिवार्य है वह कहते भी हैं-

"जो घट प्रेम न संचारे, जो घट जान सामान।

जैसे खाल लुहार की, सांस लेत बिनु प्राण।।"6

अर्थात् जिस मनुष्य के भीतर प्रेम भाव का संचार नहीं होता वह एक मृत/शमशान समान है। ठीक उसी प्रकार जैसे किसी व्यक्ति के मन में अपने देश के प्रति प्रेम व सम्मान न होना उसका मृत होना समझा जा सकता है। इसके उपरांत आधुनिकता ने व्यक्ति की चेतना को इस कदर जागृत किया कि यह एकरूपता सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्र में भी देखी जाने लगी।

भारतीय राष्ट्रवाद को हम व्यवस्थित रूप से आधुनिक युग में ही देखते और समझते हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अमेरिका में दिए गए अपने व्याख्यान में 'भारत में राष्ट्रवाद' शब्द का प्रयोग किया था। "उनकी राष्ट्र संबंधी परिभाषा इस प्रकार है कि यह लोगों का राजनीतिक और आर्थिक संघ है, 'उस अर्थ में कि जब समस्त जनता किसी यांत्रिक प्रयोजन से संघटित होने की स्वीकृति दे देती है।"7 तब एक राष्ट्र का निर्माण होता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर राष्ट्रवाद के दोनों पक्षों सकारात्मक और नकारात्मक को सबके समक्ष रखते हैं। परंतु वर्तमान स्थिति को देखते हुए और पश्चिमी मुल्कों की 'राष्ट्रवाद' के प्रति नकारात्मक धारणा को रेखांकित करते हुए कहते हैं कि, "पश्चिम का राष्ट्र भौतिक उन्नति में संलग्न जनता का एक यांत्रिक संघटन है, अतएव इसका स्वरूप अनिवार्य रूप से आक्रामक व साम्राज्यवादी होता है।"8 'राष्ट्रवाद' के नकारात्मक प्रभावों के संदर्भ में रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं कि, "आज सभी अपराधों में, राष्ट्रवाद शायद सबसे अधिक घिनौना तथा घातक अपराध है।"9 परंतु राष्ट्रवाद की यह धारणा हमे भारत में दिखाई नहीं देती। भारतीय राष्ट्रवाद विश्व के अन्य राष्ट्रवाद से इसलिए भिन्न है क्योंकि भारत का राष्ट्रवाद भारतीयों के हृदय में अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम की जागृति करता है। और भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुंबकम' की संस्कृति है जिससे यह सिद्ध है कि भारत का राष्ट्रवाद एकता और प्रेम की बात करता है और विश्व का अन्य राष्ट्र अपने हित को साधने के लिए किसी और राष्ट्र को ध्वस्त भी कर सकता है। भारत में रहने वाली जनता एक ही संविधान के नियमों के तहत संचालित होती है। संविधान में कहा भी गया है कि एक राष्ट्र के रूप में हम सभी भारतीय हैं। आजादी के पूर्व 'भारतीय' शब्द का प्रयोग भारतवर्ष को एकजुट करने के लिए किया जाता रहा और इसी एकता को बनाए रखने के लिए इसको आजादी के उपरांत संविधान में भी जगह दी गई। कुछ विद्वानों का मानना है कि इससे पहले इस देश में राष्ट्रीय चेतना का सर्वथा अभाव रहा। इस संदर्भ में ए.आर. देसाई ने लिखा है कि, "अनेक ब्रिटिश राजनेताओं ने दावा किया है कि भारतीय राष्ट्रवाद भारत में अग्रेजों द्वारा लाई गई आधुनिक शिक्षा का परिणाम है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि आधुनिक शिक्षा ने भारतीयों को पाश्चात्य लेखकों द्वारा प्रतिपादित स्वतंत्रता संबंधी सिद्धांतों से परिचित कराया और इसलिए भारतीय जनता में राष्ट्रीय स्वतंत्र्य की इच्छा पैदा हुई। शिक्षा की प्रगतिशील भूमिका को मानते हुए भी यह समझ लेना गलत होगा कि भारतीय राष्ट्रवाद इस शिक्षा की संतति है।"10

वर्तमान में भारत एक ऐसे लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में हमारे सामने है जहां पर देश का प्रत्येक व्यक्ति एक समान है उसको एक बराबर अधिकार दिए गए है। हमें इस एकरूपता को उसी काल विशेष में उसी रूप में देखना होगा जिस रूप में वह लोगों के बीच विद्यमान रही है। डॉ. अंबेडकर जिस भारतीयता की बात करते हैं वह अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम ही तो है जो व्यक्ति को सिर्फ राष्ट्र से जोड़ने की बात करता है। वह धर्म, जाति और समुदाय से ऊपर राष्ट्र को मानते हैं वह कहते हैं कि "कॉंग्रेस का राष्ट्रवाद राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने पर बहुत अधिक केंद्रित था, और यह भारतीय समाज के भीतर मौजूद सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं करता था।"11 डॉ. अंबेडकर जिस राष्ट्रवाद की बात करते हैं वह हमारी परंपराओं में सदा से ही निहित है। इस संदर्भ में राधा कुमुद मुकर्जी ने लिखा है, "तीर्थ यात्रा की संस्था प्राचीन हिन्दू सभ्यता और संस्कृति की अपनी विशेषताओं में से है। संसार के और किसी देश में देवालय और तीर्थ स्थानों का ऐसा जाल बिछा हुआ दिखाई नहीं देता जैसा हमारी इस विस्तृत मातृभूमि पर, लोगों के धार्मिक उत्साह के परिणाम स्वरूप फैला हुआ है– लोगों ने इस तरह अपने देश के प्रति श्रद्धा प्रकाशित करने का यत्न किया है। सच्चाई तो यह है कि यदि हम इस विशेष संस्था के उद्गम की सावधानी से परीक्षा करे जिसने देश के सब भागों को इसके इतिहास के सब कालों में इतना प्रभावित किया है। तो हमें इस निष्कर्ष पर आना पड़ेगा कि यह उन नीतियों में से एक है जिनसे हिन्दू ने अपना देशप्रेम अभिव्यक्त किया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि तीर्थ यात्रा की संस्था अंततोगत्वा मातृभूमि के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति है यह देश की पूजा की लाक्षणिक हिन्दू रीतियों में से एक है। पितृ-भूमि के प्रति प्रेम ने अपने उत्साह की तीव्रता में सारे देश में हजारों तीर्थ स्थानों को जन्म दिया है जिससे उसका प्रत्येक भाग पवित्र और पूजा योग्य माना जाए।"12

भारत की भूमि का कण-कण भारत वासियों के लिए पूजनीय है और यही हमारी राष्ट्र भक्ति है। धार्मिक ग्रंथों ने अपने अनुसार जनता को अपने जन्मभूमि को पूजने का जो कार्य किया है वह इसी ध्येय से किया गया है। इसको और विस्तार से भारत के प्रथम प्रधानमंत्री ने भी समझा है, वह लिखते भी हैं "भारत में संस्कृति के सबसे प्रबल उपकरण आर्यों और आर्यों से पहले के भारतवासियों, खास कर द्रविड के मिलन से उत्पन्न हुए। इस मिलन, मिश्रण या समन्वय से एक बहुत बड़ी संस्कृति उत्पन्न हुई जिसका प्रतिनिधित्व हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत करती है। संस्कृत और प्राचीन पहलवी ये दोनों भाषाएं एक ही माँ से मध्य एशिया में जन्मी थीं, किन्तु भारत में आकर संस्कृत ही यहाँ की राष्ट्रभाषा हो गई।"13 परंतु आधुनिक चिंतकों ने जनसामान्य की भाषा का पक्ष लिया क्योंकि भाषाई एकता किसी भी राष्ट्र को जोड़े रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान में यह कार्य हिंदी के द्वारा किया जा रहा है।

कहा जा सकता है कि हिन्दू-मुस्लिम संस्कृतियों ने भारतीय राष्ट्रवाद को धर्म केंद्रित रखा था। ब्रिटिशो के आने के बाद जब देश में स्वतंत्रता आंदोलन का आरंभ हुआ। धर्म ने सभी को एकता सूत्र में बांधे रखा था। इस प्रकार आधुनिक भारत में स्वतंत्रता के लिए एक सामूहिक संघर्ष शुरू हुआ जिसमें मुख्य भूमिका धर्म की ही थी। सुषमा नारायण ने लिखा है कि, "राष्ट्रीयता की मूल प्रेरणा धर्म से मिली। धर्म का व्यक्तित्व पक्ष कुंठित था परंतु राष्ट्रीयता अथवा देश सुधार का पक्ष प्रबल था। इस काल की धार्मिक राष्ट्रीयता का प्रमूख ध्येय था भारत के अतीत गौरव तथा प्राचीन संस्कृति को नवजीवन प्रदान कर देश में उसकी स्थापना करना। अज्ञान, मूर्खता तथा कुपमंडूकता से मुक्त कर उसमें आत्मविश्वास तथा पुरुष की भावना को जगाना ही तत्कालीन राष्ट्रीयता की परिसीमा थी। धर्म के माध्यम से राष्ट्रीय भावना उद्वेलित हुई जिससे जनता तत्कालीन परिस्थितियों के प्रति सजग हो सकी।"14 1857 का सिपाही विद्रोह जिसे प्रथम स्वाधीनता संघर्ष माना गया है यह विद्रोह भी अपने धर्म की रक्षा के लिए ही किया गया था। हिन्दू 'गाय की चर्बी' तथा मुसलमान 'सूअर की चर्बी' के कारण एकजुट हुए

थे। हिन्दू और मुसलमान दोनों को यह समझ में आ गया था कि इस विदेशी शक्ति को भगाए बिना हमें धार्मिक स्वतंत्रता तो क्या किसी भी तरह की स्वतंत्रता नहीं मिलने वाली है।

भारतीय ज्ञान परंपरा अपने आप में समृद्ध और विविधतापूर्ण रही हैं भारतीय ज्ञान परंपरा ने शिक्षा, चिकित्सा शास्त्र, विज्ञान, कला और साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मैथिलीशरण गुप्त अपनी राष्ट्रीय भावना को दिखने से खुद को रोक नहीं पाते। अपनी कविता भारत-भारती में भारत के प्रति अपनी प्रेम को दर्शाते हुए कहते हैं–

भू-लोक का गौरव, प्रकृति का पुण्य लीला-स्थल कहाँ ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहाँ।
सम्पूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है?
उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन? भारतवर्ष है ॥15

भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा, दर्शन, विज्ञान, और कला का समावेश है। भारतीय ज्ञान परंपरा का उद्देश्य केवल ज्ञान का संकलन नहीं, बल्कि उसे जीवन में उतारना और समाज के कल्याण के लिए उपयोग करना है। मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध रचना भारत-भारती में भारत वर्ष की प्रसंसा करते हुए वे कहते हैं -

"हाँ, वृद्ध भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है,
ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है।"16

अंतत : देखा जाए तो भारतीय ज्ञान परंपरा एक प्राचीन और समृद्ध परंपरा है, जो जीवन के हर एक पहलूओं को बड़ी सूक्ष्मता के साथ समझाने और बेहतर बनाने का मार्ग दिखाती है। इस भारतीय ज्ञान परंपरा में आदिकाल में देखे तो वेद, उपनिषद, भगवद गीता आदि महान ग्रंथों का ज्ञान समाहित है, तो वही आधुनिक चिंतकों के विचारों समेत संविधान के मूल्य इस परंपरा को और भी सुदृढ़ बनाते हैं। इसी परंपरा में एक नाम डॉ. भीमराव अंबेडकर का है जिन्होंने भारतीय समाज को एक आधुनिक और विकसित समाज के रूप में देखना चाहा। उन्होंने सभी व्यक्तियों को एक ही धागे में पिरोने का कार्य किया उन्होंने सभी को 'भारतीय नागरिक' के रूप में देखा और भारतीयता और राष्ट्रवाद को जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया।

निष्कर्षतः

भारतीय ज्ञान परंपरा सदियों से भारतीयों को मानवता, आध्यात्मिक और व्यावहारिक जीवन का मार्गदर्शन करती रही है। इसका मूल उद्देश्य आत्मज्ञान, जीवन के गुणों को समझना और मानव अस्तित्व के वास्तविक स्वरूप को पहचानना रहा है। भारतीय ज्ञान परंपरा वेदों, उपनिषदों, पुराणों, महाभारत, रामायण और विभिन्न दार्शनिक ग्रंथों के माध्यम से विकसित हुई है। यह परंपरा न केवल आध्यात्मिक चिंतन को प्रेरित करती है, बल्कि इसमें जीवन के प्रत्येक पहलुओं को संतुलित और समृद्ध बनाने की दृष्टि भी निहित है। साहित्यिक धरातल पर भी यह राष्ट्रवाद हमें जगह-जगह दिखाई देता है फिर चाहे काल कोई सा भी क्यों न हो। भारतीय साहित्यकारों ने भारतीय राष्ट्रवाद को अपनी रचनाओं के माध्यम से 'देश-प्रेम' की भावना का संचार जन जन के हृदयों में किया है।

संदर्भ ग्रंथ/ सूचना स्रोत

1. राधा कुमुद मुकर्जी, हिंदु जाति के सांस्कृतिक इतिहास की रूपरेखा, रामविलास शर्मा : संकलित निबंध, अजय तिवारी (संपा.), नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, संस्करण 2013, पृ सं 35
2. डॉ. नगेन्द्र (सं), हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2013, पृ सं 403
3. शर्मा राम विलास, 'हिंदी जाति के सांस्कृतिक इतिहास की रूपरेखा', रामविलास शर्मा: संकलित निबंध, अजय तिवारी (संपा.) नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, संस्करण-2013, पृ. सं.35
4. http://kavitakosh.org/kk/%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A4%B5%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%B7_/_%E0%A4%AE%E0%A5%88%E0%A4%A5%E0%A4%BF%E0%A4%B2%E0%A5%80%E0%A4%B6%E0%A4%B0%E0%A4%A3_%E0%A4%97%E0%A5%81%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%A4
5. श्लोक 47, अध्याय 2, भागवत गीता,प्रभूपद बुक स्टोर, 2015
6. https://m.bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%B8%E0%A4%BE%E0%A4%81%E0%A4%9A%E0%A4%BE:%E0%A4%95%E0%A4%AC%E0%A5%80%E0%A4%B0_%E0%A4%95%E0%A5%87_%E0%A4%A6%E0%A5%8B%E0%A4%B9%E0%A5%87
7. टैगोर रवीन्द्रनाथ, 'राष्ट्रवाद', अनुवाद सौमित्र मोहन, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, पहला संस्करण 2003, भूमिका पृ. सं.13
8. टैगोर रवीन्द्रनाथ, 'राष्ट्रवाद', अनुवाद सौमित्र मोहन, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, पहला संस्करण 2003, भूमिका पृ. सं.13
9. टैगोर रवीन्द्रनाथ, 'राष्ट्रवाद', अनुवाद सौमित्र मोहन, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, पहला संस्करण 200, भूमिका, पृ. सं.11
10. देसाई ए.आर.,'भारत में राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि', दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली,संस्करण 1977, पृ. सं.127
11. डॉ. अंबेडकर, 'माई सोशल फ़िलॉसफ़ी', दी मूकनायक, 3 अक्टूबर 1954, (डॉ. अंबेडकर का ऑल इंडिया रेडियो पर दिया गया भाषण)
12. कुमुद राधा, हिन्दू संस्कृति में राष्ट्रवाद, एस. चंद एंड कंपनी, नई दिल्ली, संस्करण 1975, पृ. सं. 31
13. दिनकर रामधारी सिंह, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकशन, इलाहाबाद, संस्करण 2014, पृ. सं. 13
14. नारायण डॉ. सुषमा, भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की हिंदी साहित्य में अभिव्यक्ति, हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली संस्करण 1966, पृ सं 19
15. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, लोकभारती प्रकाशन, तैंतालिसवॉ संस्करण : 2007, पृ. सं. 14
16. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, लोकभारती प्रकाशन, तैंतालिसवॉ संस्करण : 2007, पृ. सं. 14

भारतीय नवजागरण का कला और साहित्य पर प्रभाव एक मानवतावादी दृष्टि

- गोपाल जी

सार

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के भारतीय नवजागरण के परिप्रेक्ष्य में कला और साहित्य पर पड़े मानवतावादी प्रभावों का गहन विश्लेषण करता है। भारतीय नवजागरण केवल एक सांस्कृतिक पुनरुत्थान नहीं था, बल्कि यह औपनिवेशिक दासता और मध्यकालीन रूढ़िवादिता के विरुद्ध एक वैचारिक क्रांति थी। इस आलेख में यह रेखांकित करना है कि कैसे राजा राममोहन राय, रवींद्रनाथ टैगोर और स्वामी दयानंद जैसे विचारकों ने 'मानव' को केंद्र में रखकर साहित्य और कला की नई परिभाषाएँ गढ़ीं। भारतीय नवजागरण पश्चिम के पुनर्जागरण से किस प्रकार भिन्न है तथा भारत के संदर्भ में जागरण की एक सतत प्रकिया को देखने का प्रयास इस पत्र में किया गया है। यह पत्र सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध साहित्य की भूमिका और कला में 'यथार्थवाद' एवं 'अध्यात्मवाद' के मानवीय समन्वय का अन्वेषण करता है।

बीज शब्द : भारतीय नवजागरण, मानवतावाद, आधुनिकता, सामाजिक सुधार, साहित्य, कला, पुनर्जागरण, तर्कवाद, औपनिवेशिक भारत, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण।

प्रस्तावना

भारतीय नवजागरण का उदय 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में हुआ, जिसने भारत के धर्म, दर्शन, कला और विज्ञान तथा साहित्य के क्षेत्र में नए अन्वेषण का मार्ग प्रशस्त किया। यह वह कालखंड था जब पश्चिम के तर्कवाद और पूर्व के अध्यात्मवाद का मिलन हो रहा था। सामान्यतः सामंतवाद और धार्मिक सत्ता के कठोर नियंत्रण से मुक्ति, व्यक्तिवाद, भौतिकतावाद, वैज्ञानिक जिज्ञासा, सचेत रूप से समाज सुधार के प्रयास तथा सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक चेतना आदि भारतीय नवजागरण की सामान्य विशेषताएँ हैं और कहा जा सकता है कि मानवतावाद इस आंदोलन की धुरी थी। मानवतावाद का अर्थ है—मनुष्य की गरिमा, स्वतंत्रता और उसके अधिकारों को सर्वोपरि मानना। मानवतावाद से संबंधित विचारक अपने चिंतन में मानव तथा समस्त

प्राणियों को केंद्र में रखते हैं वे इहलोक तथा परलोक में विश्वास रखते हुए दया , करुणा तथा सद्भाव को अपने चिंतन के केंद्र में रखते हैं।

मध्यकालीन साहित्य जहाँ ईश्वरीय लीलाओं और दरबारों तक सीमित था, वहीं नवजागरण ने साहित्य को 'देवताओं' के सिंहासन से उतारकर 'मनुष्य' की झोपड़ी तक पहुँचाया। कलाओं में भी अब केवल पौराणिक आख्यान नहीं, बल्कि सामान्य मनुष्य के संघर्ष और उसकी पीड़ा को स्थान मिलने लगा। साहित्य और कला का यह लोकतंत्रीयकरण कहीं ना कहीं उन मानवतावादी विचारों की देन ही था जिनसे अंततः प्रभावित होकर भारतीय नवजागरण स्फूर्त हुआ। भारत के संदर्भ में नवजागरण तथा मानवतावादी विचार कोई आधुनिक घटना नहीं हैं बल्कि छठी शताब्दी ई०पू० में महात्मा बुद्ध से लेकर मध्यकाल में भक्ति का उदय तथा आधुनिक काल में राजा राममोहन राय, दयानंद सरस्वती, विवेकानंद और भारतेंदु हरिश्चंद्र आदि इस परिवर्तन के अग्रदूत रहें है। डॉ अमरनाथ ने स्पष्ट समझाया है –' यहाँ पर पहला नवजागरण गौतम बुद्ध के आविर्भाव के साथ आया। बुद्ध ने पुरानी जड़वादी परंपराओं को तोड़ कर मनुष्य मनुष्य के बीच भेद को मिटाया…….., दूसरा नवजागरण भक्ति काल में दिखायी देता है उत्तर भारत में देशी भाषाओं के विकास का यही समय है, इस आंदोलन का मूलाधार भी धर्म ही है……., और तीसरा नवजागरण 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आया। (अमरनाथ, 2012)

भारतीय मानवतावाद पश्चिमी 'ह्यूमनिज्म' की कार्बन कॉपी नहीं था। जहाँ पश्चिमी मानवतावाद धर्मनिरपेक्षता पर अधिक बल देता था, वहीं भारतीय मानवतावाद 'आत्मवत सर्वभूतेषु' (सभी को अपने समान देखना) के वेदान्तिक दर्शन से प्रेरित था। पश्चिम में जहाँ एक ओर धर्म से आशय मनुष्य का ईश्वर से जुड़ने का माध्यम तथा पद्धतियाँ है वहीं भारत के संदर्भ में धर्म कर्तव्य से संबंधित है इसी कारण भारतीय मानवतावाद धर्म से निरपेक्ष नहीं है, भारतीय नवजागरण का मूल स्वर 'मनुष्य' की मुक्ति का स्वर था। यह केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की छटपटाहट नहीं थी, बल्कि आत्म-साक्षात्कार और अपनी सांस्कृतिक जड़ों को आधुनिकता की कसौटी पर कसने की प्रक्रिया थी।

साहित्य में मानवतावाद: देवताओं से धूल तक का सफर

नवजागरण से पूर्व भारतीय साहित्य मुख्य रूप से 'पारलौकिक' था। रीतिकाल के कवि नायिका के नख-शिख वर्णन में व्यस्त थे, तो भक्तिकाल के कवि समर्पण में। जैसे बिहारी रत्नाकर में कहते हैं-

'कहत, नटत, रीझत, खीजत, मिलत, ख़िलत, लजियात।

भरे भौन में करत हैं नैनन हीं सू बात'।(रत्नाकर, 2010)

नवजागरण ने साहित्य के केंद्र में 'लौकिक मनुष्य' को स्थापित किया। गोदान के संदर्भ में कहा जाता है कि होरी ने नायकत्व के नवीन मानदंडों को गढ़ा और एक सभ्य और उच्च कुल के नायक से हिन्दी में सामान्य नायक की स्थापना हुई।

होरी के हालात के संदर्भ में गोदान में लिखतें हैं 'होरी के गहरे साँवले, पिचके हुए चेहरे पर मुस्कुराहट की मृदुता छलक पड़ी।'(प्रेमचंद, 1936)

भारतेन्दु हरिश्चंद्र को हिंदी साहित्य में आधुनिकता का द्वार कहा जाता है। उन्होंने भारतीय नवजागरण और मानवतावाद को अपनी लेखनी के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया। उनके साहित्य में केवल राष्ट्रीय चेतना ही नहीं, बल्कि मनुष्य की गरिमा, सामाजिक सुधार और अंधविश्वासों के उन्मूलन का स्वर भी प्रमुखता से मिलता है। भारतेन्दु का मानवतावाद संकीर्ण नहीं था; उन्होंने धर्म और जाति की सीमाओं से ऊपर उठकर मनुष्य के दुख-दर्द को समझा। उनके लिए नवजागरण का अर्थ केवल अतीत का गौरव गान नहीं, बल्कि वर्तमान की समस्याओं—जैसे दरिद्रता, गुलामी और भेदभाव—के विरुद्ध खड़ा होना था।

भारतेन्दु के नवजागरण और मानवतावादी दृष्टिकोण का एक जीवंत उदाहरण उनके द्वारा रचित भारत-दुर्दशा की प्रसिद्ध पंक्तियों में देखा जा सकता है:

"रोवहू सबै मिलि आवहु भारत भाई।
हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥" (हरिश्चंद्र,1880)

इस पंक्ति में भारतेन्दु 'सबै' (सबको) मिलकर आने का आह्वान करते हैं। यहाँ उनका मानवतावाद झलकता है क्योंकि वे किसी एक वर्ग की नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव समुदाय और भारतीय समाज की सामूहिक पीड़ा की बात कर रहे हैं। उनके नाटक 'भारत दुर्दशा' में वे न केवल राजनीतिक परतंत्रता पर प्रहार करते हैं, बल्कि आलस्य, मदिरा और आपसी फूट जैसे मानवीय दोषों को भी चित्रित करते हैं, ताकि समाज में नई चेतना जाग्रत हो सके। उनका मानना था कि 'निज भाषा' और 'निज धर्म' की उन्नति ही मनुष्य की उन्नति का आधार है, जो अंततः व्यापक मानवतावाद की ओर ले जाती है।

मैथिलीशरण गुप्त और 'साकेत' का नव-मानवतावाद:

गुप्त जी ने उपेक्षित पात्रों को गरिमा दी, गुप्त जी ने उर्मिला, यशोधरा आदि पत्रों के माध्यम से साहित्य में लोक तत्व को स्थापित करने का प्रयास किया जो की नब्वजग्रन की एक प्रमुख विशेषता है। 'साकेत' में उर्मिला के विरह को केवल व्यक्तिगत दुख नहीं, बल्कि एक तड़पते हुए मानवीय हृदय की ऊँचाई के रूप में दिखाया। उन्होंने 'भारत भारती' में लिखा:

"मानस भवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती,
भगवान! भारतवर्ष में गूंजे हमारी भारती।"(गुप्त, 1912)

यह 'आरती' अब किसी मूर्ति की नहीं, बल्कि देश और उसमें रहने वाले मनुष्यों की थी, उस सामान्य मनुष्य की जो अभी तक साहित्य के प्रभाव से अछूता रहा था। यह दिखाता है कि कैसे भारतीय नवजागरण और मानवतावादी विचारों ने एक नवीन सोच को जन्म दिया जिससे की एक बौद्धिक क्रांति ने जन्म लिया और साहित्य का परिमार्जन और लोकतंत्रीकरण हुआ।

रवींद्रनाथ टैगोर: वैश्विक मानवतावाद का स्वर

टैगोर के लिए मानवतावाद सीमाओं में बँधा नहीं था। उन्होंने 'साधना' और 'गीतांजलि' में स्पष्ट किया कि ईश्वर मंदिर में नहीं, बल्कि उस किसान के पास है जो धूप में पसीना बहा रहा है। उनकी गीतांजलि की प्रसिद्ध पंक्ति है:

"भजन पूजन साधन आराधन समस्त थाको पड़े,
रूद्ध द्वारे देवालयेर कोणे केनो आछिस ओरे?"(टैगोर 1910)

अर्थात् भजन-पूजन छोड़ो, तुम बंद दरवाजे वाले देवालय के कोने में क्यों बैठे हो? ईश्वर वहाँ है जहाँ किसान खेत जोत रहा है और मजदूर पत्थर तोड़ रहा है। इस स्तर की विचार परंपरा अंततः उस समय की माँग थी और परिणामस्वरूप ऐसे विचारो का जन्म हुआ और साहित्य की वास्तविक परिणिति जो कि समाज के व्यापक हित की भावना से जन्म लेती है और साकार होती है।

प्रेमचंद और यथार्थवादी मानवतावाद

प्रेमचंद ने साहित्य के 'सौंदर्यशास्त्र' को बदल दिया। उन्होंने अपने निबंध ‘साहित्य का उद्देश्य’ में कहा कि "हसीनाओं के ओठ और गालों का वर्णन करना कविता नहीं है।"(प्रेमचंद, 1936) उनके लिए मानवतावाद का अर्थ था दलितों, किसानों और स्त्रियों की गरिमा। 'गोदान' का होरी उस भारतीय मनुष्य का प्रतीक है जो

अमानवीय व्यवस्था के बीच अपनी मनुष्यता बचाने के लिए संघर्ष करता है। प्रेमचंद ने साहित्य के केन्द्र में राजाओं और सामंतों के स्थान पर उपेक्षित किसानो, मजदूरों और दलितों को प्रतिष्ठित किया जैसा कि हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास' पुस्तक में स्पष्ट कहा है कि –

'प्रेमचंद के पात्रों ने पहली बार सिद्ध किया कि साधारण किसान और मजदूर भी उच्च मानवीय आदर्शों के वाहक हो सकते हैं। उन्होंने साहित्य का सही अर्थों में जनतंत्रीकरण किया'। (द्विवेदी, 2009)

कला और चित्रकला: दैवीयता का मानवीकरण

भारतीय कला में नवजागरण का प्रभाव 'दृष्टि के परिवर्तन' के रूप में आया। कला अब केवल महलों की सजावट नहीं थी, वह राष्ट्र की आत्मा का दर्पण बन गई।

राजा रवि वर्मा: यथार्थवादी दृष्टि

रवि वर्मा ने पहली बार भारतीय देवी-देवताओं को तैल चित्रों के माध्यम से जन-सामान्य के बीच पहुँचाया। उन्होंने सरस्वती और लक्ष्मी को उन चेहरों के साथ चित्रित किया जिन्हें आम भारतीय पहचान सकता था।(राय,1939) यह धर्म का 'लोकतंत्रीकरण' था। रवि वर्मा ने यूरोपीय तकनीकी का प्रयोग किया, लेकिन उनके विषयों में मानवतावाद झलकता है। उन्होंने पौराणिक नायिकाओं को हाड़ मांस के इंसानों की तरह चित्रित किया, जिनमें प्रेम, विरह और लज्जा जैसी मानवीय भावनाएं स्पष्ट दिखती हैं।

बंगाल स्कूल और नंदलाल बोस

अवनींद्रनाथ टैगोर ने 'भारत माता' का चित्र बनाया, लेकिन वह कोई शस्त्रधारी देवी नहीं थीं, बल्कि एक सात्विक, अन्न-वस्त्र और शिक्षा देने वाली माँ थी। (टैगोर,1921) यह चित्र देश के प्रति मानवीय संवेदना जगाने का सांस्कृतिक उपकरण बना। यह पेंटिंग नवजागरण का सबसे सशक्त उदाहरण है साथ ही यह मानवीय गुणों और राष्ट्रीयता का संगम है। नंदलाल बोस ने संविधान की मूल प्रति को अलंकृत करते समय बुद्ध, महावीर और गांधी के चित्रों को प्राथमिकता दी, जो शांति और अहिंसा के मानवीय मूल्यों के प्रतीक थे।

भाषायी और गद्य क्रांति: तर्क का उदय

मानवतावाद बिना तर्क के संभव नहीं है। नवजागरण ने 'गद्य' को जन्म दिया। भारतीय नवजागरण और मानवतावाद ने हिंदी भाषा और गद्य को मध्यकालीन दरबारीपन और चमत्कारिता से मुक्त कर उसे आधुनिकता, तर्क और लोक कल्याण से जोड़ दिया। इस भाषायी क्रांति के मूल में यह विचार था कि भाषा केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का हथियार है। महावीरप्रसाद द्विवेदी ने व्याकरणिक परिष्कार और 'खड़ी बोली' को गद्य और पद्य दोनों की मुख्य धारा बनाकर भाषायी अनुशासन स्थापित किया, जिससे गद्य में तार्किकता और स्पष्टता आई। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'कवि वचन सुधा' और 'हरिश्चंद्र मैगजीन' के माध्यम से पत्रकारिता और निबंध को हथियार बनाया।

भारतेंदु ग्रंथावली में भाषायी आह्वान

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत ना हिय को सूल"

(हरिश्चंद्र, बृजरत्न दास द्वारा संपादित, 1934)

यह भाषा और गद्य की क्रांति ही थी, जिसने आगे चलकर प्रेमचंद और रेणु जैसे कथाकारों के लिए वह आधार तैयार किया, जहाँ मनुष्य ही साहित्य का सर्वोच्च लक्ष्य बन गया। इस सम्बंध में रामविलास शर्मा ने कहा है –

‘भारतीय नवजागरण से प्रेरित कवि और लेखक गद्य के लिए गद्य ना लीक रहे थे, ना भाषा सुधार के लिए भाषा सुधार रहे थे भाषा उनके लिए साधन थी साध्य नहीं, वे हिंदी गद्य के रूप में सामाजिक उत्थान का प्रबल शस्त्र गढ़ रहे थे जो बिखरे हुए हिंदी भाषियों को एक करे’।(शर्मा, 2010)

सामाजिक-सांस्कृतिक पुनरुत्थान: स्त्री और वंचित विमर्श

भारतीय नवजागरण के दौर में सामाजिक और सांस्कृतिक पुनरुत्थान ने ‘स्त्री’ और ‘वंचित समुदाय’ को इतिहास के हाशिए से निकाल कर विमर्श के केंद्र में ला खड़ा कर दिया। ताराबाई शिंदे ने स्त्री पुरुष तुलना में कहा ‘स्त्री पुरुष की तुलना में यह स्पष्ट है कि स्त्रियों को दवा कर रखना पुरुषों की अपनी सत्ता बनाये रखने की एक चाल है’।(शिंदे,1882)

नवजागरणकालीन साहित्य ने पहली बार स्त्री को 'भोग्या' के स्थान पर 'मनुष्य' माना। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़ती महिला को देखकर जो कविता लिखी, वह मानवतावाद का शिखर है। उसमें कोई देवी नहीं, एक साधारण श्रमिक महिला की गरिमा है। राजा राममोहन राय ने तर्कवाद और मानवतावाद पर जोर दिया। इनका मुख्य उद्देश्य हिंदू धर्म को अंधविश्वासों से मुक्त करना था। उनके निरंतर प्रयासों और तर्कों के कारण ही 1829 में सती प्रथा पर कानूनी रोक लगी। उन्होंने एक ईश्वर की उपासना और मूर्तिपूजा के विरोध का विचार दिया। उन्होंने पाश्चात्य शिक्षा और विज्ञान का समर्थन किया ताकि भारतीय समाज रूढ़िवादिता से बाहर निकल सके। विद्यासागर का दृष्टिकोण अत्यंत व्यावहारिक था। उन्होंने प्राचीन शास्त्रों का सहारा लेकर ही समाज सुधार की वकालत की। उन्होंने विधवाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए कड़ा संघर्ष किया, जिसके परिणामस्वरूप 1856 में 'विधवा पुनर्विवाह अधिनियम' पारित हुआ। उन्होंने स्वयं अपने बेटे का विवाह एक विधवा से कर समाज के सामने मिसाल पेश की। उन्होंने बंगाल में 30 से अधिक बालिका विद्यालयों की स्थापना की। उन्होंने समाज में प्रचलित बहुविवाह प्रथा के विरुद्ध भी आवाज उठाई।

स्वामी दयानंद ने 'वेदों की ओर लौटो' का नारा दिया। उनकी विचारधारा तर्क और नैतिकता पर आधारित थी। आर्य समाज के माध्यम से उन्होंने छुआछूत, बाल विवाह और जातिवाद जैसी कुरीतियों का कड़ा विरोध किया। सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक में उन्होंने अपने 'वाद' (सिद्धांतों) को स्पष्ट किया और धर्म के नाम पर पाखंड को चुनौती दी। उन्होंने पहली बार 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया और हिंदी (आर्य भाषा) को राष्ट्र की एकता के लिए आवश्यक माना। जो लोग किसी कारणवश दूसरे धर्म में चले गए थे, उन्हें वापस हिंदू धर्म में आने का अवसर दिया।

संगीत और रंगमंच पर प्रभाव

सांस्कृतिक रूप से, रंगमंच अब केवल 'पारसी थिएटर' की तड़क-भड़क नहीं रहा। इप्टा जैसे आंदोलनों की जड़ें इसी नवजागरण में थीं, जहाँ आम आदमी के दुख-दर्द को कला का मुख्य स्वर बनाया गया। शास्त्रीय संगीत जो केवल दरबारों की शोभा था, विष्णु दिगंबर पलुस्कर और भातखंडे के प्रयासों से समाज के मध्यम वर्ग तक पहुँचा। भातखंडे ने पूरे भारत की यात्रा कर बिखरे हुए रागों को लिपिबद्ध किया और ‘लक्ष्य संगीत’ के माध्यम से उसे आम लोगो के सीखने योग्य बनाया। पलुस्कर जी ने कहा कि ‘संगीत ईश्वर की आराधना है, और इसका अधिकार हर उस व्यक्ति को है जो इसे सीखना चाहता है…’(पलुस्कर, पटवर्धन द्वारा उद्धृत, 1960)

उल्लेखनीय है कि रंगमंच पर अब पौराणिक नायकों की जगह सामाजिक समस्याओं ने ले लीं। दीनबंधु मित्र का नाटक मानवतावाद का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसने नील की खेती करने वाले किसानो के शोषण को पहली बार मंच पर लाकर ब्रिटिश हुकूमत को हिला दिया था। नील दर्पण की भूमिका में लिखा ‘रंगमच केवल

मनोरंजन की जगह नहीं है, यह एक स्कूल है जहाँ समाज अपनी बुराइयों को देख सकता है’(मित्र,1861) इप्टा का उदय इसी चेतना की परिणिति था, जिसने ‘नवान्न’ जैसे नाटकों के ज़रिए बंगाल के अकाल और मानवीय त्रासदी को जनता के बीच रखा।

निष्कर्ष

संपूर्ण विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय नवजागरण ने कला और साहित्य के प्रतिमानों को मौलिक रूप से बदल दिया। इसने साहित्य को 'देवताओं के सिंहासन' से उतारकर 'मनुष्य की झोपड़ी' तक पहुँचाने का जो महती कार्य किया, उसका प्रभाव आज भी भारतीय चेतना पर अंकित है। नवजागरण कालीन साहित्य ने कल्पनालोक से हटकर यथार्थ की ठोस जमीन पर कदम रखा। लेखकों ने यह समझ लिया था कि कला केवल विलासिता का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का हथियार है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने नाटकों (जैसे 'भारत दुर्दशा') के माध्यम से देश की जर्जर स्थिति पर विलाप किया और जनता को जगाया। वहीं, प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं (जैसे 'गोदान' और 'कफन') में पहली बार किसान और दलित वर्ग को नायक के रूप में स्थापित कर मानवतावादी दृष्टि का परिचय दिया। मध्यकाल में जहाँ स्त्री केवल सौंदर्य का प्रतीक थी, नवजागरण ने उसे एक स्वतंत्र व्यक्तित्व और अधिकारों वाली इकाई के रूप में देखा। समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्ति की पीड़ा कला का मुख्य विषय बनी। मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' और 'यशोधरा' जैसी कृतियों के माध्यम से इतिहास की उपेक्षित नारियों के त्याग और संघर्ष को स्वर दिया। यह नवजागरण की ही देन थी कि साहित्य में 'उपेक्षितों' के प्रति संवेदना जागृत हुई। नवजागरण ने अंधविश्वास और रूढ़ियों का विरोध किया, लेकिन अपनी सांस्कृतिक जड़ों को नहीं छोड़ा। विचारकों ने अध्यात्म को 'लोक-सेवा' से जोड़कर मानवतावाद की नई व्याख्या की। स्वामी विवेकानंद का यह आह्वान कि "दरिद्र नारायण की सेवा ही सबसे बड़ी पूजा है", साहित्य में 'जनसेवा' के रूप में प्रतिध्वनित हुआ। रवींद्रनाथ टैगोर ने 'गीतांजलि' में स्पष्ट किया कि ईश्वर मंदिर के बंद दरवाजों में नहीं, बल्कि धूल-धूसरित मजदूरों और किसानों के साथ है। चित्रकला और अन्य विधाओं ने भी पश्चिमी तकनीक और भारतीय संवेदना का मेल किया, जिससे 'भारतीयता' को वैश्विक पहचान मिली। राजा रवि वर्मा ने जहाँ पौराणिक पात्रों को मानवीय रूप देकर जन-सुलभ बनाया, वहीं नंदलाल बोस और अवनिंद्रनाथ टैगोर ने भारतीय कला शैली को पुनर्जीवित कर उसे राष्ट्रीय पहचान से जोड़ा। भारतीय नवजागरण ने कला और साहित्य को वह 'मानवतावादी' धरातल प्रदान किया, जिस पर आधुनिक भारतीय समाज की नींव टिकी है। इसने तर्क, स्वतंत्रता और समानता के मूल्यों को साहित्य की आत्मा बनाया। आज का भारतीय साहित्य और कला यदि वैश्विक मंच पर अपनी अलग पहचान रखते हैं, तो उसका श्रेय इसी नवजागरण को जाता है जिसने हमें स्वयं को पहचानने और मनुष्यता को सर्वोपरि मानने की प्रेरणा दी।

संदर्भ सूची

1. डॉ अमरनाथ (2012). हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन पृष्ठ संख्या -398
2. रत्नाकर, जगन्नाथ दास (2010). बिहारी रत्नाकर. वाराणसी: रामकृष्ण प्रकाशन. पृष्ठ संख्या -11
3. प्रेमचंद (1936). गोदान. दिल्ली: कला मंदिर प्रकाशन. पृष्ठ संख्या -02।
4. हरिश्चंद्र, भारतेंदु (1880). भारत दुर्दशा. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा. पृष्ठ संख्या -03।
5. गुप्त, मैथिलीशरण (1912). भारत भारती . झाँसी: साहित्य सदन. पृष्ठ संख्या -160।

6. टैगोर अवनींद्रनाथ (1921). गीतांजलि. कोलकाता: विश्व भारती. पृष्ठ संख्या -17।
7. प्रेमचंद (1936). साहित्य का उद्देश्य. प्रयागराज: हँस प्रकाशन. पृष्ठ संख्या -08।
8. द्विवेदी, हजारी प्रसाद (2009). हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास. दिल्ली: राजकमल. पृष्ठ संख्या -285 ।
9. राय, कृष्णदास (1939). भारतीय चित्रकला. प्रयाग: भारती भंडार. पृष्ठ संख्या -110।
10. टैगोर अवनींद्रनाथ (1921). भारत शिल्पेन षड़ंग. कोलकाता: इंडियन सोसाइटीऑफ़ ओरिएंटल आर्ट्स. पृष्ठ संख्या -43।
11. दास, बृजरत्न संपादक (1934). भारतेंदु ग्रंथावली. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा. पृष्ठ संख्या -739।
12. शर्मा, रामविलास (2010). आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना . नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृष्ठ संख्या -35
13. शिंदे, ताराबाई (1882). स्त्री पुरुष तुलना. महाराष्ट्र: स्त्री मुक्ति संगठन. पृष्ठ संख्या -04।
14. पटवर्धन, विश्वनाथ (1960). माझे गुरुदेव: पंडित विष्णु दिगम्बर. सांगली: गंदर्भ महाविद्यालय प्रकाशन.पृष्ठ संख्या -35
15. मित्र, दीनबंधु (1861). नील दर्पण. कलकत्ता: सी० एच० मैन्युअल. पृष्ठ संख्या -03।

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

डॉ स्वाति कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : +91-9650722208
drswatikumarihindi7@gmail.com

डॉ. शालेहा प्रवीन
असिस्टेंट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : 8750619476
shaleha02praveen@gmail.com

श्रीमती मनोज चौधरी
असिस्टेंट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : 9971471000
manojmacdu@gmail.com

डॉ. सदानन्द
असिस्टेंट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : 9971994801
sadanandpatel15207@gamil.com

निलेश कुमार पाठक, सौरभ कुमार मिश्रा
भौतिक विज्ञान विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : 9953401294
nileshpiitd@gmail.com

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

डॉ. जितेंद्र कुमार भगत
असिस्टेंट प्रोफेसर, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : 9312246974
macjiten@gmail.com

प्रो. (डॉ.) तेज नारायण ओझा
प्रोफेसर, महाराजा महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096
मोबाइल नंबर : +91-8800366664
tnojha@mac.du.ac.in

डॉ रश्मि ओझा
मोबाइल नंबर : 9999289551
rashmipojha@gmail.com

डॉ. मनोरमा गौतम
हिन्दी विभाग, गार्गी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 9910709651

आशुतोष सिंह
सहायक प्राध्यापक, केशव महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 7905200260
ashu.verve@gmail.com

राजीव कुमार राय
सहायक प्राध्यापक, कालिंदी महाविद्यालय,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 9205520458
rajeevrai.85@gmail.com

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

डॉ. रौशन कुमार
सहायक प्राध्यापक, आत्मा राम सनातन धर्म महाविद्यालय,दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 9899005277
roushan.sharma35@gmail.com

डॉ. राजेश कुमार पांडेय
एसोसिएट प्रोफेसर, दयाल सिंह कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 8130127606
rajeshkrpandey.hindi@dsc.du.ac.in

गौरव
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 9990026592
gaurav2381998@gmail.com

गोपाल जी
शोधार्थी हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मोबाइल नंबर : 7905269730
gopalji.yadav789@gmail.com

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के शोध पत्रिका हेतु

Call for Papers (शोध-पत्र आमंत्रण)

शोध पत्रिका

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)

प्रस्तावना

महाराजा अग्रसेन महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय की शोध पत्रिका

" ज्ञान संचय "

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका) (अर्धवार्षिक शोध पत्रिका) के आगामी अंक के लिए हिंदी साहित्य, भाषा, संस्कृति, इतिहास, समाज, शिक्षा एवं समकालीन विमर्श से संबंधित मौलिक एवं अप्रकाशित शोध-पत्र आमंत्रित किए जाते हैं।

संभावित विषय (Themes)

भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परम्परा
हिंदी साहित्य के विविध आयाम
आधुनिक शिक्षा और समाज
राजनीतिविज्ञान, इतिहास और समाज
भाषा विज्ञान, मनोविज्ञान, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी,
मीडिया अध्ययन, सनातन अध्ययन, समकालीन विमर्श
भाषा एवं अनुवाद अध्ययन, वाणिज्य एवं
अन्य संबंधित विषय।

शोध-पत्र भेजने के दिशा-निर्देश:

शोध-पत्र मौलिक एवं अप्रकाशित होना चाहिए।

शोध-पत्र प्रारूप : सार, बीज शब्द, प्रस्तावना एवं शोध विस्तार, निष्कर्ष, सूचना स्रोत।

शोध-पत्र की लंबाई लगभग 3000 – 5000 शब्द हो।

फॉन्ट – Unicode (Mangal / Kruti Dev)

फॉन्ट आकार – 18 (शीर्षक), 12 (मुख्य पाठ)

संदर्भ शैली – MLA / APA / Chicago में से कोई एक।

शोध-पत्र के साथ लेखक का नाम, पद, संस्थान, ई-मेल और मोबाइल नंबर अवश्य दें।

शोध-पत्र MS Word / PDF फॉर्मेट में भेजें।

महत्वपूर्ण तिथियाँ:

शोध-पत्र भेजने की अंतिम तिथि –.......... 2026

स्वीकृति की सूचना – ई मेल द्वारा

पत्रिका प्रकाशन –

जनवरी जून 2026

जुलाई दिसम्बर 2026

शोध-पत्र भेजने का ई-मेल

ई-मेल hspmacdu@mac.du.ac.in

hindishodhpatrika@mac.du.ac.in

gyansanchay@mac.du.ac.in

संपर्क:

प्रबंध संपादक एवं संरक्षक

प्रो संजीव कुमार तिवारी

संपादकद्वय

प्रो ऋतु कोहली

प्रो टी एन ओझा

संपादक मंडल

प्रो. शिवकुमार, प्रो. शंकर कुमार, श्रीमती मनोज चौधरी, प्रो. चंद्र शेखर, प्रो. राजहंस कुमार, प्रो. आभा शर्मा प्रो. सुबोध कुमार, श्रीमती पुनीता अग्रवाल,डॉ. आलोक पुराणिक

संस्थान

महाराजा अग्रसेन कालेज

दिल्ली विश्वविद्यालय, वसुंधरा इन्क्लेव, दिल्ली-110096

नोट: संपादक मंडल को प्राप्त शोध-पत्रों को संपादित या अस्वीकार करने का अधिकार सुरक्षित होगा।

पीयर रिव्यूड रेफर्ड मल्टी डिसिप्लिनरी जर्नल

ज्ञान संचय

(विशेषज्ञ सहकर्मी द्वारा पूर्व-समीक्षित शोध पत्रिका)
(अर्द्धवार्षिकी शोध पत्रिका)

अंक -1 खंड -1 पौष-आषाढ़, 2083, जनवरी-जून 2026

www.gsmacdu.in

शुल्क : प्रति अंक 1100/-

MAHARAJA AGRASEN COLLEGE

Maharaja Agrasen College

University of Delhi

कर्म मानवः प्रतिपद्यते

Accredited with NAAC "A" Grade

संपादकद्वय

प्रो ऋतु कोहली

प्रो टी एन ओझा

www.gsmacdu.in

प्रबंध संपादक एवं संरक्षक

प्रो संजीव कुमार तिवारी